Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

0152mN
G0.2

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

0152 mN
G0.2
8377
Chowdhary, Ranka
Prasad.
Saroj.

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

0152 mN GO.2 8377
Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सरोज

पुष्प — २ दल — १

SHRI JAGADGURU VISHWARADHYA JNANAMANDIR
(LIBRARY)
JANGAMAWADIMATH, VARANASI

Please return this volume on or before the date last stamped
Overdue volume will be charged 1/- per day.

वार्षिक मूल्य ४) ६ माही मूल्य २)
स्वत्वाधिकारी— श्रीकनकाप्रसाद चौधरी
विदेशका मूल्य
इस संख्याका मूल्य

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सुगन्धि साम्राज्यका अद्भुत चमत्कार !

ओटो भूतनाथ

भूतनाथ ओटोकी शीशी सुन्दर और निराली है,
दिल दिमाग आँखोंके हितमें यह सुगन्ध हरियाली है।
एक बुन्दसे कर रूमाल तर आसपास गुलजार करे,
नहीं छूटता है दम इसका इत्र हजारों बार करे।

दर असल इसकी भीनी भीनी मधुर सुगन्ध, इत्र प्रेमियोंके दिलमें अजीब रंगत दिखा देती है, बार बार सैकड़ों और लाखों मुंहसे यही एक बात सुनाई देतो है कि

खुशबू हो तो ऐसी हो

मूल्य बड़ी शीशी २) मझोली शीशी १) छोटी शीशी ॥) नमूने की शीशी –)

पता—किशोरीलाल चौधरी,
भूतनाथ कार्यालय, १५१, मछुआबाजार स्ट्रीट, कलकत्ता।

0152 ...
G0.2

SRI JAGADGURU VISHWARADHYA
JNANA SIMHASAN JNANAMANDAL
LIBRARY
Jangamwadi Math, Varanasi
ACC No. 8377

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection. Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

स्वर्गवासी

बाबू किशोरीलाल चौधरीकी

द्वितीय वार्षिक स्मृति

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

विषय-सूची ।

विषय	लेखक	पृष्ठ
१ दुख-दर्द (कविता)	श्री पं० अयोध्यासिंह उपाध्याय "हरि औध"	१ क
२ असावधाना (कविता)	श्री मैथिली शरण गुप्त	१ ख
३ पैतृक सम्पत्तिमें पुत्रीका भाग	श्री पं० शकल नरायण शर्मा	२
४ अभिलाषा (कविता)	श्री कृष्ण विहारी मिश्र	३
५ मानस-मानसर (कविता)	श्रीमोहनलाल महता 'वियोगी'	३
६ समझकी भूल (गल्प)	श्रीपं० जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी	४
७ व्रत-भंग (गल्प)	श्री जयशंकर प्रसाद	५
८ अनुरोध (कविता)	श्री "प्रभात"	१०
९ गई है (कविता)	"चकोरी	१०
१० दिलदारा (नाटक)	श्री "उग्र"	११
११—हिन्दी-लिपि और सम्मेलन	श्रीजगमोहन "विकसित	१६
१२—निष्ठुर यह लेरे ! (कविता)	श्री चरणलाल 'फूल'	२४
१३—श्रीपुरमें प्राप्त महाराज जयराज देवकी मुद्रा	श्रीपं० लोचन प्रसाद पाण्डेय	२५
१४—मधुपके प्रति (कविता)	श्री सुमङ्गल प्रकाश	२६
१५—प्रतिभा और साहित्यिक बाजार	श्रीगुलाबराय एम० ए०	३०
१६—कामना (कविता)	श्री "अनूप"	३२
१७—आधुनिक खड़ी बोलीकी कविताकी प्रगति	श्री कृष्णदेव गौड़ एम० ए०	३३
१८—माया (कविता)	श्री अवन्तविहारी माथुर	५०
१९—जंजाल (गल्प)	श्री ऋषभ-चरण	५१
२०—अरेसकपंक (कविता)	श्री 'मिलिन्द'	६०
२१—हिन्दी शार्ट हैंड	श्री लाल बहादुर	६१
२२—किलोल (कविता	श्री सत्यव्रत शर्मा)	६४
२३—सदना (गल्प)	श्री मुक्त'	६५
२४—खादीकी प्रगति	श्री कन्हैयालाल	६६
२५—अनन्त वेकली (कविता)	श्री प्रभात'	७८
२६—हम पराधीन क्यों हैं ?	श्रीराजाराम पाण्डेय	७९
२७—पहिचान (गल्प)	श्री चन्द्रगुप्त विद्यालंकार	८२
२८—तू (कविता)	कविवर लाला भगवान दीन 'दीन"	८९
२९—लतखोरीलाल—	श्रीजी० पी० श्रीवास्तव	
३०—क्या हम सज्ञान प्राणी हैं ?	श्रीराधा मोहन गोकुलजी	१०५
३१—हिन्दी-वन्दना (कविता)	श्री अरविन्द	१०८
३२—ग्रामोफोन (गल्प)	श्री सुमंगल प्रकाश	१०९
३३—कवि और कविता	श्री रत्नचन्द्र दन्तपति बी० ए०	११६
३४—सन्ध्याके बाद (कविता)	श्री वाचस्पति पाठक	१२१
३५—आंसूकी बूंद (नाटक)	श्रीमती चन्द्रकुमारी मिश्र	१२२
३६ भारी-भूलें (कविता)	श्री 'रसिकेन्द्र"	१२५
३७ हिन्दी-साहित्यका भविष्य—	श्री शिवशंकर द्विवेदी	१२६
३८ हिन्दो हिन्दकी है जान (कविता)	श्री गंगाविष्णु पाण्डेय 'विष्णु'	१२७
३९ अन्तिम-मनुहार (कविता)	श्रीजगन्नाथ प्रसाद "मिलिन्द"	१२८
४० मेरी जीवन-नौका (कविता)	श्रीबांकेबिहारीलाल "कृष्ण" बी० ए०	१३०
४१ समस्यापूर्तिका सुयोग		१३२
४२ सरोज-सौरभ		१३३

चित्र-सूची

१	बाबू किशोरीलाल चौधरीकी द्वितीय वार्षिक स्मृति	रंगीन
२	मालयश्री	रंगीन
३	प्रार्थना	रंगीन
४	चिन्ता	रंगीन
५	वियोग-विधुरा	रंगीन
६	हमारा प्यारा चरखा	रंगीन
७	झूलन	रंगीन
८	वीर-पंचाल (काश्मीर के कुछ दृश्य	एकरंगा
९	न्यूमार्क बन्दर (अमेरिका)	एकरंगा
१०	अरबका एक दृश्य	एकरंगा
११	सूम-सम्राट	व्यङ्ग चित्र
१२	भूखी शेरनी	एकरंगा
१३	बालीगंजलेकका एक दृश्य	एकरंगा
१४	चूड़ी-वाला	व्यङ्गचित्र
१५	तरकारी-वाली	व्यङ्गचित्र

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

'सरोज'का नवीन वर्ष

'सरोज' के पहले वर्षकी बारह संख्यायें पूरी करनेके बाद, कई अनिवार्य कारणोंसे हमने निश्चय किया है कि आइन्देसे सरोजका नवीन वर्ष श्रावणसे ही आरम्भ हुआ करे। आशा है, सरोज-प्रेमी पाठक इसे स्वीकार करेंगे। वर्षके बीचसे जो लोग सरोजके ग्राहक हुए हैं, उनका हिसाब संख्याके अनुसार चलेगा। फाइल पूरी करनेकी इच्छा रखनेवाले सज्जनोंको चाहिये कि एक मासके भीतर पुरानी संख्यायें हमसे वी० पी० द्वारा मंगाले। अन्यथा हम फिर कोई पुरानी संख्या भेजनेको बाध्य न होंगे।

विशेषांकोंकी भरमार

'सरोज' का द्वितीय वार्षिक विशेषांक पाठकोंकी सेवामें अर्पित है। इस अंकमें छपनेके लिये कई नाटक-साहित्य सम्बन्धी सुन्दर लेख हमारे पास आये हैं, जिन्हें स्थानाभावके कारण हम इस अंकमें स्थान नहीं दे सके हैं। इसलिये हमने सरोज़की दूसरे वर्षकी दूसरी संख्या एक छोटेसे—

नाटकांक

के रूपमें निकालनेका विचार कर लिया है। कार्यारम्भ हो गया है। पन्द्रह-बीस रोज़में अंक तैयार हो जायेगा। इसे सुन्दर और आकर्षक बनानेकी यथासाध्य चेष्टा की गई है। इसमें सभी लेख नाटक साहित्य सम्बन्धी होंगे। इसके अलावे, कई सुन्दर प्रहसन, इस क्षेत्रमें कार्य करनेवाले महानुभावों की जीवनियां, चित्र तथा अन्यान्य नाटकोपयोगी सामग्री होगी। सुन्दर रङ्गीन चित्रोंका भी प्रबन्ध किया गया है। यह सब कुछ होने पर भी इस नाटकांका मूल्य केवल छः आने होंगे और सरोजके स्थायी ग्राहकोंको मुफ्त दिया जायेगा। इसके आलावा आगामी विजया-दशमीके शुभ अवसर पर सरोजका एक सर्वाङ्ग सुन्दर।

कवि-अंक

निकालनेका भी आयोजन किया है। हम दावेके साथ कह सकते है कि यह कवि-अंक हिन्दीकी एक अपूर्व सामग्री होगा। इसमें हिन्दीके प्रायः सभी अच्छे और जीवित कवियोंके चित्र, उनका संक्षिप्त परिचय और उनकी चुनी हुई रचनाओंका संक्षिप्त संग्रह होगा। हमें यह सूचित करते हुए अत्यन्त हर्ष होता है इस कवि-अंकका सम्पादन भार हिन्दीके विख्यात कवि

श्रीमान पं० गया प्रसाद शुक्ल 'सनेही'

जीने इस कवि अङ्कका सम्पादनभार लेना स्वीकार किया है। फलतः इसीसे आप समझ सकते हैं कि इस कैसा होगा। इस सम्बन्धकी अन्यान्य सूचनायें सरोजके आगामी नाटकांकमें पढ़िये।

व्यवस्थापक
"सरोज"
१५१, मछुआबाजार स्ट्रीट, कलकत्ता।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

"भूतनाथ"

क्या है ?

अगर यह जानना चाहते हैं

तो

'सरोज'

के

दूसरे चित्रके पृष्ठ पर

देखें !

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मालश्री

पीयकी बात चलावै सहेली तिही सँग आपनो नेह किये है।
फूलो सरोरुह हाथ लिये इहि ख्यालहि रीझति आपु हिये है॥
श्रीफल-छाँह वियोग भरी इक कामिनी बैठि विचित्र लिये है।
या विधि भैरव रागकी रागिनी मालश्रि नाम आनन्द दिये है॥

(श्रीमान सेठ बालमुकुन्द डागाकी कृपासे)

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सरोज

"लहि सरोज-मकरन्दके, महा मधुर मधुसार ।
मुखर मत्त मानस-मधुप, गुञ्जत रहिक उदार ॥"

(किशोरीलाल गोस्वामी)

पुष्प—२ | श्रावण, संवत् १९८६ | दल—१

दुखदर्द !

(रचयिता—कवि-सम्राट् पण्डित अयोध्यासिंह उपाध्याय)

रही वह प्यारी रंगत नहीं,
जहां रस था अब रज है वहां ।
किस लिये भौंरे आवें पास,
बास अब फूलों में है कहां । १ ।

धूलमें कुँभलाया है पड़ा,
चाहती थीं वे जी से जिसे ।
साड़ियां बड़ी सजीली पैन्ह,
तितलियां नांच दिखायें किसे । २ ।

देखकर जिसकी प्यारी फबन,
नहीं आंखें सकती थीं घूम ।
नहीं मिलता है वह अब कहीं,
हवा किसका मुँह लेवे चूम । ३ ।

लिपटती थी जिससे जी खोल,
नहीं मिलता उसका वह माल ।
बेतरह बिखर बिखर सब ओर,
क्यों न फैले किरणोंका जाल । ४ ।

पिरोती मोती जिसके लिये,
मानती जी में जिसका पोस ।
पासकी आज न उसकी खोज,
क्यों न रोती दिखलाये ओस । ५ ।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

असावधाना

(रचयिता—कविवर श्री मैथिलीशरण गुप्त)

अब जागी—अरी अभागी !
अब जागी ? खोनेको सोई,
अब रोनेको जागी !

लिखती रही स्वप्नका लेखा,
आये प्रिय प्रत्यक्ष, न देखा;
निरख, रख गये हैं ध्वज-रेखा,—
वे पद-पद्म परागी ;
अब जागी—अरी अभागी !

सपने को तो सच्चा माना,
सच्चेको खो दिया, न जाना ।
अब तो दोनोंको पहचाना—
त्याग गये जब त्यागी ?
अब जागी—अरी अभागी !

झुक, धीरे कोमल कर फेरा,
जागा पुलक भाव भर तेरा !
बस, सुहागका हुआ सवेरा,
गूँजा राग विहागी ;
अब जागी—अरी अभागी !

किधर गये क्या जानें, अब वे,
मार्ग देख लौटें फिर जब वे ;
एक ठौर ठहरे हैं कब वे ?
सब उनके अनुरागी;
अब जागी—अरी अभागी ।

सुख-संस्मरण और भी दुख है,
कहता-सा सम्मुख वह मुख है—
"इसको सपनेका ही सुख है"
तब भी नींद न भागी !
अब जागी—अरी अभागी !

आई उषा, अहा ! क्या लाई ?
उनकी श्वास-सुरभि फिर आई !
तेरी व्यथा विश्व में छाई,
वही विश्व के भागी ।
अब जागी—अरी अभागी !

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पैतृक सम्पत्तिमें पुत्रीका भाग

(लेखक—पण्डित सकलनारायण शर्मा काव्य-व्याकरण-सांख्य-तीर्थ)

हिन्दू कहते हैं कि हिन्दू शास्त्रोंने पैतृक सम्पत्तिमें कन्याको कुछ भाग नहीं दिलवाया। यह बड़े अन्यायकी बात है। पर यह बात सुननेमें जैसी सच जान पड़ती है, वैसी विचार करने पर नहीं। कन्याके विवाहमें हिन्दू जाति अपना सर्वस्व लुटा देती है और कन्याको दहेज देना बड़ा पुण्य समझती है। कन्याको धनवान श्वसुर कुल मिले, इसके लिये वह घर द्वार तक बेंच कर तिलक देती है। मनुजीने लिखा है कि यदि कई भाई आपसमें धनका बटवारा करते हों और बहनकी शादी बाकी हो तो सब भाई अपने अपने हिस्सेसे चौथाई भाग अपनी बहनको दें। वह विवाहमें व्यय किया जाय। क्या यह उसका हिस्सा नहीं हुआ है—

"स्वेभ्योंऽशेभ्यस्तु कन्याभ्यः प्रदद्युर्भ्रातरः पृथक्
स्वात्स्वादंशाच्चतुर्भागं पतिताः स्युरदित्सवः"

[मनुस्मृति अ० ९]

इसमें मनुजीने स्पष्ट रूपसे लिख दिया है कि जो भाई-बहनको चौथाई नहीं देते वे पतित हो जाते हैं।

निरुक्तमें एक श्लोक स्वायम्भुव मनुकी सम्मति के लिये उद्धृत है कि लड़की और लड़के दोनों पैतृक सम्पत्तिमें भाग पाते थे :—

"अविशेषेण पुत्राणां दायोभवतितत्वतः
मिथुनानां विसर्गादौ मनुः स्वायम्भुवोऽब्रवीत्"

[निरुक्त]

अर्थात्, सृष्टिके आदिमें मिथुन—लड़की-लड़के दोनों धनके हिस्सेदार समझे जाते थे।

स्वायम्भुवजीने लड़कीको भी पुत्र मानकर धनभागिनी बनानेके लिये यह युक्ति सोची थी कि गर्भाधानके समय अथवा उसके बाद जो संस्कार हुए, उसमें पुत्र भाव था। पुत्रीके नामसे कोई संस्कार उत्पन्न होनेके पहले नहीं हुआ। पिताका पुत्रत्व-कारक तेज पुत्रीमें भी गुप्त रूपसे विद्यमान है। इसीसे मातामह अपने दौहित्रको भी पौत्र समझता है और उसका दिया हुआ पिण्ड ग्रहण करता है। ऋग्वेदमें एक मन्त्र उक्त आशयका है। यास्कजीने उसका उक्त भावार्थ निरुक्तमें लिखा है:—

"शासद् वह्निर्दुहितुर्नप्त्यङ्गाद् विद्वाँ ऋतस्य दीधितिं सपर्यन।
पितायत्रदुहितुः सेकमृञ्जन् संशग्म्येन मनसादधन्वे"

[ऋ]

"प्रशास्ति वोढ़ा सन्तानकर्मणो दुहितुः पुत्रभावम्……
नप्तारमुपागमद् दौहित्रं पौत्रम्।…अविशेषेण मिथुनाः पुत्राः दायादाः"

[नि]

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जब जगत्‌में लोभकी सृष्टि हुई तब भाई कहने लगे कि बहनें परायी वस्तु हैं। वे दूसरोंके यहां चली जाती हैं। विवाहके समय उनका बाप वाला सम्बन्ध निवृत्त हो जाता है। उन्हें भाग नहीं मिलना चाहिये। कुछ विद्वानोंने उनके पक्षमें व्यवस्था दे दीः—

"नदुहितर इत्येके" (नि)

दुहिताएं पैतृक सम्पत्ति न पावें। इस व्यवस्था के पहले लड़की भी पुत्र ही मानी जाती थी और भाइयोंके समान पैतृक सम्पत्तिमें हिस्सा पाती थी।

एक भाई दूसरे भाईका भाग विशेष अवस्थामें पाता है। बहनको जो सम्पत्ति भाग रूपसे मिली है, भाई उसका अधिकारी किसी अवस्थामें हो सकता है कि नहीं, इस विषयके विचारके लिये ऋग्वेदमें निम्न-लिखित मन्त्र आया हैः—

"नजामयेतान्वोरिक्थमारक चकारगर्भं सनितुर्निधानम्" [ऋ]

(तान्वः) बेटेने (जामये) अपनी बहनको (रिक्-थम्) धन (न) नहीं दिया बल्कि (सनितुः) उसके ग्रहण करनेवाले बहनोईके अधिकारमें (गर्भम्) भांजेको तथा (निधानम्) खजानेको—सम्पत्तिको (चकार) कर दिया। अर्थात् विवाह होते ही बहनकी सम्पत्ति पर उसके पतिका अधिकार हो गया। उस धनका भागी पतिका परिवार है, भाई नहीं।

सृष्टिके प्रारम्भमें हमारी समझके अनुसार उक्त मन्त्रका यही अर्थ होता था। भाइयोंके धन लोभा-क्रुष्ट हो जानेपर कुछ वैदिकोंने उक्त मन्त्रका यह अर्थ किया कि भाईने सहोदराको कुछ धनका भाग नहीं दिया। उसे सन्तान उत्पन्न करनेके लिये दूसरेको सुपुर्द कर दिया। निरुक्तने भी इस प्रचलित लोक-मतके आगे अपना सर झुकाया और इसका समर्थन किया। उसे यह भी कहना पड़ा कि कई मन्त्रोंमें लड़कीको धनकी अधिकारिणी कहा है। यह बात भाई नहीं रहनेकी दशामें है। सर्वदा नहीं :—

"अभ्रातृ मतोवाद इत्यपरम्" [नि]

माता पिता अपनी पुत्रीको सम्पत्तिसे वञ्चित करनेमें कैसे तत्पर हो गये? उन्होंने उठते हुए लोकमतको दबानेके लिये क्यों न उद्योग किया! निरुक्तमें इन प्रश्नोंका उत्तर प्रकारान्तरसे मिल जाता है कि लड़कीके नामसे नानाका वंश प्रसिद्ध नहीं होगा। वंशधर होंगे लड़के। फिर लड़कियोंको अधिक सम्पत्ति देनेसे क्या लाभ! उनके विवाहमें जो व्यय होता है, वही बहुत है। कन्याके पैतृक धनाधिकार छीननेमें समाजने इसलिये साथ दिया कि बड़ी बड़ी जमींदारी दूसरे कुलमें चली जाती थी। लक्ष्मी चञ्चल प्रसिद्ध ही है। कन्याओंके कारण महाचञ्चलत्व आ गया था। साले बहनोईमें सम्पत्तिके कारण प्रायः झगड़ा हुआ करता था। बहुतसे भाई कई पुरुषों तक बटवारा नहीं करते और अपनी सम्पत्ति बढ़ाते जाते हैं। बहनोंके भागके लिये पृथक् हो जाना अनिवार्य हो जाता था और पारि-वारिक एकता नष्ट होती थी। जो हो, प्राचीन समय में कन्याएं भाईकी भांति पैतृक सम्पत्तिमें हिस्सा पाती थीं। इसमें सन्देह नहीं।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अभिलाषा

(रचयिता—पण्डित श्रीकृष्णविहारी मिश्र 'माधुरी'-सम्पादक)

विसद विवेकको विमल जल पूरो रहै,
सुरुचि तरंगनकी चारुता घनी रहै ;
रीझ-बूझ-सूझको समीर हलचल करै,
अनुराग-रवि-रमनीयता तनी रहै ;
एरी मेरी रानी बानी तेरी करुनाको पाय,
तनमयता मैं मति सहज सनी रहै ;
हृदय सरोवर मैं भावके सरोज फूलैं,
सुन्दर उपासनाकी बासना बनी रहै ।

मानस-मानसर

(रचयिता—कविवर श्रीमोहनलाल महतो "वियोगी")

मानसर-मानस-मंजु हमारा ।
आशा—हिमगिरिकी छायामें जिसको मिला सहारा ॥
नीरवताके आलिंगनमें,
हाय ! बँधा था जो शुभ छनमें ।
जिस पर महाशून्यका भूला सीमाहीन किनारा ॥
ऊषा जिसके एक छोर पर,
फैलाती सुहागका अम्बर ।
जिसके एक छोर पर संध्याने निज माँग सँवारा ॥
एक छोर पर मरु रोता है,
स्वयम् अनन्त जहां सोता है ।
एक छोरको सींच रही है इन नयनोंकी धारा ॥
सरसिज-भाव पराग-रागमय,
नव-कुमूदिनी शुभ-सुहागमय ।
जिनका एक-एक दल है मेरी आंखों का तारा ॥
ताप बुझाने मलय-समीरन,
आता है द्वारे भिक्षुक बन ।
ज़िसकी बीचि-मालिका पर शशि ढाल रहा है पारा ॥
शरद्-गगनमें ज्यों घन सुखकर,
स्वप्न समान मराल-मनोहर ।
छल-छल करते हुए नीरमें तैरे प्यारा—प्यारा ॥
इन्द्रधनुषकी छाया सुन्दर,
जिनके स्फटिक समान पंख पर ।
चित्र आँक देती है नयनोंको सुख मिलता न्यारा ॥
ज्यों नभमें उड़गण हे सहृदय !
सीपि-कल्पना-निचय-विभामय ।
भरा हुआ है सीपज—कविताओंसे अंचल सारा ॥
जहां पारखीदल नत-मस्तक,
इस सीमासे उस सीमा तक ।
भूल "हृदयका मधुर भार" फिरता है मारा-मारा ॥
ओ' ज्ञानाग्निविदग्ध श्रेष्ठ नर !
अड़े रहो मत अपनी हठ पर ।
फैला दो, भर दूँ मोतीसे दामन आज तुम्हारा ॥
मानसर-मानस-मंजु हमारा ।

* * *

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

समझकी भूल

(ले०—श्रीयुत पण्डित जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी)

(१)

चार पांच वर्षकी बात है मैं जौनपुरसे श्रीअयोध्याजी जा रहा था। सावनका महीना था। तिथि शायद पूर्णमासी थी, पर चन्द्रदेवके दर्शन दुर्लभ थे। आकाश घनघोर घटासे घिर रहा था। बीच बीचमें बिजली चमक जाती थी। रह रह कर बादल भी गरज उठते थे। नन्हीं नन्हीं बूदें पड़ रही थीं। रातका समय था। मैं टिकट ले सेकेण्ड क्लासमें घुस गया। एक सज्जन उसमें पहलेसे ही खर्राटे ले रहे थे। मैं बगल वाली बेंच पर बिस्तर बिछा लेट गया। ठंढी हवाके झकोरोंने तुरत सुला दिया। शायद शाहगञ्जमें आखें खुलीं तो देखा, एक सज्जन और आ गये हैं। यह अकेले नहीं थे, इनके साथ एक महिला भी थी।

(२)

नये आने वाले युवक थे। इनकी उम्र तीससे ज्यादा मालूम नहीं होती थी। छरेरा शरीर, रंग गोरा और कद म्याना था। साफ सुथरी धोती, कोट और बड़ा बांका साफा था। कलाईमें घड़ी और हाथमें छड़ी थी। महिलाकी अवस्था पैंतालिससे कम नहीं मालूम होती। वह हृष्ट पुष्ट और लम्बी थी। सफेद साड़ी और जाकेट पहने थी। हाथोंमें सोनेकी चूड़ियां और गलेमें हार था। मुंहपर घूंघट न था। सधवा है या विधवा यह उसके रङ्ग-ढङ्गसे समझना कठिन था। कम से कम मैं तो कुछ न निश्चय कर सका। खैर, साथी सज्जनने बीचवाली बेंचपर बिस्तर बिछा दिया और वह उसपर जा लेटी। रङ्ग-ढङ्गसे मैंने अनुमान किया कि दोनों मां-बेटे हैं। अयोध्याजी जाते होंगे।

(३)

महिलाके लेट जाने पर सज्जनराम मेरे पावताने आ बैठे। शिष्टताके विचारसे मैं उठने लगा। उन्होंने भी सज्जनता दिखा मुझे उठनेसे रोका। पर मैं न रुका, उठ ही बैठा। फिर परस्पर परिचय होनेके बाद वार्तालाप आरम्भ हुआ। बहुत देरतक विविध प्रकारकी बातें हुईं। पूछने पर मालूम हुआ कि वह उन्नाव जिलेके रहने वाले हैं। ताल्लुकेदार हैं। उच्च जातिके ब्राह्मण हैं। अंग्रेजी नहीं के बराबर जानते हैं। हिन्दीके प्रेमी हैं। समाचार पत्रादि पढ़नेका शौक है। सामयिक बातोंकी जानकारी रखते हैं। इधर कहीं अपनी नातेदारीमें गये थे। अब घर वापस जा रहे हैं। श्रीअयोध्याजी भी उतरनेका विचार है, इत्यादि। मैं उनसे बातें भी करता जाता था और मन ही मन सोचता भी जाता था कि यह स्त्री इनकी माताके सिवा और क्या हो सकती है। पर ध्यानमें कुछ न आया। रङ्ग, ढङ्ग, उम्र सब बातोंका विचार कर मैंने निश्चय किया कि यह माता ही है। इतनेमें हमलोग अयोध्याजी आ पहुंचे। उतरनेके समय मुझसे न रहा गया और मैं पूछ ही बैठा, “क्या यह आपकी माता हैं?” उन्होंने छूटते ही कहा, “मेरी नहीं, मेरे लड़कोंकी हैं।” मैं मुंह देखता रह गया और वह नौ-दो-ग्यारह हो गये।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

व्रत-भंग

(लेखक—श्री जयशंकर प्रसादजी)

“तो तुम न मानोगे ?”

“नहीं, अब हम लोगोंके बीच इतनी बड़ी खाई है, जो कदापि नहीं पट सकती।”

“इतने दिनोंका स्नेह ?”

“उंह ! यह सब कुछ भी नहीं। उस दिनकी यह बात आजीवन भुलाई नहीं जा सकती नन्दन ! अब मेरे लिए तुम्हारा और तुम्हा(लिए मेरा कोई अस्तित्व नहीं। वह अतीतके स्मरण-स्वप्न हैं, समझे ?”

“यदि न्याय नहीं कर सकते तो दया करो मित्र ! हम लोग गुरुकुलमें............”

“हाँ-हाँ मैं जानता हूं, तुम मुझे दरिद्र युवक समझ कर मेरे ऊपर कृपा रखते थे, किन्तु उसमें कितना तीक्ष्ण अपमान था, उसका मुझे अनुभव हुआ।”

“उस ब्रह्म बेलामें जब ऊषाका अरुण आलोक भागीरथीकी लहरोंके साथ तरल होता रहता, हम लोग कितने अनुराग से स्नान करने जाते थे। सच कहना, क्या वैसी मधुरिमा हम लोगोंके स्वच्छ हृदयमें न थी ?”

“रही होगी—पर अब, उस मर्मघाती अपमानके बाद ! मैं खड़ा रह गया, तुम स्वर्ण रथ पर चढ़कर चले गए ; एकवार भी नहीं पूछा। तुम कदाचित जानते होगे नन्दन, कि कंगालके मनमें प्रलोभनोंके प्रति कितना विद्वेष है ! क्योंकि वह उससे सदैव छुआ करता है—ठुकराता हैं। मैं अपनी उसी बातको दुहराता हूं कि हम लोगोंका अब उस रूपमें कोई अस्तित्व नहीं।”

“वही सही कपिञ्जल ! हम लोगोंका पूव अस्तित्व कुछ नहीं, तो क्या हम लोग वैसेही निर्मल होकर एक नवीन मैत्रीके लिये हाथ नहीं बढ़ा सकते ? मैं आज प्रार्थी हूं।”

“मैं उस प्रार्थनाकी उपेक्षा करता हूं। तुम्हारे पास ऐश्वर्य्यका दर्प है तो मेरी अकिञ्चनता कहीं उससे अधिक गर्व रखती है।”

“तुम बहुत कटु हो गये हो इस समय। अच्छा, फिर कभी......”

“न अभी न फिर कभी। मैं दरिद्रताको भी दिखला दूंगा कि मैं क्या हूं। इस पाखण्ड संसार में भूखा रहूंगा परन्तु किसीके सामने सिर न झुका-ऊंगा। हो सकेगा तो संसारको वाध्य करूंगा झुकनेके लिये।”

कपिञ्जल चला गया। नन्दन हतबुद्धि होकर लौट आया। उस रातको उसे नींद न आई।

* * * *

उक्त घटनाको बरसों बीत गए पाटलीपुत्रके धन-कुबेर कलशका कुमार नन्दन धीरे-धीरे उस घटनाको भूल चला। ऐश्वर्य्यका मदिरा विलास किसे स्थिर रहने देता है ? उसके यौवनने संसार में बड़ी-बड़ी आशायें लेकर पदार्पण किया था।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नन्दन तब भी मित्रसे वञ्चित होकर जीवनको अधिक चतुर न बना सका।

"राधा तू भी कैसी पगली है! तूने कलशकी पुत्र-बधू बननेका निश्चय किया है, आश्चर्य्य!"

"हाँ महादेवी, जब गुरुजनोंकी आज्ञा है, तब उसे तो मानना ही पड़ेगा।"

"मैं रोक सकती हूं। वह मूर्ख नन्दन कितना असङ्गत चुनाव है! राधा! मुझे दया आती है।"

"किसी अन्य प्रकारसे गुरुजनोंकी इच्छाको टाल देना, यह मेरी धारणाके प्रतिकूल है, महादेवी! नन्दनकी मूर्खता सरलताका सत्य रूप है। मुझे वह अरुचिकर नहीं। मैं उस निर्मल-हृदयकी देख-रेख कर सकूं तो यह मेरे मनोरंजनका ही विषय होगा।"

मगधकी महादेवी ने हंसीसे कुमारीके इस साहसका अभिनन्दन करते हुए कहा—"तब तेरी जैसी इच्छा, तू स्वयं भोगेगी।" माधवी कुंजसे वह विरक्त होकर उठ गईं। उन्हें राधा पर कन्याके समान ही स्नेह था।

दिन स्थिर हो चुका था। स्वयं मगध-नरेशकी उपस्थितिमें महाश्रेष्ठि धनञ्जयकी कन्याका ब्याह कलशके पुत्रसे हो गया। उपयुक्त ही वह समारोह था। रत्नोंके आभूषण स्वर्ण-पात्रोंके अतिरिक्त मगध-सम्राटने राधाकी प्रिय वस्तु अमूल्य मणि-निर्मित्त दीपाधार भी दहेजमें दे दिया। उस उत्सवकी बड़ाई-पान-भोजन, आमोद-प्रमोदका विभवशाली चारु चयन कुसुमपुरके नागरिकोंको बहुत दिन तक गल्प करने का एक प्रधान आकरण था।

राधा कलशकी पुत्र-बधू हुई।

\+ \+ \+ \+

राधाके नवीन उपवनके सौध-मन्दिरमें अगुरु, कस्तूरी और केशरकी चहल-पहल, पुष्प-मालाओंका दोनों सन्ध्यामें नवीन आयोजन और दीपावलीमें, वीणा, वंशी और मृदङ्गकी स्निग्ध गम्भीर ध्वनि बिखरती रहती। नन्दन अपने सुकोमल आसन पर लेटा हुआ राधाका अनिन्द्य सौन्दर्य्य एक टक चुप-चाप देखा करता। उस सुसज्जित प्रकोष्टमें मणि-निर्मित्त दीपाधारकी यन्त्र-मयी नर्तकी अपने नूपुरोंकी झन्कारसे नन्दन और राधाके लिये एक क्रीड़ा और कुतूहलका सृजन करती रहती। नन्दन कभी राधाके खिसकते हुए उत्तरीयको संभाल देता। राधा हँस कर कहती—

"बड़ा कष्ट हुआ।"

नन्दन कहता—"देखो, तुम अपने प्रसाधन हीमें पसीने-पसीने हो जाती हो, तुम्हें विश्रामकी आवश्य-कता है।"

राधा गर्वसे मुस्करा देती। कितना सुहाग था, उसका अपने सरल पति पर और कितना अभिमान था अपने विश्वास पर! एक सुखमय स्वप्न चल रहा था।

× × × ×

कलश धनका उपासक सेठ अपनी विभूतिके लिये सदैव सशोक रहता। उसे राजकीय संरक्षण तो था ही, दैवी रक्षासे भी अपनेको सम्पन्न रखना चाहता था। इस कारण उसे एक नंगे साधुपर अत्यन्त भक्ति थी, जो कुछ ही दिनोंसे उस नगरके उपकण्ठमें आकर रहने लगा था।

उसने एक दिन कहा—"सब लोग दर्शन करने चलेंगे।"

उपहारके थाल प्रस्तुत होने लगे। दिव्य रथोंपर

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

बैठकर सब साधु-दर्शनके लिये चले। वह भागी-रथी-तटका एक कानन था; जहाँ कलशका बनवाया हुआ कुटीर था।

सब लोग अनुचरोंके साथ रथ छोड़ कर भक्ति-पूर्ण हृदयसे साधुके समीप पहुंचे। परन्तु राधाने जब दूर ही से देखा कि वह साधु नग्न है. तो वह रथकी ओर लौट पड़ी। कलशने उसे बुलाया, पर राधा न आई। नन्दन कभी राधाको देखता और कभी अपने पिताको। साधु खीलोंके समान फूट पड़ा। दांत किट-किटा कर उसने कहा—"यह तुम्हारी पुत्र-वधू कुलक्षणा है कलश! तुम इसे हटा दो नहीं तो तुम्हारा नाश निश्चित है।" नन्दन दांतों तले जीभ दबाकर धीरेसे बोला—"अरे! यह कपिञ्जल……!"

अनागत भविष्यके लिये भयभीत कलश क्षुब्ध हो उठा। वह साधुकी पूजा करके लौट आया। राधा अपने नवीन उपवनमें उतरी।

कलशने पूछा—"तुमने महापुरुषसे क्यों इतना दुर्विनीत व्यवहार किया?"

"नहीं पिताजी! वह स्वयं दुर्विनीत है। जो स्त्रियोंको आते देख कर भी साधारण शिष्टाचारका पालन नहीं कर सकता, वह धार्मिक महात्मा तो कदापि नहीं!"

"क्या कह रही है मूर्ख! वे एक सिद्ध पुरुष हैं।"

"सिद्धि यदि इतनी अधम है? धर्म यदि इतना निर्लज्ज है तो वह स्त्रियोंके योग्य नहीं पिताजी! धर्मके रूपमें कहीं आप भयकी उपासना तो नहीं कर रहे हैं?"

"कंगालकी लड़की! तू सचमुच कुलक्षणा है!"

"इसे तो अन्तर्यामी भगवान ही जान सकते हैं। मनुष्य इसके लिये अत्यन्त क्षुद्र है। पिता जी आप………"

उसे रोक कर अत्यन्त क्रोधसे कलशने कहा:—"तुझे इस घरमें रखना अलक्ष्मीको बुलाना है। जा, मेरे भवनसे निकल जा।"

"नन्दन सुन रहा था, काठके पुतलेके समान! वह इस विचारका अन्त हो जाना तो चाहता था पर क्या करे, यह उसकी समझमें न आया। राधाने देखा, उसका पति कुछ नहीं बोलता तो अपने गर्वसे सिर उठा कर कहा—"मैं धन कुबेरकी क्रीत दासी नहीं हूं, मेरे गृहणीत्व का अधिकार केवल मेरा पदस्खलन ही छीन सकता है। मुझे विश्वास है, मैं अपने आचरणसे अबतक इस पदकी स्वामिनी हूं। कोई भी मुझे इससे वञ्चित नहीं कर सकता।"

आश्चर्यसे देखा नन्दने और हतबुद्धि होकर सुना कलशने। दोनों उपवनके बाहर चले गये।

वह उपवन सबसे परित्यक्त और उपेक्षणीय बन गया। भीतर बैठी हुई राधाने यह सब देखा।

× × × ×

नन्दनने पिताका अनुकरण किया। वह धीरे-धीरे राधाको भूल चला। परन्तु नये ब्याहका नाम लेते ही चौंक पड़ता। उसके मनमें धनकी ओरसे वितृष्णा जगी। ऐश्वर्य्यका यान्त्रिक शासन जीवनको नीरस बनाने लगा। उसके मनकी अतृप्ति, विद्रोह करनेके लिये सुविधा खोजने लगी।

कलशने उसके मनो-विनोदके लिये नया उपवन बनवाया। नन्दन अपनी स्मृतियोंका लीला-निके-तन छोड़ कर वहीं रहने लगा।

× × × ×

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

राधाके आभूषण बिकते थे और उस सेठके द्वारकी अतिथि-सेवा वैसी ही होती रहती। मुक्त द्वारका अपरमित व्यय और आभूषणोंके विक्रयकी आय—कब तक यह युद्ध चले? अब राधाके पास बच गया था वही मणि-निर्मित दीपाधार, जिसे महादेवीने उसके क्रीड़ाके लिये बनवाया था।

थोड़ा-सा अन्न अतिथियोंके लिये बचा था। राधा दो दिनसे उपवास कर रही थी। दासीने कहा—"स्वामिनी! यह कैसे हो सकता है कि आपके सेवक बिना आपके भोजन किये अन्न ग्रहण करें?"

राधाने कहा—"ले, आज यह मणि-दीप विकेगा। दासी उसे ले आई। वह यन्त्रसे बनी हुई रत्न-जटित नर्तकी नाच उठी। उसके नूपुरकी झन्कार उस दरिद्र भवनमें गूंजने लगी। राधा हंसी। उसने कहा—"मनुष्य-जीवनमें इतनी भी नियमानुकूलता यदि होती!"

स्नेहसे चूम कर उसे वेचनेके लिये अनुचरको दे दिया। पण्यमें पहुँचते ही दीपाधार बड़े-बड़े रत्न वणिकोंकी दृष्टिका एक कुतूहल बन गया। उसके चूड़ामणिका दिव्य आलोक सभीकी आंखोंमें चकाचौंध उत्पन्न कर देता था। मूल्यकी बोली बढ़ने लगी। कलश भी पहुंचा। उसने पूछा,—"यह किसका है?" अनुचरने उत्तर दिया—"मेरी स्वामिनी सौभाग्यवती श्रीमती राधा देवी का।"

लोभी कलशने डाँट कर कहा—"मेरे घरकी वस्तु इस तरह चुराकर तुम लोग बेचने फिर आओगे तो बन्दी-गृहमें पड़ोगे। भागो।"

अमूल्य दीपाधारसे बञ्चित सब लोग लौट गये कलश उसे अपने घर उठवा ले गया।

राधाने सब सुना—"वह कुछ न बोली।"

* * * *

गंगा और शोणमें एक साथ ही बाढ़ आई। गांवके गांव बहने लगे। भीषण हाहाकार मचा। कहाँ ग्रामीणोंकी असहाय दशा और कहाँ जलकी उद्दण्ड बाढ़, कच्चे झोंपड़े उस महाजल-व्यालकी फूंकसे तितर-बितर होने लगे। वृक्षों पर जिसे आश्रय मिला, वही बच सका। नन्दनके हृदयने तीसरा धक्का खाया। नन्दनका सत्साहस उत्साहित हुआ। वह अपनी पूरी शक्तिसे नावोंकी सेना बनाकर जल-प्लावनमें डट गया, और कलश अपने सात खण्डके प्रासादमें बैठा यह दृश्य देखता रहा।

रात नावों पर बीतती है और बांसोंके छोटे-छोटे बेड़े पर दिन। नन्दनके लिये धूप, वर्षा, शीत कुछ नहीं, अपनी धुनमें वह लगा हुआ है। बाढ़-पीड़ितोंका झुण्ड सेठके प्रासादमें हर नावोंसे उतरने लगा। कलश क्रोधके मारे बिलबिला उठा। उसने आज्ञा दी कि बाढ़-पीड़ित यदि स्वयं नन्दन भी हो तो वह प्रासादमें न आने पावे। घटा घिरी थी, जल बरसता था। कलश अपनी ऊँची अटारीपर बैठा मणि-निर्मित दीपाधारका नृत्य देख रहा था।

\+ \+ \+ \+

नन्दन भी उसी नाव पर था जिसपर चार दुर्बल स्त्रियां, तीन शीतसे ठिठुरे हुए बच्चे और पांच जीर्ण पञ्जर वाले वृद्ध थे। उस समय नाव द्वार पर जा लगी। सेठका प्रासाद गंगा तटकी एक ऊँची चट्टान पर था। वह एक छोटासा दुर्ग था। जल अभी द्वार तक ही पहुंच सका था। प्रहरियोंने नावको देखते ही रोका—"पीड़ितोंको इसमें स्थान नहीं।"

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नन्दनने पूछा—"क्यों ?"

"महा श्रेष्ठि कलशकी आज्ञा।"

नन्दनने एक बार क्रोधसे उस प्रासादकी ओर देखा और मांझीको नाव लौटानेकी आज्ञा दी। मांझीने पूछा—"कहां ले चलें ?" नन्दन कुछ न बोला! नाव उस बाढ़में चक्कर खाने लगी। सहसा दूर उसे जलमग्न वृक्षोंकी चोटियों और पेड़ोंके बीचमें एक गृहका ऊपरी अंश दिखाई पड़ा। नन्दनने संकेत किया। मांझी उसी ओर नाव खेने लगा।

× × × ×

गृहके नीचेके अंशमें जल भर गया था। थोड़ा-सा अन्न और ईंधन ऊपरके भागमें बचा था। राधा उस जलमें घिरी हुई अचल थी। छतके मुंडेरे पर बैठी वहजलमयी प्रकृतिमें डूबती हुई सूर्य्यकी अन्तिम किरणोंको ध्यानसे देख रही थी। दासीने कहा—"स्वामिनी! वह दीपाधार भी गया, अब तो हम लोगोंके लिये बहुत थोड़ा अन्न घरमें बच रहा है।"

देखती नहीं, यह प्रलय सी बाढ़! कितने मर-मिटे होंगे। तुम तो पक्की छत पर बैठी अभी यह दृश्य देख रही हो। आजसे मैंने अपना अंश छोड़ दिया। तुम लोग जबतक जी सको जीना। सहसा नीचे झांक कर राधाने देखा, एक नाव उसकी वाता-यनसे टकरा रही है, और एक युवक उसे वातायनके साथ दृढ़तासे बाँध रहा है।

राधाने पूछा—"कौन है ?"

नीचे सिर किये नन्दनने कहा—"बाढ़-पीड़ित! कुछ प्राणियोंको क्या विश्राम मिलेगा ? अब जलका क्रोध उतर चला है। केवल दो दिनके लिये इतने मरने वालोंको आश्रय चाहिये।"

"ठहरिये, सीढ़ी लटकाई जाती है।"

राधा और दासी तथा अनुचरने मिलकर सीढ़ी लगाई। नन्दन विवर्ण मुख एक-एकको पीठपर लाद कर ऊपर पहुंचाने लगा। राधा हट गई थी। जब सब ऊपर आ गये तो राधाने आकर कहा—"और तो कुछ नहीं है। केवल द्विदलोंका जूस इन लोगोंके लिये बना सकी हूं, ले आऊँ ?"

नन्दनने सिर उठाकर देखा, राधा! वह बोल उठा—"राधा! तुम यहीं हो ?"

"हां स्वामी, मैं अपने घरमें हूं। गृहिणीका कर्तव्य पालन कर रही हूं।"

"पर मैं गृहस्थका कर्तव्य न पालन कर सका, राधा! पहले मुझे क्षमा करो।"

"स्वामी, यह अपराध मुझसे न हो सकेगा। उठिये, आज आपकी कर्मण्यतासे मेरा ललाट उज्ज्वल हो रहा है। इतना साहस कहां छिपा था नाथ!"

दोनों प्रसन्न होकर कर्तव्यमें लगे। यथा-सम्भव उन दुखियोंकी सेवा होने लगी।

एक प्रहरके बाद नन्दनने कहा—"मुझे भ्रम हो रहा है कि कोई यहां पास ही विपन्न है। राधा! अभी रात अधिक नहीं हुई है। मैं एक बार नाव लेकर जाऊँ ?"

राधाने कहा—"मैं भी चलूं ?"

नन्दनने कहा—"गृहिणीका काम करो राधा! कर्तव्य कठोर होता है, भाव प्रधान नहीं।"

नन्दन एक मांझीको लेकर चला गया और राधा दीपक जला कर मुंड़ेरे पर बैठी थी। उसकी दासी और दास पीड़ितोंकी सेवामें लगे थे। बादल खुल गये थे। असंख्य नक्षत्र झलमला कर निकल आये, मेघोंके बन्दी-गृहसे जैसे छुटी मिली हो।

२

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

चन्द्रमा भी धीरे-धीरे उस त्रस्त प्रदेशको भयभीत होकर देख रहा था।

एक घण्टेमें नन्दनका शब्द सुनाई पड़ा—"सीढ़ी।"

राधा दीपक दिखला रही थी, और सीढ़ीके सहारे नन्दन ऊपर एक भारी बोझ लेकर चढ़ रहा था।

छतपर आकर उसने कहा—"एक वस्त्र दो राधा!" राधाने एक उत्तरीय दिया। वह मुमुर्षु व्यक्ति नग्न था। उसे ढंक कर नन्दनने थोड़ा सेंक दिया, गर्मी भीतर पहुंचते ही वह हिलने-डोलने लगा। नीचेसे मांझीने कहा—"जल बड़े वेगसे हट रहा है नाव ढीली न करूंगा तो लटक जायगी।"

नन्दनने कहा—"तुम्हारे लिये भोजन लटकाता हूं ले लो।" काल-रात्रि बीत गई। नन्दनने प्रभात में आंखें खोलकर देखा कि सब सो रहे हैं, और राधा उसके पास बैठी सिर सहला रही है।

इतनेमें पीछेसे लाया हुआ मनुष्य उठा। अपने को अपरिचित स्थानमें देख कर वह चिल्ला उठा—

"मुझे वस्त्र किसने पहनाया, मेरा व्रत किसने भंग किया?"

नन्दनने हंसकर कहा—"कपिञ्जल! यह राधा का गृह है, तुम्हें उसके आज्ञानुसार यहाँ रहना होगा। छोड़ो पागलपन! चलो, बहुतसे प्राणी हम लोगोंकी सहायताके अधिकारी हैं। कपिञ्जल ने कहा—"सो कैसे हो सकता है? तुम्हारा हमारा संग असम्भव है।"

"मुझे दण्ड देनेके लिये ही तो तुमने यह स्वाङ्ग रचा था। राधा तो उसी दिनसे निर्वासित थी और कलसे मुझे भी अपने घरमें प्रवेश कर की आज्ञा नहीं। कपिञ्जल! आज तो हम और तुम दोनों बराबर हैं और इतने अधमरोंके प्राणोंका दायित्व भी हमीं लोगों पर हैं। यह व्रत-भङ्ग नहीं, व्रतका आरम्भ है। चलो इस दरिद्र कुटुम्बके लिये अन्न जुटाना होगा। कपिञ्जल आज्ञाकारी बालककी भांति सिर झुकाये उठ खड़ा हुआ।

अनुरोध

(रचयिता—श्रीयुत कवि 'प्रभात')

ये कलियां हैं निपट अछूती इन्हें न छूना माली!
असमय नष्ट न कर देना इनकी कोमलता, लाली।
अनुपम हैं, ये शोभाकी शोभा हैं नवल निराली;
हत्यारे! मत इन्हें गिरा देना मरोड़ कर डाली!

* * * *

प्रलय मचाकर आह! किसीके आशामय जीवनमें,
बोल, कौन सुख पायेगा तू लोलुप! अपने मनमें!

'गई है'

(रचयित्री—श्रीमती 'चकोरी')

अलि पुञ्ज उड़े चहुं ओर सखी,
विहँसीं कलियां चटकारी दई है।
कारो निशा गई आई उषा,
पहिरे शुचि लाल जो सारी नई है॥
सारी विहङ्गम मण्डली ते,
शुभ स्वागतकी धुनि भारी भई है।
भारी भई नहिं आस 'चकोरी',
चली शशिकी उजियारी 'गई है'॥

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

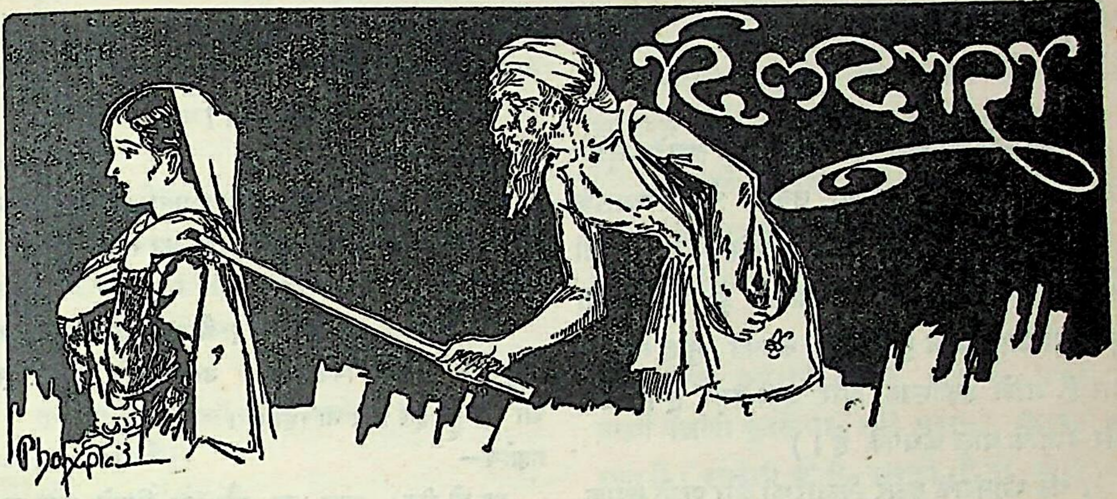

(नाटक)

नाटककार—'उग्र'

नट

ब्रह्मदेव	दर्शनशास्त्रके अध्यापक
ज्वालाप्रसाद	कोई अमीरका एकलौता बेटा
दयाशंकर	कवि
विनय प्रसाद	एक ग़रीब युवक
जयदेव	प्रोफ़ेसर ब्रह्मदेवका पुत्र
मिस्टर हाड	जेलर
रफ़ीक़	पठान क़ैदी
रामलाल	विनयका पिता
सूरदास	कोई अन्धा भिखारी

नटी

लिली	हार्डकी बेटी
गायत्री	ज्वाला प्रसादकी बुआ
दिलदारा	रफ़ीक़की बेटी

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पहला दृश्य

(नदी-तटकी सड़क पर प्रोफ़ेसर ब्रह्मदेव घूमने के लिये निकले हैं। होगा उनका वय पचासके पार। वह लम्बा, पारसी, सुफ़ैद कोट, चौड़ी मोहड़ीका पाजामा, अँग्रेजी, काला शू और ऊंची गुजराती टोपी पहने हुए हैं। उनका मुंह अण्डाकार है, आँखें तेजस्विनी और बड़ी-बड़ी हैं। सर और दाढ़ीके बाल अधपके हैं।)

(वह रंगमंचके दूसरे किनारेकी ओर पहले चमक कर देखते हैं, फिर ग़ौरसे देखने लगते हैं। पाकिटसे चश्मा निकलते हैं, जिसकी डोरी उनकी गर्दनमें झूलती दिखाई पड़ती है, नाक पर चश्मा चढ़ाकर दाहिने झुककर, बाएं मुड़कर, बढ़कर, लौटकर—ध्यानसे देखनेका नाट्य करते हुए वह दूरपर कुछ देखते हैं। ठिठकते हैं, असन्तोगकी मुद्रा बनाते हैं और गम्भीर गतिसे आगे बढ़ते हैं।)

(सामनेसे उनका पुत्र जयदेव आता दिखाई पड़ता है। कैसा अन्तर! मानों अध्यापक ब्रह्मदेवका वह कोई नहीं। उसका मुंह चौड़ा, ओठ मोटे, आँखें तिरछी, घुसी, छोटी, क़द मझोला है। मूंछ चार्लीफ़ैशनमें कटी हुई हैं। वह सूटेड-बूटेट है। उसके गलेमें कड़ा कालर और रेशमी छींटका वह फूलदार फीता बंधा है। जिसे पश्चिमी फ़ैशनके पण्डित 'बो' कहते हैं। सरपर उसके फ़ल्ट-हैड है।)

(पिताको देखकर पहले वह चौंका, मगर, तुरन्त ही धूर्त्त-शीघ्रतासे उसने अपने भाव छिपाये। अब पिता-पुत्र आमने-सामने आ गये। खड़े होकर एक दूसरेको देखने लगे।)

ब्रह्मदेव—(व्यंगसे, असन्तोषसे)

'आपने' ध्यान नहीं दिया न?

जयदेव—(धूर्त-सरलतासे)

किस बात पर? किस बातपर?

ब्रह्मदेव—(गम्भीरतासे)

उसी बात पर जिसके लिये मैने पचासों बार वर्जन किया है। उसी कामके लिये जो अभी 'आप' कर रहे थे।

जयदेव—

मैं? मैं क्या कर रहा था? मैं घूमनेके लिये, स्वच्छ वायु सेवनके लिये निकला हूं। उस कोनेसे टहलता हुआ आ रहा हूं, इस ओर जा रहा हूं।

ब्रह्मदेव—

यह तो ठीक। मगर, वह कौन था जिससे आप अभी घुल-घुलकर बातें कर रहें थे?

जयदेव—

कोई तो नहीं था पिता। हाँ---याद आयी। मेरा एक बन्धु विद्यार्थी वहाँ मिल गया था। उसीसे आगामी परीक्षा की तैयारी पर दो बातें की थीं।

ब्रह्मदेव—(तनक झटकेसे)

झूठ न बोलिये। आप बी० ए० के विद्यार्थी हैं; ज़रा-ज़रा-सी बातमें असत्य बोलनेसे, इस परीक्षामें, उत्तीर्ण होने पर भी, जीवनकी आनेवाली परीक्षाओंमें आपको बुरी तरह गिरना पड़ेगा। झूठ चाहे क्षणिक रक्षाका कारण आज भले ही बन जाय, पर आगे वही सर्वनाशका मूल भी बन सकता है। मैने स्वयं, अपनी इन्हीं आँखोंसे, अभी-अभी-अभी देखा है, आप 'उससे' बातें कर रहें थे।

जयदेव (चमक कर)

किससे? किससे?

ब्रह्मदेव—

उसीसे। उसी पाजी पुलीसवालेसे। जयदेव! ऐसी-ऐसी बातों पर, मै उत्तेजित हो उठता हूं। मैंने स्वयं देखा है, फिर भी तुम इनकारते जा रहे हो। नहीं था वह पुलिस का आदमी?

जयदेव—(मधुर उत्तेजनासे)

था--नहीं था। मान लिया वही था। मान लिया

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मैं झूठ बोल रहा था। मुझे सत्यकी उतनी ज़रूरत नहीं, जितनी आपको...... .....।

ब्रह्मदेव---

तुम्हारे इस कथनका क्या अर्थ...?

जयदेव—

यही, कि मुझे डिप्लोमा लेनेके बाद सत्य और चरित्रका व्यवसाय नहीं करना है। मैं आपकी तरह प्रो.फ़ेसर नहीं होना चाहता। मुझे वही व्यापार अधिक पसन्द है जिसे आप अधिक नापसन्द करते हैं।

ब्रह्मदेव—

तुम पुलीसकी नौकरी करना चाहते हो?

जयदेव—(दृढ़तासे)

हाँ; झूठ क्यों बोलूं?

ब्रह्मदेव—

क्रिमिनल इन्वेस्टिगेशन डिपार्ट मेण्टमें?

जयदेव---

हाँ, झूठ क्यों बोलूं?

ब्रह्मदेव---

अरे बेटा, झूठ क्यों बोलूं, झूठ क्यों बोलूं, कहना और सी० आई० डी० की नौकरीकी कामना करना दो बातें हैं। दोनों एक दूसरीसे भिन्न। उस नौकरीमें झूठसे आँखे मलते हुए उठना और झूठका लिहाफ़ ओढ़कर सोना होगा।

जयदेव---

मैंने तो कहा, मुझे सत्यकी उतनी ज़रूरत नहीं। यहाँ तो जिसके लिये जो चीज़ ज़रूरी हो, उसे वही ग्रहण करनी चाहिये। जीवन-व्यवसायमें जो बाधक हो उसका त्याग होना चाहिये। फिर चाहे वह सत्य हो, चरित्र हो, न्याय हो या---ईश्वर।

ब्रह्मदेव—(गम्भीरतासे साँस खींचकर)

हूं। समझ रहा हूं। इस शिक्षाका आपके ऊपर बुरा प्रभाव पड़ रहा है। यह शिक्षा नहीं शराब है, जिसे पीकर आप मतवाले हो रहे हैं। मिथ्याकी ओर बहके हुए बढ़े जा रहे हैं। मानियेगा नहीं आप, मैं मानता हूँ इस सत्यको। यहाँ अकसर पिताकी राय पुत्रको अमाननीय होती है। ठीक है। (आगे बढ़ते हुए) जाइये, टहलिये, परमात्मा आपको सद्बुद्धि दें!

(जयदेव जाता है। प्रोफ़ेसर ब्रह्मदेव भी आगे बढ़ते हैं, धीरे-धीरे। रुकते हैं। पीछे मुड़कर उधर उद्विग्न दृष्टिसे देखते हैं। चश्मा उतार धीरे-धीरे पोंछ पाकिटमें रखते हैं। धीरे-धीरे आगे बढ़ते हैं।)

(जिधरसे जयदेव गया है उधर हीसे विनय-प्रसाद ज्वालाप्रसाद, दयाशङ्करका प्रवेश। तीनोंका वय प्रायः समान ही है। बीस और बाइस वर्षके भीतर।

(विनय प्रसादके तनपर खादीके पकड़े हैं। उसने पंजाबी कुरते पर मोटे खद्दरका वास्कट पहन रखा है। स्वदेशी धोती उसकी है तो मोटी; पर, कोलेज-फ़ैशनमें पहनी हुई है। वही मोग़ली पाजामाकी तरह लपेट कर। उसके माथे पर जवा-हरलाल-फ़ैशनकी कटी गाँधी टोपी है। उसका जूता बादामी है, चमकदार है, महंगा-सा मालूम पड़ता है और निश्चय ही विलायती कम्पनी और लेटेस्ट-कटका बना है।

(एक बात और समझ लेना चाहिये। वह प्रसन्न मुख और सुन्दर भी है।

(ज्वालाप्रसाद लम्बा है, तीनोंमें, गोरा और सुडौल है। वह मज़बूत और प्रसन्न मालूम पड़ता है। वह स्मार्ट कालरकी कमीज़, खुला नेवी-नील कोट, बहुत चौड़ी मोहड़ी—बल्कि मोहड़ा—का पाजामा, बेटेण्ट लेदरका पम्पशु और जूतेके रंगसे मेल रखने वाले, सुरंग और क़ीमती मोज़े पहने हुए है। सर उसका मुक्त है किसी देशी-विदेशी मुकुटके भार से। बाल विनयप्रसादसे दुगुने बड़े हैं, मगर, दयाशंकरसे पँचगुने छोटे।

(दयाशंकरके बाल अलबत्ते बड़े हैं। एक-एक बालिश्तसे काम नहीं। वे धूसर काले हैं, उसकी

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

गर्दन तककी ख़बर रखने वाले हैं। उसके चेहरेमें पहले उसके केश दिखाई पड़ते हैं, फिर सामने निकला हुआ माथा, फिर भीतर घुसी हुई छोटी-छोटी टिम-टिम आँखें। देखनेसे ऐसा लगता है गोया उसके बनानेमें स्रष्टाने ज़रा भी तकलीफ़ नहीं उठाई है। उसकी मूछें छोटी-छोटी हैं और चेहरे पर अनफ़िट-सी दिखाई पड़ती हैं। जूता उसका जोधपुरी—पुराना, उसपर चुनी हुई धोती, कुरता और सबसे ऊपर बसन्ती रंगका दुपाट्टा है। वह कालेजका कवि है न। निराशावादी, प्रियतमवादी, रहस्यवादी, छायावादी।

(विनय और ज्वाला कन्धेसे कन्धा सटाये, विकसित, गर्वित, शीघ्रित, आगे-आगे हैं और दयाशंकर नमित, निद्रित, उदास, उसाँस पीछे-पीछे)

ज्वाला०—(विनयसे)

तुमने देखा उसकी ओर?

विनय—(उपेक्षा से)

हिश! नोोोो!......तुमने?

ज्वाला०—(अकड़भरी उपेक्षा से)

हुश! नोोोोोो! मैं उससे नफ़रत करता हूं। वह जुडाज़ सा धूर्त है—जिसने मसीहाको क्रासपर टँगा दिया था। वह विभीषण-सा बन्धु-द्रोही है--जिसने अपने भाईके सर्वनाश-यज्ञमें शत्रुके स्वरमें स्वर मिलाकर 'स्वाहाः!' कहा था।

दया०—(लम्बी सांस खींचकर)

ज्वाला! इतने गरम न हो भाई। तुम्हारी इस गरमी से जुडाज़ या विभीषणके पदपर कोई आंच नहीं आ सकती। अपने-अपने स्थान पर सभी आवश्यक हैं, और जो आवश्यक है उससे नफ़रत कैसे की जा सकती है।

विनय—(घूमकर हँसती आँखोंसे दयाशंकरकी ओर देखकर)

ओहो! आप जाग रहे हैं? हमारी बातें सुन रहे हैं? अजी कवीश्वर! यह तो हमारे सीमित संसारकी बातें हैं। असार हैं,--न सुनिये इन्हें। आप सीमाके उस पार खड़ी असीमता सखीके अपार शृंगार निहारिये।

ज्वाला०—(उसी स्वरमें)

कविराज! कविता कुछ और है और असार संसार कुछ और। आप अपने ही कलकल लोकमें जुडाज़ और विभीषण को आवश्यक समझ कर गद्गद हो सकते हैं। यहांके हम लोगोंको तो उनपर रोष, शोक, विक्षोभ होता ही है। व्यक्तिगत मैं तो ईसाका भक्त हूं, रामका परिचित, मगर, जुडाज़ या विभीषण का शत्रु हूँ। मैं पहली ईसवीकी पहली जनवरीके पाँच दिन पहले भी यदि होशमें होता, तो पाजी जुडाज़को बिना मारे न छोड़ता।

विनय०—(बात छीनकर, ज्वालासे)

त्रेतामें यदि आप राजा सुग्रीवके लघुधावन भी होते, तो मुझे पूरा विश्वास है—विभीषणको पुष्पकके नीचे, समुद्रके ऊपर और किसी अगर-मगरके विशाल मुखके बीचमें अवश्य ही फेंक देते। उसे अयोध्यापुरी तक कदापि न आने देते।

ज्वाला०—(दमक कर)

कदापि नहीं! कदापि नहीं!! मैं नफरत करता हूं जुडाज़ोंसे—विभीषणों से! मैं उन्हें कदापि क्षमा नहीं कर सकता।

दया०—(शान्ति से)

वे क्षमा ही के नहीं, प्रेमके भी पात्र हैं, भाई ज्वाला! जुडाज न होता, तो ईसा ईसा न होते। विभीषण न होता उस अमृत कुण्डका पता देनेके लिये, जो दानवेन्द्रकी नाभिमें था, तो राम अमर न होते। मेरे मतसे जिसे ईसा होना हो उसे जुडाज़को पहले ढूंढ़ निकालना चाहिये। क्षमाको कसनेके लिये, उसकी काली कसौटी पर। पावन प्रेमको परखनेके लिये उसकी अपावनताके द्वन्दमें।

विनय०—

जयदेवके विरुद्ध तो मेरे मनमें भी घृणा है। मैं भी भाई, कवि नहीं। मेरे मनमें भी सदाचार-द्रोही, देश-द्रोहीके विरुद्ध घृणा खौलने लगती है।

ज्वाला०—

वह पक्का धूर्तराज है। मुस्करा-मुस्करा कर हमसे भेद लेता है और उसको सरकारके गोयन्दों या पुलिस कर्मचारियोंको देता है—बेचता है।

दया०—

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तुम भेद रखते ही क्यों हो ? यदि रखते हो, तो सम्भाल-कर क्यों नहीं रखते ? क्या तमाशा है ; तुम लोग भेदको मुँहमें भरकर जम्हाते फिरते हो तो कोई हर्ज नहीं, और वह उसको देखकर, पहचान कर, लेकर, देकर, चार पैसा बना लेता है तो अपराधी हो जाता है ? तुम अपना मुँह--अपनी असाव-धानीका मुँह देखो। पहला अपराध तुम्हारा होता है। तुम दुर्बल हो, भेद रखने लायक नहीं हो, उगल देते हो। वह कुत्तेकी तरह, पेट भरनेके लिये, उसे उठा लेता है। तुम उग-लना बन्द करो। तुम्हीं उसे कुत्ता बनाते हो। घृणाकी नज़रसे देखनेसे तुम उससे कम घृणित नहीं होगे।

ज्वाला०—(तेज़ीसे)

आपके इस जयदेव—समर्थक तर्कका क्या अभिप्राय है ?

दया०—

यही, कि उससे घृणा न की जाय। घृणा करके हम दूसरेका जितना अपकार नहीं करते उससे कहीं अधिक अपना कर लेते हैं। घृणा करनेवाला, अपने हाथोंसे अपने कर्म क्षेत्रमें घृणाके बीज बोता है। उसमें फल लगते ही हैं, एककी जगह पचास पचास। बोने वालेको अपने ही हाथों वह फ़सल काटनी पड़ती है और अपने माथेपर उठाकर खलिहान, घर और बाज़ार तक पहुंचाना पड़ता है।

विनय०—(दयार्द्र करके स्वरमें)

अतएव 'कवीश्वर कपीश्वरः' की राय यह मालूम पड़ती है कि ऐसी घृणित फ़सल तैयार ही क्यों की जाय जिसके ढोनेमें सर झुक जाय। मुँह लज्जासे लाल होकर शोकसे काला हो जाय।

ज्वाला०—(लापरवाहीसे)

जो हो, मैं तो उल्लूको उल्लू और कविको कवि कहना ही दुरुस्त और मुनासिब समझता हूं। कहनेसे पहले मैं यह कभी नहीं सोचता कि, उल्लूकी फ़सल तैयार हो रही है या कविकी। मुझसे इससे क्या वास्ता। मेरा काम तो बोना मात्र है।

विनय०—(उसी स्वरमें)

बोते जाओ, बोते जाओ। सभी तरहके बीज अपने कर्म-क्षेत्रमें, बिना जोते, बोते चले जाओ। फल तो आवेंगे ही, फ़सल तो तैयार ही होगी। उस समय उत्तम फलोंको काट लेना, जो रद्दी हों उन्हें वहीं छोड़ देना। वे स्वयं सूख सड़, स्वाहा हो जायँगे।

दया०—

विनोद ! तुम विनोद कर रहे हो।

विनय०—

फिर और क्या करूँ कवीश्वर जी ? पुक्काफाड़ कर रोऊं ?

दया०—

आह ! तुम रो सकते तो कवि हो जाते !

ज्वाला०—(तमक कर)

मैं घृणा करता हूं कवि होनेसे ; जो—अफ़सोस !—आप हो ही गये। आप तो ज़रूर रो सकते होंगे ? आंसुओंकी कोई कमी तो है नहीं आपकी गहरी आँखोंमें ? तब रो चलिये कविराज महोदय !

दया०—(दब कर)

ज्वाला ! तुम विनोद कर रहे हो।

विनय०—(बुज़ुर्गीके नाट्य और स्वरसे)

अफ़सोसकी बात है !!

(प्रस्थान-सबका)

दूसरा दृश्य

(विनयप्रसादके पिता रामलालकी कोठरीमें एक ओर चौकी बिछी है जिस पर पुराना टाट और गन्दा चकतीदार चादर दिखाई पड़ता है। दीवार पर दो ताखे हैं जिनमें एक परतम्बाकू पीनेवाला छोटा नारियल और टूटी चिलम तथा कुड़ाकरकट है, और दूसरे पर टीनके अनेक छोटे-बड़े बर्तन, डिबिया, डिब्बे हैं जिनसे पता चलता है कि उनमें तम्बाकू रखी जाती है। कोठरीके एक कोनेमें मिट्टीकी एक बोरसी (अग्नि-पात्र) है, जिससे ज़रा-ज़रा धुआँ निकल रहा है। "बोरसी" के पास एक छोटा चिमटा रखा हुआ है जो निहायत गन्दा और जला-झुलसा है। वहीं एक टूटी गौरैया या मिट्टीका हुक्का भी

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

है और एक समूची लुकदार बड़ी चिलम भी। फ़र्शकी कच्ची ज़मीन पर यत्र-तत्र जले तम्बाकूका झांवां फैला है। कोठरी देखनेमें निहायत गन्दी है। रामलालका प्रवेश)

(रामलाल ठिंगने हैं और ज़रा स्थूल भी। मुह उनका सूरनके चक्के-सा ऊभड़-खाभड़ है। दाहने गाल और बाएं गर्दन पर दो बड़े-बड़े मसे है। उनके नीचे ऊपरके ओष्ठाधर ज़रूरतसे ज्यादा मोटे-भद्दे हैं। पेट उनका फूला और कुरतेके बाहर निकला हुआ है। तन पर डोरियेका कुरता, माथे पर तेलसे नहाई हुई काली और उनके सरसे कहीं छोटी टोपी शोभा-यमान है और पावोंमें अधफटा देशी चमरौधा। देखनेसे वह भले आदमीसे अधिक कार्टुन मालूम पड़ते हैं।)

राम०—(नेपथ्य हीसे चिल्लाते हुए)

विन्नोकी मां!—हे विन्नोकी महतारी! बोरसीमें आग छलगा रखो है कि, कलहीकी तरह......?

नेपथ्यसे—(विन्नोकी मां)

लगे आफ़त उठाने न; ज़रा बोरसी देख कर चिल्लाते तो क्या छोटे हो जाते?

राम०—(बोरसीकी ओर देखकर, प्रसन्नताके भाव बनाते हुए)

ओह! अब जानमें जान आयी। मॉफ़ करना विन्नोकी मां; मैंने भूल की। ज़रा यहां आओ। (बोरसीकी ओर बढ़ना)

नेपथ्यसे—(विन्नोकी मां)

मैं चौका-बासन कर रही हूं, अभी थोड़ी देर बाद ग़रीब परवर, कचहरी न जायँगे? खानेमें ज़रा भी देर हुई कि "विन्नो की मां! विन्नोकी मां!" की रट लगा देंगे।

राम०—(सरलतासे)

ओह भूल हुई, भूल हुई! तुम ठीक कहती हो, तुम्हारा सामा पौने बारह आने वाजिब है। हा हा हा हा! सुनती हो? मैंने सवासोलह आने न कह कर पौने बारह कहा है। तुम फिर कुढ़ोगी कि मैं तुम्हारी वाजिबीयतकी कीमत कम कर रहा हूं, मगर रामदोहाई विन्नोकी मां! मैं तुम्हारी बेइज्ज़ती नहीं करता बल्कि 'स' और 'च' कहता हूं। दुनिया में सोलह आने जो बात वाजिब होती है वह मानी जाती है अधिकसे अधिक पौने बारह आने ही। अतः सवा सोल-हाने वाजिब कहना झूठ बोलना है, अतिशयोक्ति है, जो मुझे...(बोरसीके पास जा कर बैठ जाते हैं, पेटकी वजहसे बैलेंस बिगड़ जाता है और सँभलते-सँभलते भी पीछेकी ओर झुक जाते हैं। फिर चिमटा उठाकर बोरसीकी आगको छेड़ते हैं) ओहो! खूब बढ़िया आग तैयार है। वाह विन्नोकी मां! जीती रहो। आज खूब बढ़िया चिलम चढ़ेगी।

(उठकर उस ताखेकी ओर बढ़ते हैं जिस पर नारियल रखा है।)

नेपथ्यसे—(विन्नोकी मां)

सुनते हो?

राम०—(ताखेके पास पहुंच कर नारियल उतारकर हाथमें लेते, उसे ध्यानसे देखते हैं)

हां, कहो; मैं खूब सुनता हूं। (चिलम उतार कर देखते हैं, साफ़ नहीं है, झंखनेका भाव बनाते हैं।)

नेपथ्यसे—(विन्नोकी मां)

सावने रुपये दिये? आज विन्नो कालेजकी फ़ीस लेगा। आज पहली तारीख़ है न?

राम०—(खीझसे)

है आज पहली तारीख—मगर, यह तो बताओ! नारियल तुमने ताज़ा क्यों नहीं किया? देखो भाई! तारीख़ चाहे कोई हो और फ़ीस कालेजकी हो या डाक्टरकी; जब मेरा हुक्का नहीं ठीक रहता तब मेरा माथा भी मेरे काबूके बाहर होता है। उफ़! ऐसा गुस्सा आता है कि साले नारियलको बोरसीमें डाल दूं और बोरसीको गलीमें!

नेपथ्यमें—(विन्नोकी मां कोमलतासे)

मेरी यादका मुहं जले! बिगड़ो मत विन्नोके बा...। ज़रा तुम्हीं ताज़ा कर लो। देखो न मैं बासन मांज रही हूं। हाथ काले हैं।

राम०—(तीव्रतासे)

मैं ही ताज़ा कर लूं? मैं पूछता हूं, मैं ही क्यों ताज़ा करूं? अब दुनियाका सारा काम मुझे ही करना होगा? दस

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भूतनाथ तेल

सुगन्धि-साम्राज्यका अद्भुत आविष्कार

और

मलयागिरके पुष्पोद्यान का विचित्र चमत्कार है,

इसीसे लोग इसे ज्यादा पसन्द करते हैं।

आप सवाल करेंगे

कि

क्या इसमें कोई गुण भी है या खाली सुगन्ध ही सुगन्ध है ?

तो कृपाकर एक बार 'सरोज' के तीसरे चित्रके

पृष्ठ पर

अपनी दृष्टि डालिये ।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

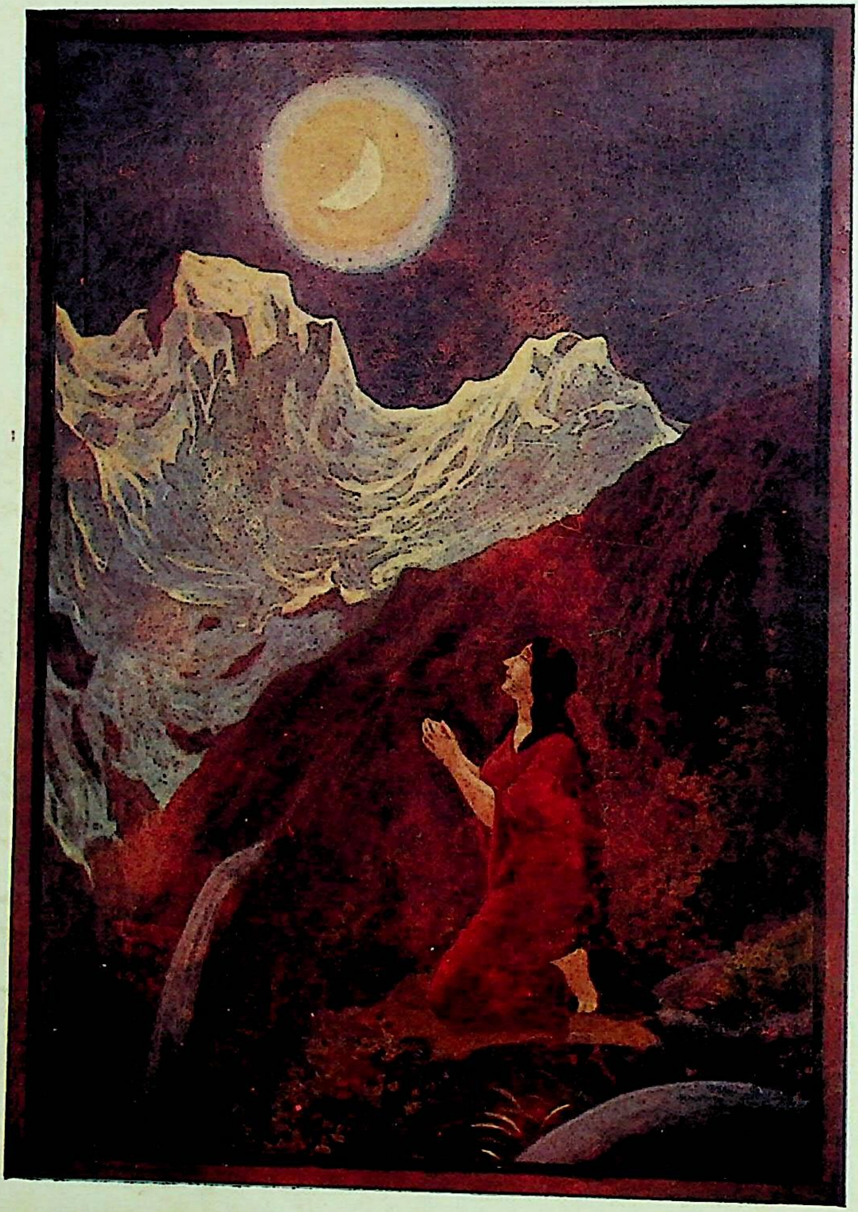

प्रार्थना

Bhutnath Press Calcutta.

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

बजेसे छ बजे शाम तक मैं कचहरीमें दरख्वास्तें लिखने और नक़ल करनेमें परीशान रहूं, घर लौटकर अपने ही हाथसे तम्बाकू चढ़ाऊं तो एक चिलम पीनेको मिले; सुबह होते ही बुलाकी सावकी गद्दीमें खाता लिखने दौड़ूं, तुम्हारे लिये यह लाऊं, उस लौंड़ेके लिये वह लाऊं, आख़िर मैं भी आदमी हूँ। इतना पिसने पर भी जब मेरी तम्बाकूमें कोई विघ्न होता है तब मेरा रोम-रोम सुलगने लगता है, टिकियाकी तरह, मिज़ाज गरम हो जाता है, चिलमकी तरह, कलेजा जल कर नीरस होने लगता है, तम्बाकूकी तरह। चलो! छोड़ो बरतन, नहीं तो मैं आज नारियल तोड़ कर ही दम लूंगा। बोरसीमें पानी उंडेल दूंगा। झूठ न मानना विन्नो की मां! दहकती आगकी क़सम!

नेपथ्यमें—(विन्नोकी मां)

अरे वाह रे! लगे कचाकच कसम खाने! गोया आज कसमों ही का कलेवा कर कचहरी जायँगे। दिन भर कामों हीमें तो जुती रहती हूं। सारे घरमें हवा नहीं भ्रा देती, मैं देती हूँ; तुम्हारे नहानेका पानी वरुण नहीं गर्माते, मैं गर्माती हूं; विन्नोके लिये चाय-कलेवा अग्निदेव नहीं तैयार करते, मैं करती हूं। माना, तुम पगड़ी बांध कर, चालीस और दस पचास कमाते हो। मगर मैं बैठी नहीं रहती सरकार!

राम०—(उतरते हुए)

अच्छा—चुप रहो! पचास बार कहा कि जब मुझे ग़ुस्सा आया करे तब दो मिनट चुप रहकर तुम मुझे क्रोध करनेका सुख लेने दिया करो। मगर, समझमें तो बात आती ही नहीं तुम्हारी। मेरे नाक चढ़ाने पर तुम भौं चढ़ा लेती हो। मैं अनाथ-सा हो जाता हूं। पछताने लगता हूं—हायरी तक़दीर! मुझे अपनी धर्मपत्नी पर भी क्रोध करनेका अधिकार नहीं है। अरे भाई, अगर तुम यह नाक-भौं न चढ़ा कर जरा-सी चिलम चढ़ा दिया करतीं तो मेरा पारा हमेशा ही आसमान पर चढ़ा रहता।

(उस ताखेकी ओर बढ़ते है जिसपर तम्बाकू रखनेके पात्र रखे हैं। वही काले-काले, तम्बाकूसे अर्ध-लिप्त टीनके अभव्य पात्र।)

राम०—(विन्नोकी माँ को छनाते हुए)

दिये हैं सावने रुपये! मगर, पूरे दस नहीं दिये। दो परसों देंगे। सच कहता हूं विन्नोकी माँ! महा मक्खी-चूस साव है। नौकरोंकी तनख़ाहके रुपये पन्द्रह दिन तक मलमल कर बे-सनका करनेके बाद ही देता है। हज़ार बार कहा, लड़केकी फ़ीस देनी है, इकट्ठी रक़म चाहिये, मगर अभागा मानता ही नहीं। मुझे भी और कोई साहूकार ही नहीं मिलता कि इससे पिण्ड छूटे।

(डिब्बोंको हाथमें लेकर जांचते हैं। उनमें कुछ न देखकर अत्यन्त असन्तोषका भाव बनाते हैं। जल्दी-जल्दी सब पात्रोंको देख जाते हैं। परम क्रोधसे चिलम और नारियलको ज़मीनपर रख कर, डिब्बोंको तड़ातड़ पृथ्वीपर फेंकते हैं।)

राम०—(क्रोधसे)

तेरी ऐसी तंसी! (एक-एक डिब्बा फेंकते हुए) हूं-हूँ-हूं-हूँ! अब नहीं पीऊँगा तम्बाकू। चाहे जान चली जाय, जान तो चली ही जायगी, पेट फूलेगा, कोठा साफ़ नहीं होगा, गड़ गड़ गड़ गड़—ड़ गड़ गड़ गड़ हवा गाड़ी दौड़ेगी, जान तो जानी ही है, मगर अब तम्बाकू इस घरमें नहीं पीऊँगा।

(तेज़ोसे द्वारकी ओर जाते हैं, फिर चमक कर कुछ गम्भीर भाव बनाते हैं और फिर उबल कर कमरेमें चल पड़ते हैं। एक ओरसे काले हाथों विन्नोंकी माँ आती है।)

राम०—

मैं पूछता हूँ, मैं ग़ुस्सेसे पूछता हूँ तम्बाकू क्यों नहीं है? हे विन्नोकी बहरी महतारी! मैं तुम्हींसे पूछता हूँ, तम्बाकू क्यों नहीं है? मेरी प्रतिध्वनि भी तुम्हींसे पूछती है, तम्बाकू क्यों नहीं है? तुम लोग मुझे आदमी समझती हो? उल्लू समझती हो? ख़ाक समझती हो? पत्थर समझती हो? उफ़! पेट फूल रहा है, हवा दौड़ रही है। अब मैं कैसे निपटूंगा और कैसे कचहरी जाऊँगा?

विन्नो०—(तेज़ीसे)

वाहरे ग़ुस्सा, वाहरे ग़ुस्सा! जरा ठहर कर निपटोगे तो क्या हो जायगा? सुबह विन्नो जब ज्वाला बाबूके यहाँ पढ़ने जा रहा था, तभी मैंने उसको तीन पैसे दिये—तीन आने सेर वाली एक पाव चीनी लानेके लिये। अब उसे जो देर हो गयी तो मैं क्या करूं?

राम०—

२

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तुम और क्या करोगी—मेरी जान मारो। शाम ही को मँगा लेतीं तो कितने सैकड़े सूदका टोटा पड़ता ?

विन्नो०—

तुम तो समझते ही नहीं। विन्नो तम्बाकू खरीदने बाज़ार नहीं जाना चाहता। अब वह बड़ा हुआ, कहता है, यह बहुत गन्दा और हानिकारक नशा है। कहता है, तीन पैसेकी सड़ी पीनो लेनेमें उसे शरम मालूम पड़ती है।

राम०—(पेट सहलाते हुए)

उफ़, उफ़! हवा दौड़ रही है, जैसे मुसदानीमें मूसा दौड़े। मेरे पेटकी एक एक आंत सारंगीके तांतकी तरह बज रही है। तम्बाकू पीनेसे मेरी तो जान बचती है और उसे केवल ख़रीद लानेमें मेरे ही बेटेको शरम मालूम पड़ती है! विश्वास मानो विन्नोकी माँ! बी० ए० होते-होते वह मुझे बाप माननेमें भी लजायगा (फिर पेट मलते हैं) उफ़! मेरी जान जाना चाहती है। भगवानके लिये कहींसे, बस एक चिलम, तम्बाकू पैदा करो। चिरौरी करता हूं, विन्नोकी माँ।

विन्नो०—(गम्भीरतासे)

तुम्हें एतबार ही नहीं होता। किस मुझौंसीके पास एक रत्तीभर भी तमाखू हो? मुझे क्या खुद पीना है जो ज़रा सी पीनीके लिये तुमसे झूठ बोलती।

राम०—(आज़िजीसे)

आधा सिगरेट भी नहीं है? अरे किसीका जूठा ही हो, जलाही हो। नशेकी जब हाजत होती है तब, सच कहता हूं विन्नोकी माँ! पवित्रता-अपवित्रता, जूठा-मीठाका विचार नहीं रह जाता। (पेट मलते हैं, मुहं बनाते हैं) है कोई?

विन्नो०—

मेरे पास आधा या पूरा सिगरेट कहांसे आवेगा?

राम०—

एक बीड़ी भी नहीं......?

विन्नो०—(खीझ कर)

ना बाबा···हे राम! तुम्हें अपनी धुनके आगे...।

राम०—

अच्छा कहींसे एक बीड़ा खेनी ही ला दो। खैनी तो होगी न?

विन्नो—(सोचती हुई)

हां—खैनी? खैनीसे काम चलेगा? मुझे याद पड़ती है. पीछेकी कोठरीके ताखे पर शायद कुछ है—(तेजीसे जाती है।)

(रामलाल चौकी पर बैठकर चारों ओर परीशानीसे देखते हैं। बिखरे ख़ाली डिब्बों पर नज़र जाती है। उठकर उन्हें चुनते हैं। बोरसीके पाससे चिमटा लाकर डिब्बोंमेंसे थोड़ा बहुत खुरचन निकालनेकी चेष्टा करते हैं। ज़रा भी निकलता है तो हथेली पर एकत्र करते हैं, मगन होते हुए।)

राम०—

बाहरी विन्नो माँ! इस तरह डिब्बोंको खुरच लिया है कि बासी बचे न कुत्ता खाय।

(विन्नोकी माँका पुनः प्रवेश)

विन्नो०—(छरतीका एक टुकड़ा देती हुई)

अरे फेकों! उनमें कुछ नहीं है। रातको तुम्हींने तो उनका रहा-सहा सामान खुरच लिया था। लो, बड़ी मुश्किलसे इतनी छरती मिली है। मगर, चूना कहाँ है?

राम०—(उजलतसे डिब्बेको फेंक छरती झपट लेते हैं)

चूना बहुत है, सारी दिवारमें पुता है। चूने बिना काम नहीं रुकेगा। उफ़! अब जानमें जान आई।)

(तेज़ीसे सुरती हथेली पर खोंटते हैं। मुहँसे लार टपकी पड़ती है। झपट कर दीवारसे नोच-रगड़ कर चूना निकालते हैं। कम निकलता है, मगर उतने ही से काम चलाकर फ़ौरन सुरती मुहँमें डाल ओठ फुलाते हैं।)

राम०—(ओठ बिदोर कर।)

आह! जीती रहो विन्नोकी माँ! अब जाकर कहीं जानमें जान आई है। (दो चार बार ओठ और मुहँ में हास्य-रीतिसे छरती फिरा कर लार भरे मुहँसे) मगर, फीकी है, चूनां कम है। अच्छा—अच्छा।

(दीवारके पास जाकर जीभसे दनादन दीवार चाटते हैं। जल्दीमें मुहँकी सुरती फ़र्शपर गिर पड़ती है। वह लपककर उसे उठाकर पुनः मुहँमें भर लेते हैं, चोरोंकी तरह अपनी पत्नीकी ओर देखते हैं।

(विन्नोकी माँ उनके इस कर्म पर घृणा-प्रदर्शक भाव बनाती है।)

परदा

[क्रमशः] *

* सर्वाधिकार लेखक द्वारा सुरक्षित।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हिन्दी-लिपि और सम्मेलन

(ले०—श्री जगमोहन 'विकसित')

"यह सम्मेलन गुजराती साहित्य-सम्मेलन तथा महाराष्ट्री साहित्य सम्मेलनको हृदयसे प्रेम पूर्वक धन्यवाद देता है कि उन्होंने हिन्दीका राष्ट्र-भाषा होना स्वीकार करके अपने शिक्षालयोंमें उसे दूसरी भाषाकी भांति पढ़ाने का मन्तव्य स्थिर किया है।"

—छठा हिं० सा० स०, प्रस्ताव ८ वां

इन पंक्तियोंके अनुसार संयुक्त प्रान्त, बिहार और मध्य प्रान्तमें जहां हिन्दीका राज्य है, गुजरात और महाराष्ट्र प्रान्तके मिल जानेसे देशका एक बड़ा भाग हिन्दीको राष्ट्र भाषाके रूपमें, अबसे बहुत पहले, निश्चयके साथ देखने लगा था। पञ्जाब, सिन्ध और हैदराबाद राज्य, जहाँ उर्दूका दौर-दौरा है, हिन्दी-क्षेत्रके ही अन्तर्गत हैं। क्योंकि उर्दू भाषा अपने सरल रूपमें हिन्दी भाषा ही है, केवल लिपिका अन्तर है। सुदूर दक्षिण, मदरास प्रान्तमें हिन्दी-प्रचार कार्य उत्तरोत्तर बढ़ रहा है और पूर्व बङ्गाल और आसाममें भी राष्ट्र भाषा सम्मेलनने इस वर्ष हिन्दी प्रचारका कार्य आरम्भ कर दिया है। अतएव वह दिन अब बहुत दूर नहीं है जब समूचे भारतवर्षमें हिन्दी समझी जाने लगेगी और भारत राष्ट्रको राष्ट्र-भाषा उपलब्ध हो जायगी।

समयकी इन सुन्दर घड़ियोंमें आवश्यकता इस बात की है, कि हम लोग जिनकी मातृ-भाषा हिन्दी है, हिन्दीको सब ओरसे पूर्ण करनेमें जुट जायँ। किन्तु खेदकी बात है कि, जब यह देखनेकी चेष्टा की जाती है कि हिन्दीको सर्वाङ्गपूर्ण बनानेके लिये कितना प्रयास हो रहा है, तो प्रायः हिन्दीके विद्वानोंकी उदासीनता और अपेक्षाके चित्र सामने आ खड़े होते हैं। ठोस काम देखनेके अभिप्रायसे जब हिन्दी साहित्य-सम्मेलनका नाम स्मरण हो जाता है, तब नेत्रोंके सामने उसके शिथिल प्रयासकी एक हलकी सी किरण चमक जाती है। राष्ट्र-भाषासे वृहद् दायित्वको देखते हुए उसने थोड़ा बहुत जो कुछ किया है, उससे हृदयको सन्तोष नहीं होता। अनेक बातें ऐसी हैं, जो अनिर्धारित और विवादग्रस्त पड़ी हुई हैं।

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनका जब तेरहवाँ अधिवेशन होने जा रहा था, तब 'मर्यादा' मासिक पत्रमें एक विस्तृत लेख लिखकर हिन्दी-लिपिकी ओर ध्यान आकर्षित करनेको हमने चेष्टा की थी। इतना ही नहीं, सम्मेलनकी लेखमालामें भी हमने इस सम्बन्धमें एक लम्बा लेख लिखा था। यह बात अब सात-आठ वर्ष की पुरानी बात हो रही है। इतने सुदीर्घ कालमें हम देखते हैं कि, सम्मेलन को लिपिसे आवश्यक प्रश्नके सम्बन्धमें क्रियात्मक रूपसे विचार करनेका अवसर नहीं मिला। उपेक्षाका क्या यह ज्वलन्त उदाहरण नहीं है?

हिन्दीके जिन विवाद-ग्रस्त विषयोंकी चर्चा उन लेखोंमें हमने की थी, उनमेंसे एक विषय था,—हिन्दीमें फारसी और अरबी शब्द। आज फिर हम

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अपने शब्दों और विचारोंको दोहरा कर इस विषयको हिन्दी-संसारके सम्मुख उपस्थित करते हैं।

हिन्दी लेखकोंमें इस समय दो दल हैं। एक दल तो उन लोगोंका है जो इण्डियन प्रेस-प्रयागके समान 'ख़बर' 'ज़रूरत' आदि शब्दोंके और 'ख' 'ज' आदि अक्षरोंमें बिन्दु देनेका पक्षपाती है और दूसरा वह दल है जो ग्रन्थ-रत्नाकर-सीरीजकी भांति 'ख' और 'ज' आदि अक्षरोंके नीचे बिन्दु देनेकी आवश्यकता नहीं समझता। दोनोंही दल अपने-अपने ढंग पर साहित्य प्रकाशित कर रहे हैं, और एक ही लिपिको दुरंगी बना रहे हैं। इस सम्बन्धमें हमें दो-तीन बातें कहनी हैं।

पहली बात तो यह है कि खबर, जरूरत, दरखास्त, सिफ़ारिश, अहमक, सिर्फ, शौक, सख्त, खौफ, फौज, नाज, आखिर, ताकत, तनखाह, खुश गरीब, सफर, करीब, चीज, मौका, सन्दूक, आवाज, कायदा, कानून, फायदा बगल, हजार, बाजार, वक्त, खराब फतह, गिरफ्तार, फैसला, इन्तजाम, दरवाजा, गुस्सा, नजर, खून, दाखिल, खारिज, खरीद, गौर, खयाल, जाहिर, जमीन, मुलाकात, कसम, कत्ल, कदम, नाहक, फिक्र, खामोश, तेज, खूबसूरत, आफत, अफसर, हाजिर, मुकाबला खञ्जर, जरा, चीख, सजा, जिन्दगी, खाली, जोर, गुजर, यकीन, रकम, तरफ, खता—आदि फारसी और अरबीके इतने अधिक शब्द हिन्दीमें व्यवहृत हैं कि उनकी कोई तालिका नहीं बनाई जा सकती। इस प्रकारका कोई सूत्र नहीं गढ़ा जा सकता कि खत्री, घी, जी, दही, मोती, हाथी, पानी तथा व्यवसायवाची तेली आदि और सम्बन्ध सूचक पड़ोसी, स्वामी आदि शब्दोंको छोड़कर अन्य ईकारान्त शब्द प्रायः स्त्रीलिङ्ग होते हैं। अरबी, फारसी शब्दोंमें बिन्दुका शुद्ध प्रयोग केवल हिन्दी जाननेवाला व्यक्ति नहीं कर सकता। ठीक प्रयोग वही कर सकता है जिसे उर्दूका अच्छा ज्ञान है। क्या एक मदरासी केवल हिन्दी पढ़कर बिन्दुवाले फारसी और अरबीके शब्दोंको ठीक लिख सकेगा? कभी नहीं। वह हिन्दीमें अपने विचार प्रकट करते हुए, हिन्दीकी पत्र-पत्रिकाओंमें लिखते समय पग-पगपर अशुद्ध होनेके भयसे झिझकेगा। सारांश, हिन्दी का लेखक बननेके लिये उसे हिन्दी सीखनेके बाद अब उर्दू सीखनेका कष्ट उठाना चाहिये। वह भी साधारण नहीं, क्योंकि उर्दूमें उसे अच्छा ज्ञान प्राप्त करना है। बिना अच्छा ज्ञान प्राप्त किये फारसी और अरबीके बहु संख्यक व्यवहृत शब्दोंमें बिन्दुका ठीक प्रयोग नहीं किया जा सकता। हिन्दीमें प्रकाशित होनेवाले आज कलके समाचार-पत्रोंको उठाकर देखा जाय तो उनमें प्रायः बिन्दुकी छीछालेदर देख पड़ेगी, जहां बिन्दु होना चाहिये, वहां छूट जाता है और जहां न होना चाहिये, वहां लग जाता है। क्यों? इसलिये कि अनेक सम्पादक उर्दूका अच्छा ज्ञान नहीं रखते। पर, सबसे बड़ा कारण हैं कम्पोजीटरोंका उर्दूसे प्रायः कोरा होना। वे बिचारे पेटके लिये प्रकाशककी इच्छा पर निछावर होते हैं और अँधेरेमें ढेला फेंकते हैं। ढेला कभी निशाने पर बैठता है और कभी इधर उधर जा गिरता है।

कुछ लोग उर्दूको हिन्दीसे अलग दूसरी भाषा नहीं मानते। वे उर्दूको हिन्दी हीका एक रूप मानते हैं। हम भी यही मानते हैं, किन्तु वहीं तक, जहां तक हिन्दीको संस्कृत शब्दोंसे और उर्दूको

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

फारसी-अरबी शब्दोंसे विशेष सम्बन्ध न हो। इसके आगे हिन्दी और उर्दू में क्या सम्बन्ध है, पाठकोंको एक ओर हिन्दीके 'सरस्वती' 'विशाल-भारत' आदि और दूसरी ओर उर्दू के 'जमाना', 'हुमायूं' आदि मासिक पत्र रखकर देख लेना चाहिये। जो हो, हम यह मानते हैं कि उर्दू या हिन्दीके इस दूसरे रूपमें अच्छी योग्यता प्राप्त करनेके लिये फारसी ही नहीं, अरबी तकके अनेक शब्दोंकी बनावट तथा उनके रूपान्तरका ज्ञान होना चाहिये, और इसके लिये हिन्दी सीखनेके समान ही समय देने और परिश्रम करनेकी आवश्यकता है।

राष्ट्र-भाषा अपने ही समान समय और श्रम-साध्य एक दूसरी भाषा पर निर्भर हो, यह क्या हिन्दीके विद्वानोंके लिये विचारणीय बात नहीं है?

दूसरी बात हमें यह कहनी है कि यदि शुद्धता के विचारसे ही फारसी और अरबीके शब्दोंको बिन्दु सहित हिन्दीके मैदानमें घूमनेका अधिकार दिया जाता है तो बिचारी संस्कृत और प्राकृत भाषायें जिनका फारसी और अरबीकी अपेक्षा हिन्दीसे घनिष्ट सम्बन्ध है, इस अधिकारसे क्यों वञ्चित की जाती हैं? स्वत्वान्दोलनके इस सजीव युगमें इन्हींके स्वत्वों पर क्यों पानी फेरा जा रहा है? फारसी और अरबीके शब्दोंमें बिन्दुका प्रयोग, जो लोग करते हैं, वे केवल इसीलिये कि वे शब्द अपने शुद्ध रूपमें व्यवहृत हो सकें। कोई-कोई इसे शब्दोंका 'शुद्ध-प्रयोग' इस नामसे न पुकार कर "ध्वनि-पूर्णता" नाम देते हैं। किन्तु हैं दोनोंका अभिप्राय एक ही। जिस प्रकार फारसी और अरबी अपने शब्दोंकी पूर्ण-ध्वनि सुनती हैं उसी प्रकार संस्कृत और प्राकृत भाषाओंको भी अपने शब्दोंको पूर्ण ध्वनि सुननेकी अभिलाषा है। इसलिये—

१—सात घोड़े जा रहे हैं।

२—दस-पांच लोग मिलकर उनके पास गये पर, काम न निकला।

३—आज कल एक आनेमें चार छटांक गेहूं और आध पाव चना न मिलेंगे।

४—यह एकन्नी राँगेकी जान पड़ती है।

५—माताने बच्चेकी पीठपर हाथ फेरकर कहा।

इन वाक्योंके स्थान पर क्रमशः—

१—सप्त घोटक जा रहे हैं।

२—दस पञ्च लोक मिलकर उनके पार्श्व गये पर कर्म न निकला।

३—अद्य कल्प एक आनेमें चतुर्सट्टांक गोधूम और अर्द्ध पाव चणक न मिलेंगे।

४—यह एकन्नी रंगकी जान पड़ती है।

५—माताने बच्चेकी पृष्ठ पर हस्त फेर कर कहा।

आदि क्यों न लिखा जाया करे?

१—कान दुख रहा है।

२—ठहरो, आगे न बढ़ो।

३—तार ढीला पड़ गया।

४—काम न निकला।

५—आज हाथ न उठा।

आदि वाक्योंके स्थान पर प्राकृतकी स्वत्व-रक्षाके लिये क्रमशः,—

१—कन्न दुख रहा है।

२—ठहरो, अग्गा न बढ़ो।

३—तार सिढिलो पड़ गया।

४—कम्म न निकला।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

५—अज्ञ हाथ न उठा।

आदि लिखनेकी प्रथा जारी करना चाहिये। फे, काफके समान वर्णन होनेसे संस्कृत और प्राकृतमें इसी प्रकारकी ध्वनि-पूर्णताकी आवश्यकता है। यदि यह कहा जाय कि, ये शब्द हिन्दी बन गये हैं, इनको अब संस्कृत और प्राकृत बनाना ठीक नहीं है तो खरीद, खरीदना, खरीदनेवाले, खरीदते हैं, खरीदे गये, खरीदो—'ये हिन्दी नहीं' क्या अरबी हैं?

फिर एक बात और है। 'भारतमें गरीबोंकी संख्या अधिक है।' इस वाक्यमें 'गरीबों' शब्दके 'ग' अक्षरमें बिन्दु दे देने ही से यह शुद्ध नहीं होता। गरीब अरबी शब्द है। अरबी व्याकरणके अनुसार 'गरीब' का बहु वचन 'गरीबों' नहीं होता। अरबी शब्द समझ कर जिस शुद्धताके विचारसे 'ग' के नीचे बिन्दु दिया जाता है वह शुद्धता गरीबोंमें 'ग' के नीचे बिन्दु देने पर भी नहीं प्राप्त होती। 'गरीबों' बिन्दु पाकर भी भाषाके विचारसे अशुद्ध शब्द है। बिन्दुके पक्षपाती सज्जन जब इस प्रकार अरबी और फारसीके शब्दोंका अशुद्ध व्यवहार करते ही हैं तब बिन्दु ही पर दुराग्रह क्यों? 'गरीबों' शब्दके समान 'गरीबी', 'खराबी', 'चीजें', 'खरीदना', 'दागना', 'चीखना' आदि शब्द भी बिन्दु देने पर भी अशुद्ध हैं।

शुद्ध उच्चारणके पक्षपातियोंको 'जाहिर' और हाजिर' आदि शब्दोंके 'ह' अक्षर पर भी ध्यान देना चाहिये। उपर्युक्त शब्दोंमें 'ह' अक्षरका न एक रूप है और न एक उच्चारण। मौलवी इन दोनों प्रकारके 'ह' के उच्चारणमें स्पष्ट भेद रखते हैं। दोनों हकारोंको एक ही प्रकारकी आकृतिसे लिखना अशुद्ध है। सभी लोग यह भूल कर रहे हैं। सम्भव है, उर्दू जानने-वाले महानुभाव इनका उच्चारण ठीक कर लेते हों, परन्तु केवल हिन्दी जानने वालोंके सम्बन्धमें यह निश्चित है कि वे इन शब्दोंमेंसे एक प्रकारके शब्दोंको लिखते भी अशुद्ध हैं और पढ़ते भी अशुद्ध हैं। शुद्ध लिखनेके पक्षपातियोंको इन बेचारों पर तरस खाना चाहिये और इन हकारोंका अन्तर व्यक्त करनेके लिये नया संकेत सिरजना चाहिये।

'मालूम' के 'म' अक्षरमें आकारका वह उच्चारण नहीं है जो हिन्दीके अकारसे व्यक्त होता है। शुद्धताके पक्षपाती सज्जन न जाने क्यों इतनी स्पष्ट भूल कर रहे हैं। उन्हें 'मालूम', 'ताज्जुब' आदि शब्दोंको भी शुद्ध लिखना चाहिये।

अब हम पाठकोंका ध्यान भारतकी अन्य प्रान्तिक भाषाओंकी ओर आकर्षित करते हैं,—

"जनाब आपनि आमीर, खोदा आपनाके बुलन्द करियाछेन। आमि गरीब पेटेर दाये मजूरी करिया खाइ, आमि आपनाके हुजुर बलिब नात के बलिबे?"

—भारत० आषाढ़ १३२५

"एक ग्रंथकार लखेछेके प्रतापे दौलतने जमीन खोया पण पोतानुं माथुं नोचुं नवाव्युं न थी। फक्त एज राजाए पोताना खानदाननी आबरू राखी छे।"

—चौ० पु० १९२०, पृष्ठ ६२

"वे सूलचीं लेणीं पहावयास निघालेला प्रवासी बहुत करू न दौलताबाद चा किल्ला पाहिल्याशिवाय राहत नाहीं वत्यानें औरंगाबाद हें शहर पाहिल्या-शिवाय परतूं नये अशी आमची शिफारस आहे, औरंगाबाद हे जिल्ह्या चें ठिकाण आहे।"

—वेरुलचीं लेणीं, पृष्ठ ११२

ऊपरके अवतरण क्रमशः बंगला, गुजराती और मराठी भाषाओंके हैं। फारसी और अरबी शब्दोंके नीचे रेखा खिंची है। कहीं भी अक्षरके नीचे बिन्दुका

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रयोग नहीं है। इन भाषाओंमें फारसी और अरबीके शब्द विन्दु हीन प्रयुक्त होते हैं। इतना ही नहीं, अनेक शब्दोंका रूप भी कुछ से कुछ हो जाता है। फारसी और अरबी ही क्यों अंगरेजी आदि अन्य भाषाओंके शब्दोंकी भी यही दशा है। वङ्गलामें दलिल (दलील) तारिख (तारीख) खोदा (खुदा) तागिद (ताकीद) दप्तर (दफ्तर) मुघल (मुगल) इंराज (अँग्रेज) आदि, गुजरातीमें इंग्लांड (इंग्लैण्ड) मुलक (मुल्क) मोगल (मुगल) खूबसुरत (खूबसूरत) आवरु (आबरू) दरज्जा (दरजा) अमदाबाद (अहमदाबाद) आदि तथा मराठीमें चावूक (चाबुक) कचेरी (कचहरी) मुकरोबा (मकरबा) इंग्रज (अंग्रेज) तघलख (तुगलक) आदि अनेकानेक शब्द विकृत रूपमें व्यवहृत हैं।

अन्तमें हम उर्दूको ही लेते हैं। क्या उर्दूमें अन्य भाषाओंके शब्द शुद्ध रूपमें व्यवहृत होते हैं? सौराज, सूरजपर्शाद, बिसेसर, देबी, बरहमन, बिचार आदि शब्द जो शुद्ध रूपमें क्रमशः स्वराज्य, सूर्यप्रसाद, विश्वेश्वर, देवी, ब्राह्मण, विचार हैं, विकृत रूपमें ही लिखे जाते हैं।

मुसलमानोंके शासन-कालमें देशमें फारसी भाषाका साम्राज्य था। उन दिनोंमें संस्कृतका राशि राशि साहित्य अनूदित होकर फारसीमें पहुंचा था। सम्राट अकबरने इस्लामेतर धर्म्मोंकी खोज की। इस खोजने संस्कृत साहित्यकी निधिसे फारसीका भण्डार भरनेके लिये ऐसा चस्का डाल दिया कि राजकुमार दाराने उपनिषदों तकका फारसीमें अनुवाद कराया। साहित्यिक ग्रन्थोंकी तो बात ही क्या, वैदान्तिक ग्रन्थों तकको फारसीमें लानेके लिये फारसी वर्णमालामें विशेष चिन्होंके सिरजनेकी आवश्यकता नहीं पड़ी। नकीब खाँ, अब्दुल कादिर, शेख सुलतान, मौलाना शेरी और फैजी आदिने रामायण, महाभारत आदि अनेक ग्रन्थ फारसीमें भाषान्तरित किये किन्तु रामायण, लक्ष्मण, रावण आदि शब्दोंके णकारके लिये फारसी वर्णमालामें किसी नये संकेतकी सृष्टि नहीं की। सारांश, फारसीमें संस्कृत साहित्यको लेनेके समय भी संस्कृत शब्दोंको यथार्थ रूपमें रखनेका प्रयास नहीं किया गया।

हमारे देशकी आजकल राज-भाषा अँगरेजी है। अगरेजी भी एक ऐसी भाषा है जिसमें अनेक भाषाओंसे शब्द लिये गये हैं, किन्तु क्या अन्य भाषाओंके शब्द अँगरेजीमें अपने यथार्थ रूपमें व्यवहृत होते हैं? कदापि नहीं। मथुरा, कलकत्ता, कानपुर आदि क्रमशः मट्रा, कैलकटा, कानपोर (Muttra. Calcutta, Cownpore) अंगरेजीमें लिखे जाते हैं, किस आधार पर? किसी आधारपर नहीं। केवल इस एक आधार पर कि अंगरेजी एक भाषा है, उसके पेटमें अन्य भाषाके शब्दोंको पचानेकी शक्ति है और है उसके हाथोंमें अन्य भाषाके शब्दोंको मनमाना रूप देनेका बल।

सारांश, संसारकी चाहे जिस सजीव भाषाको देखा जाय, हमारी समझमें यही निष्कर्ष निकलेगा कि प्रत्येक भाषा अन्य भाषाके शब्दोंको लेकर और उन्हें इच्छानुसार रूप देकर अपनेमें मिला लेती है, मूल रूपमें रखनेका कभी प्रयास नहीं करती। हमारी समझमें किसी भाषाके जीवनका यह चिन्ह है कि वह अन्य भाषाओंके शब्दोंको अपने पेटमें डाल सके और उनको पचा सके। यह धारणा हमारी ही नहीं, औरोंकी भी है,—

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

"वही भाषा शक्ति सम्पन्न और सजीव मानी जाती है जिसे दूसरी भाषाके शब्दोंको ग्रहण कर उन्हें अपने रंगमें रंगने, अपने ही साँचेमें ढालने और उन्हें पूर्णतया अपनानेकी सामर्थ्य होती है।"

—श्यामसुन्दर दास (छ० स० के सभापति)

जो हो, हमारी समझमें, अक्षरोंके नीचे विन्दु दे-देकर अरबी और फारसी शब्दोंको यथार्थ रूपमें दिखानेका असफल प्रयास किया जा रहा है। व्यवहारिकताके विचारसे यदि हिन्दी जगत् पर विशेष कर विहार और मध्य प्रान्त पर दृष्टि डाली जाय तो सबसे अधिक संख्या उन्हीं हिन्दी वालोंकी मिलेगी जो उर्दू नहीं जानते और जो न लिखनेमें विन्दुकी परवाह करते हैं और न बोलनेमें। वास्तव में विवादका यही निर्णय हो जाता है। व्यवहार हीमें पड़कर हस्त आदि शब्द हथ्थ होकर आज हाथ हो गये हैं। व्यवहार ही प्रधान है। व्यवहारसे ही भाषायें कहींसे कहीं जा पहुंची हैं और जा पहुंचेंगी। व्यवहारकी प्रबल प्रखर धारामें ये कृत्रिम बाँध टिक न सकेंगे। इस प्रयासमें संसारकी कोई भी भाषा सफल नहीं हुई, हिन्दीको भी सफलता नहीं मिल सकती।

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनको अवहेलनासे काम न लेकर अपनी गति-विधिपर विचार करना चाहिये, और अपनी कार्य-शैलीको अधिक व्यापक सजीव बनानेकी चेष्टा करनी चाहिये। एक-एक विवाद-ग्रस्त विषय हाथमें लेना चाहिये और उसे सजगता पूर्वक सुलझाना चाहिये। शँकाएं निवृत्त होकर युक्ति-युक्त प्रमाणों और उपयुक्त तर्क वितर्कके आधार पर कोई एक मार्ग निश्चित हो जाना चाहिये, और अपनी-अपनी डफली अपना-अपना राग छोड़ सभ्यता के नामपर पढ़े-लिखे लोगोंको उसी निर्णयका अनुसरण करना चाहिये।

कोई कारण नहीं है कि बुद्धि-संगत, उचित, न्याय-निर्णयके सामने हठ और दुराग्रह मस्तक न झुका दे और यदि ऐसा न हो तो फिर सम्मेलन, सङ्गठन और सहकारिताका अर्थ ही क्या होगा?

निष्ठुर यह लेरे!

(रचियता—श्री शंकरचरण लाल श्रीवास्तव "फूल")

कब का हूं ठाढ़ द्वार, निष्ठुर यह लेरे! कृपा की पुनीत दृष्टि, आज फेर देरे !!
कभी का खड़ा निहाल, गूँथ रहा पुष्प-माल; उँगली दीं छेद सभी, अपनी हित तेरे। कब !!
प्रेम की पवित्र-गन्ध, रूप-शुभ्र रूप-चन्द्र; भक्ति से पगे प्रसून, तू ना तज देरे। कब !!
आश का विचित्र ताग, बन्धन विश्वास लाग; नैन-युगल भक्त ठाढ, तनिक ध्यान देरे। कब !!
गंगा इव शुद्ध नीर, धो रहा इसे अधीर; ऐसी प्रिय भक्ति भेंट, है ना तज तेरे। कब !!
ले ले उपहार-साज, कर दे उपकार काज; तप्त-हृदय आज नेक, शीतल कर दे रे। कब !!

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्रीपुरमें प्राप्त महा जयराज देवकी मुद्रा

(लेखक—पण्डित लोचनप्रसाद पाण्डेय)

छत्तीसगढ़का प्राचीन नाम महा कोसल था। उस समय उसकी राजधानी "श्रीपुर" में थी। श्रीपुर वर्तमान रायपुर जिलेमें आरंगसे २२ मील उत्तर-वाहिनी महानदीके पूर्व तट पर है। अब उसका नाम 'सिरपुर' पड़ गया है और वहां कटीले वृक्षोंका भयङ्कर वन लगा हुआ है, जहाँ व्याघ्र भल्लूक और चीते आदि हिंसक पशु विचरण करते पाये जाते हैं। यदि वहाँ श्री गन्धर्वेश्वर महादेवका मन्दिर और "लक्ष्मण-देवाला" नामक ईंटोंका विशाल और मनोमुग्धकर सुर-सदन विद्यमान न होते तो आज केवल "सिरपुर" नामके कारण, उसे कोसलकी सुरम्य राजधानी प्राक् परमेश्वरकी पुरी "श्रीपुर" माननेमें लोग सन्देह करते।

'श्रीपुर' कितना प्रख्यात स्थान रहा है एवं उसकी समृद्धि कितनी बढ़ी-चढ़ी हुई थी, इसका पता "लक्ष्मणदेवाला" के निकट एकत्र किये हुए प्रतिमा-समूहके दर्शनके बिना नहीं लग सकता। गणेशजी, शिवजी, विष्णु भगवान, गौतम बुद्ध आदिकी भीमकाय प्रस्तर-मूर्तिओंकी निर्माण-कला और उनके सौन्दर्य और भाव-अभिव्यक्तिको देखकर आश्चर्य-चकित हो जाना पड़ता है। सच है:—

श्रीपुर! यद्यपि नाहिं तुअ, सो श्री सम्पत्ति आज।
चकित होत लखि तदपि तोहि, पण्डित सुकवि सुजान॥

'श्रीपुर' में सैकड़ों गगनचुम्बी हर्म्य और प्रासाद रहे होंगे। अब भी पद पद पर वहाँ भग्नावशेष मन्दिरों और भवनोंके चिन्ह देख पड़ते हैं। श्रीगन्धर्वेश्वर मन्दिरके स्तम्भोंमें कई शिला-लेख अब भी विद्यमान हैं।

यहाँ जो सबसे बड़ा शिलालेख "लक्ष्मण-देवाला" में मिला था, वह आज कल रायपुरके अजायब घरमें सुरक्षित है। उसकी लिपि "कुटिल" नामक नागरी लिपि है जो आजसे १००० वर्ष पूर्व इस देशमें प्रचलित थी। हजारों शिवलिङ्ग श्रीपुरमें आप देख सकेंगे। बुद्ध भगवान तथा श्रीदुर्गाजीकी भी मूर्तियाँ वहाँ देखनेमें मिलेंगी। पाण्डुवंशीय या सोमवंशीय राजाओंके राजचिन्ह "गजलक्ष्मी" के चित्र मन्दिरोंके द्वारकी शिलाओं पर अङ्कित मिलेंगे। सारांश, श्रीपुर प्राचीन वस्तुओंका आकर है। वहाँ ३०-४० हजार रुपये व्यय कर कोई खुदाईका काम करे तो ऐतिहासिक महत्वकी अमूल्य वस्तुएं आविष्कृत होंगी, इसमें सन्देह नहीं।

ऐसे महत्व-पूर्ण ऐतिहासिक स्थानके सम्बन्धमें छत्तीसगढ़का शिक्षित समुदाय सामान्य ज्ञान भी नहीं रखता, यह कितने दुःखकी बात है। जापान जैसे उन्नत और शक्तिशाली द्वीपसे हजारों कष्ट और असुविधाएँ सहन कर जापानी पुरातत्वज्ञ विद्वान् श्रीपुरके दर्शनार्थ उपस्थित हो उसका मान वर्द्धन करें, पर रायपुर, बिलासपुर और दुर्गकी डिस्ट्रिक्ट कौंसिलोंके सभापति महोदयगण एवं वकील वारिस्टर मण्डलको उसकी "स्थिति" का भी ज्ञान न हो, यह हमारे नेतृत्व धारण करनेवाले सम्पन्न व्यक्तियोंकी विद्याभिरुचिका कैसा अच्छा प्रमाण है!!

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

भले ही जापानी विद्वान्‌की श्रीपुर-यात्रा पर कोई कवि हर्ष प्रकट करे और लिखे कि :—

प्राक् परमेश्वरकी पुरी, विद्या-कला निधान।
गौड़ ओढ़ त्रिकलिंग सह, मगधराज अभिमान ॥
पठवत अजहू तव निकट, कोविदवर जापान।
यह सुनि लखि काको हृदय, लहहि न हर्ष महान ॥

पर इससे क्या ? यह घटना यों है कि प्रसिद्ध बहु-भाषाविद् पण्डितप्रवर श्रीहरनाथ दे (Librarian Imperial Library, Calcutta) से परिचय-पत्र लेकर एक जापानी विद्वान् महाकोसलकी राजधानी 'श्रीपुर' के दर्शनार्थ रायपुर मार्ग-से वहाँ गया था। पर उस विद्वानकी श्रीपुर-यात्राका विवरण कहीं छपा हुआ देखनेमें नहीं आया।

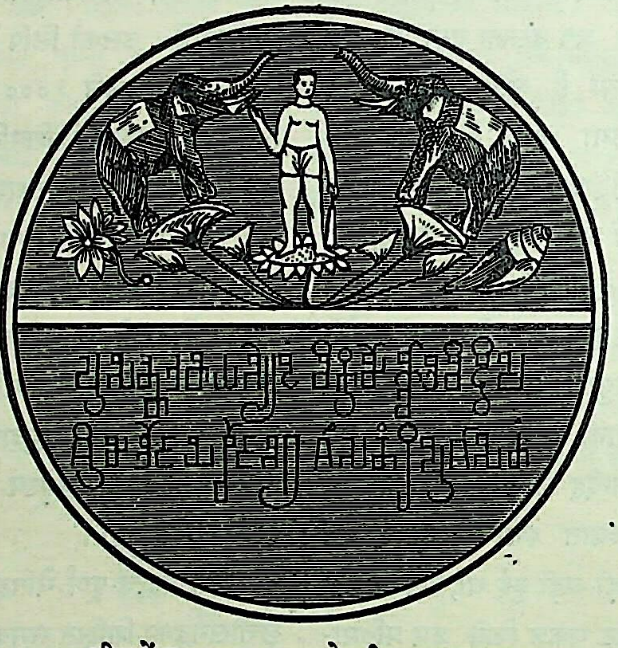

श्रीपुरमें प्राप्त महा जयराजदेवकी मुद्रा या मुहर।

इतनी भूमिकाके पश्चात् अब हम अपने प्रकृत विषय पर आते हैं। श्रीपुरके वर्तमान् तालुकदार श्रीयुत बाबू रामरतनलालजी अग्रवाला महोदयके निकट एक ताम्र-शासन है। यह ताम्र-शासन 'श्रीपुर' के वर्तमान अधिपतिके अधिकारमें है, अतः हम उसे श्रीपुरमें प्राप्त ताम्र-शासन कहते हैं। वह ताम्र-शासन उन्हें एक लोहारसे प्राप्त हुआ था, जो निकटके गाँवमें रहता था। हमने जब गत अप्रेलके महीनेमें उसका दर्शन किया, तब वह रायपुरके पण्डित वंशीधरजी दुबेके पास था। ताम्र-शासनकी मुद्रा (Seal) ताम्र-पत्रोंसे अलग थी। तीन पत्रोंमेंसे प्रथम पत्र खण्डित अवस्थामें है। ताम्र लेखकी लिपि सन्दूकनुमा (या box headed character) है। यह ताम्र-शासन "शरभपुर" वाले राजवंशका है। "शरभपुर" का अबतक कुछ पता नहीं लग सका है। रायबहादुर हीरालाल साहब इसे 'श्रीपुर' का नूतन या परिवर्तित नाम बतलाते हैं। डाक्टर राजेन्द्रलाल मित्र महोदय वर्तमान् सम्बलपुरको "शरभ-पुर'' मानते हैं और कुछ लोग "सारंगढ़" को शरभपुर माने जाने के पक्षमें हैं, क्योंकि वहाँके राजपरिवारमें एक इसी वंशका ताम्र-शासन विद्यमान है। हमारी रायमें तो महानदीके तट पर शवरीनारायण क्षेत्रके निकट जो "सरवा" नामक गाँव है, उसे ही प्राचीन "शरभपुर" मानना चाहिए या कि फिर गाँगपुर स्टेटके सरबगढ़ जमींदारीके मुख्यस्थान "सरबगढ़" को प्राचीन शरभपुरका प्रतिनिधि जानना चाहिए। अबतक इस वंशके चार ताम्र-शासन मिले थे :—

पहला—रायपुरमें। इसकी मुद्राके अक्षर बिलकुल घिस गए हैं।

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दूसरा—आरङ्गमें। इसकी मुद्राके बहुतसे अक्षर नष्ट हो गए हैं।

तीसरा—सारंगढ़में। इसमें मुद्रा ही नहीं है।

चौथा—खरियारमें। इसकी मुद्राके अक्षर साफ-साफ हैं।

रायपुर, आरङ्ग और खरियारवाले ताम्र-शासन नागपुरके अजायब घरमें हैं। सारंगढ़ वाला ताम्र-शासन वर्तमान सारंगढ़-नरेशके निकट है। हमने इन चारोंको ध्यान पूर्वक देखा और पढ़ा भी है।

गतवर्ष रायगढ़ स्टेटमें हमें इसी वंशके "श्री प्रसन्नमातृ" राजाकी एक रौप्य-मुद्रा (Coin) प्राप्त हुआ था, जो छत्तीसगढ़ गौरव-प्रचारक-मण्डली, बिलासपुरके संग्रहालयमें है। इस वर्ष अप्रेलमें हमारी "श्रीपुर-यात्रा" के अवसर पर हम लोगोंको (श्रीयुत बाबू सुखनन्दन लाल बी० ए० एल० एल०

साल्हे पाली (रायगढ़ राज्य)में प्राप्त श्रीप्रसन्न-मातृकी रौप्य मुद्रा या सिक्का।

बी० वकील रायपुर एवं श्रीयुत रामचन्द्र नरहर बी० ए० रायपुर) दो और ताम्र-शासन इसी राजवंशके मिले। एक आरंगके श्री भागीरथी सोनकरके निकट और दूसरा श्रीपुरके तालुकदार महोदयके पास, जिसकी मुद्रा (Seal) इस लेखका वर्णित विषय है। श्री भागीरथी सोनकर वाला ताम्र-शासन उसके पिताके समयसे गत ५०-६० वर्षोंसे उसके यहाँ हैं। उसमें तीन पत्र हैं और उसकी गजलक्ष्मी चित्रांकित मुद्रा एक ताम्र-कड़ीके द्वारा पत्रोंसे जुड़ी हुई है। वह महासुदेव राजाके शासनके पञ्चम वर्षमें शरभपुर से प्रचारित किया गया था। उसमें 'त्रिसड्ड' इलाकेके "शिवलिङ्गक" नामक ग्रामके ब्राह्मणोंको दान देनेका उल्लेख है। ताम्र-पत्र पर जिसने लेखको अङ्कित किया, उसका नाम है "द्रोणसिंह"। मुद्रा चक्राकार है। उसके अर्ध भागमें खड़ी हुई गजलक्ष्मीकी मूर्ति है, जिन्हें दोनों ओरसे दो गज अभिसिक्त कर रहे हैं। एक ओर शंख और अन्य ओर कमल या पद्मका चित्र है। नीचे दो पंक्तियोंमें यह श्लोक है:—

प्रसन्नार्णव संभूत मान मात्रेन्दु जन्मनः
श्रीमत्सुदेव राजस्य स्थिरं जगति शासनम् ॥

अर्थात्, प्रसन्नमातृ (रूपी समुद्रसे उत्पन्न)
|
मानमातृ (रूपी चन्द्रमा) के पुत्र
|
सुदेवराज

का यह शासन जगत्में स्थिर रहे।

इस आरंगमें नवाविष्कृत ताम्रशासनकी मुद्रा और खरियारमें प्राप्त ताम्रशासनकी मुद्राके श्लोक एक ही से हैं। इन दोनों परसे 'शरभपुर' के राजाओंकी वंशावली इस प्रकार है :—

प्रसन्न
|
मानमातृ
|
महा सुदेव राज

रायगढ़ राज्यमें जो रौप्यमुद्रा (Silver Coin) मिला है, वह चक्राकार है। उसपर शंख, चक्र, गदा के चित्र हैं और एक मूर्ति भी है। बीचमें सन्दूक-नुमा लिपिमें "श्री प्रसन्नमातृ" लिखित है। भारतमें इस लिपिमें अङ्कित मुद्रा अभीतक आविष्कृत नहीं हुई है। इस मुद्राके आविष्कारसे "मानमातृ" के पिता

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

"प्रसन्नमातृ" के ऐतिहासिक व्यक्ति माने जानेमें कोई सन्देह ही नहीं रह जाता।

श्रीयुत G. Dubrenil ने अपने Ancient History of the Deccan नामक ग्रन्थके पृष्ट ७६ पर "शरभपुरके राजे" शीर्षक अध्यायमें इन राजाओंका आनुमानिक वंशवृक्ष दिया है, जो यों है :—

प्रसन्न
(राष्ट्रकूट वंशज)
|
मानमातृ
(मानपुरके नरेश)
|
सुदेव राज
|
जयराज — भविष्य
|
अभिमन्यु

अर्थात् इस वंशवृक्षके अनुसार जयराजदेव सुदेवराजके पुत्र माने गए हैं, पर श्रीपुरमें आविष्कृत ताम्रशासनकी मुद्रा (Seal) परके श्लोकसे निर्विवाद रूपसे सिद्ध हो रहा हैं कि 'जयराज' देव सुदेवराजके चचा या पितृव्य थे। 'श्रीपुर' वाले शासन की मुद्रा ठीक उसी प्रकार है, जैसे कि शरभपुरीय राजोंकी अन्यान्य मुद्राएं हैं। वह चक्राकार है। उसके पूर्वार्धमें खड़ी हुई गजलक्ष्मी, उसके दाहने बायें दो गज और शंख तथा पद्मके चित्र हैं। नीचेकी ओर दो पंक्तियोंमें एक श्लोक है।

श्लोकके अक्षर अत्यन्त सुरक्षित दशामें हैं और श्लोक पूरा पूरा पढ़ा जा सकता है। वह यों है :—

प्रसन्न-तनयस्येदं विक्रमा क्रान्त विद्विषः
श्रीमतो जयराज्यस्य शासनं रिपुशासनं

वैरियोंको अपने विक्रमसे जीतने वाले प्रसन्न मातृ-राजाके तनय (पुत्र) श्रीमान् जयराजका यह शासन रिपुओंके द्वारा भी मानने योग्य शासन (आज्ञापत्र) है।

आरम्भमें जयराजदेवका जो ताम्र-शासन प्राप्त हुआ था और जो आज कल नागपुरके 'अजायब घर" में है, उसकी मुद्रा (seal) पर जो श्लोक है, उसके अक्षरोंमेंसे बहुतसे अक्षर नष्ट हो गए हैं। इससे ठीक ठीक कुछ पढ़ा नहीं जाता। पर वह ताम्र-शासन महा जयराजके शासनके पांचवें वर्षमें शरभ-पुरसे प्रचारित किया गया था और उसके खोदने वालेका नाम था,—"अचलसिंह"

महा जयराजने भी महासुदेवराज की भाँति शरभपुर' को राजधानी मानकर अपने राज्यका शासन किया था। पर यह अज्ञात है कि 'शरभपुर' किस राज्यकी राजधानी था।

यदि 'शरभ' नामक कोई राज्य या भूखण्ड था, तो वह कहाँ था? एरन (जिला सागर सी० पी०) के एक शिलालेखमें वर्णित है कि गोपराजके पिता माधवका व्याह शरभके राजाकी पुत्रीसे हुआ था। यह सन् ५१०-५११ ई० के आसपासकी बात है। सन ई० की ५ वीं और ६ वीं सदीके मध्यमें इन शरभपुरीय राजाओंका शासन-काल माना गया है। शरभ-पुरीय राजे प्रसन्न, मानमातृ, जयराय और सुदेवराजको कोसल (महाकोसल) के शासक माननेके लिए कोई प्रमाण नहीं है। हाँ, उन्होंने "पूर्व्वराष्ट्र" में ग्राम दान दिये हैं। पर पूर्व्वराष्ट्र क्या कोसलका पूर्व्वीय भाग था? इधर कोसलेश्वर तीवरदेवके राजिम और फुलझर (बलोदा) वाले ताम्र-शासन

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भी सन्दूकनुमा लिपिमें लिखित हैं और वे "श्रीपुर" से प्रचारित किये गये थे।

'श्रीपुर' के ताम्र-शासनकी मुद्राके श्लोकसे शरभपुरीय राजाओंकी वंशावलीका शुद्ध रूप यों होगा :—

प्रसन्नमातृ (इनकी रौप्यमुद्राप्राप्त हुई है)
- मानमातृ
  - सुदवराज (इनके चार ताम्र.शासन प्राप्त हुए हैं)
- जयराज (दो ताम्र-शासन प्राप्त हुए हैं)

कमल-कोषमें पड़े मृत मधुपके प्रति

(रचयिता—श्री सुमंगल प्रकाश)

दिया अलि, तुम्हें प्रेमने मान।

किसने जगमें जन्म लिया है, जिसने जीता काल कराल।
इच्छित मृत्यु हुई, पर, जिसकी, ऊंचा हुआ उसीका भाल॥
उसीका जगमें हुआ बखान। दिया अलि तुम्हें प्रेमने मान॥ १॥

भाग्यवान हो बड़े भ्रमर तुम, अन्त समय पाया वर वास।
इस सरोजिनीकी गोदोमें सुखसे छोड़ा अन्तिम श्वास॥
स्नेह-रस-सीकरका कर पान! दिया अलि० ॥२॥

भोली-भाली प्रिया तुम्हारी तुमको सुखसे सोया जान।
लिये गोदमें अहो मोदसे बैठी है कबसे अनजान॥
हृदयमें लगा तुम्हारा ध्यान। दिया अलि ॥३॥

नित्य रातमें तुम्हें छिपाती है मुख पर निज अंचल डाल।
करते करते उसे प्रतीक्षा बीत गया है कितना काल॥
विकल है सुननेको तव गान। दिया अलि० ॥४॥

तुम्हें जगानेका, उत्सुक हो, करती है जब कभी विचार।
हिल हिलकर फिर रुक जाती है, सुखसे सोया तुम्हें निहार॥
किया अपने सुखका बलिदान। दिया अलि० ॥५॥

दुःख दूर करनेमें उसका—हो, पर, तुम असमर्थ नितान्त।
कैसी करुणामय क्रीड़ायें करता है यह क्रूर कृतान्त॥
न है इसकी कृतिका अवसान। दिया अलि० ॥६॥

है अब मधुप! हमारी भी बस, अन्तिम एक यही अभिलाष।
सुखसे प्रेमीकी गोदोमें छोड़े अपना अन्तिम श्वास॥
खेलती हो मुखपर मुसकान। दिया अलि० ॥७॥

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रतिभा और साहित्यिक बाज़ार

(लेखक—श्रीगुलाब राय एम० ए०)

वर्तमान युगमें ज्ञानका विस्तार और गाम्भीर्य दोनोंकी ही वृद्धि हुई है। यहां तक कि अब यह प्रश्न उपस्थित होने लगा है कि आजकल नवीनताके लिये स्थान है या नहीं? एक प्रकारसे यह ज्ञानकी वृद्धि, प्रतिभाके विकासमें सहायक है और एक प्रकारसे वाधक। ज्ञानकी वृद्धिके कारण प्रतिभाके लिये नये नये द्वार खुल गये हैं, बुद्धिकी गतिके लिये दुर्गम घाटियोंके सुगम पथ बन गये हैं, और सहस्रों वर्षके अनुभवी पथ-प्रदर्शक हमको शंका-स्थलोंसे बचानेके लिये उपस्थित हैं। जो ज्ञान ऋषियोंने निर्जन वनोंकी कठिनाइयां सहकर प्राप्त किया था, वह आज दो आनेकी पुस्तकमें आराम कुर्सी पर बैठे बैठे मिल सकता है। जिस ज्ञानके प्राप्त हो जानेके हर्षोल्लासमें युनानी पण्डित अरस्तू 'यूरीका' 'यूरीका' (अर्थात् "पालिया पालिया") कह कर नाचता फिरता था, आज उस ज्ञानको मेट्री-क्यूलेशनके विद्यार्थी प्राप्त कर अपनेको तनिक भी गौरववान नहीं समझते—सहस्रों वर्षोंका उपार्जित ज्ञान हमारे पद-तल पर लुंठित हो रहा है और वह हमारे विचार-पथमें अग्रसर होनेमें सहायक बन सकता है। प्रत्येक ओरसे हमारे विचारोंको उत्तेजित करनेके लिये नये नये शब्द सुनाई पड़ रहे हैं। यदि हममें बुद्धि है और प्रतिभा है तो चाहे जिस सूत्रको लेकर आगे बढ़ सकते हैं। लोग हमारे साथ चलनेको तैयार हैं। उनके अनुभव भी हमसे गुप्त नहीं रह सकते। प्रतिस्पर्द्धाका उत्तेजना हमको अपने पथ पर सोने नहीं देगा। राजा-महाराजाओंके दरबारकी भी प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती। समाचार-पत्र और समालोचक आपकी कृतियोंको प्रकाशित कर आपकी ख्यातिको विस्तार देनेके लिये तैयार हैं। प्रतिभा और स्फूर्तिके जितने बाह्य साधन हैं वे भी सब सुलभ हैं। जो भौतिक सुख मुग़ल सम्राटोंके लिये दुर्लभ थे, वे आजकल साधारणसे साधारण मनुष्यको सुलभ हैं।

उपर्युक्त कारण जो प्रतिभाके विकासमें सहायक हैं वही बाधक भी हैं। यद्यपि प्राचीन कालमें एक पहियेका आविष्कार कर लेना वायुयानके आविष्कारसे कठिन और महत्वपूर्ण था, तथापि उस समय पहियेका प्रभाव ही पहियेके आविष्कारमें सबसे बड़ा सहायक था। आजकल किसी बातका अभाव देखना इतना सहज नहीं, जितना कि पहले था। प्रतिस्पर्द्धाका भाव जो उन्नतिमें सहायक है, वही उन्नतिमें बाधक भी है। जिस कामको मनुष्य निर्द्वन्दतासे कर सकता था, अब उसके लिये उसे बात बातमें द्वन्द-युद्ध करना पड़ता है। एक क्षेत्रमें बहुतसे कार्य्यकर्ताओंसे सहायता भी मिलती है, और कार्य्यमें बाधा भी पड़ती है। आलस्यके लिये स्थान मिल जाता है। शक्ति केन्द्रस्थ नहीं रहती और मन चारों ओर चलायमान होने लगता है। बहुत सी नवीन बातें, जो हमारी सूझमें आती हैं, पीछेसे

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पुरानी निकल आती हैं और हमको यही पछताना पड़ता है कि हमारा जन्म दो वर्ष पूर्व क्यों न हुआ। यदि ऐसा, होता तो अमुक विचारके जन्मदाता होनेका श्रेय हमको मिल जाता। आजकल ज्ञानकी वृद्धिमें प्रतिभाकी जांच भी कठिन हो गई है। इन सब बातोंके देखते हुए, प्रतिभा, बाजारमें कौड़ियोंके मूल्य बिकनेकी वस्तु नहीं। सच्ची प्रतिभा आजकलके भी युगमें जब कि सब प्रकारके साधन वर्तमान हैं, दुर्लभ है। जिस प्रकार यह कहना पड़ता है कि "साधवो नहिं सर्वत्र चन्दनं न वने वने," इसी प्रकार यह भी कहना पड़ेगा कि 'प्रतिभा न जने जने।' अब यह देखना चाहिये, कि वर्तमान साहित्यिक-बाजार प्रतिभाकी उत्पत्तिमें कहां तक सहायक है। वस्तुकी ग्राहकता उसके उत्पादनमें सहायक होती है। जिस वस्तुकी मांग नहीं, उसकी उत्पत्ति भी कम होने लगती है। मांग भी कई प्रकारकी होती है। यदि सच्ची प्रतिभाकी मांग होगी, उसका विस्तार होगा। यदि झूठी प्रतिभाकी मांग होगी, तो वह ओलेकी भांति विलीन हो जावेगी। ऐसे प्रतिभाशाली तो थोड़े ही होते हैं, जो जनताकी रुचिको बना सकें। प्रायः लोगोंको जनताकी रुचिके अनुकूल चलना पड़ता है। यही प्रतिभाके लिये घातक होती है। आजकलके साहित्यिक-बाजारमें जनताकी रुचिका ही प्राधान्य है। प्रतिभा और स्फूर्तिको भी, जिनका मूल स्वतन्त्रतामें है. जनताकी रुचिकी ओर झुकना पड़ता है। लीक छोड़कर शायर, सिंह और सपूत चलते हैं, किन्तु आजकल लीक छोड़कर चलनेमें पेट में चूहे एकादशी करने लगते हैं। रवीन्द्र बाबूकी भांति ऐसे थोड़े ही भाग्यशाली सज्जन हैं, जिनको कि रुपयेकी परवाह नहीं; रुपया स्वयं उनके पास दौड़ा चला आता है। बहुतसे प्रतिभाशाली लोगों की प्रतिभा साहित्यक-बाज़ारकी मांगमें कुण्ठित हो जाती है। वे चलना चाहते हैं एक ओर, बाजार की मांग उनको लेजाती है दूसरी ओर। इसमें उनकी शक्तिका ह्रास हो जाता है, और वे भी साधारण श्रेणीमें आजाते हैं। जो रुचिके निर्माता बन सकते हैं, उनको आर्थिक-कठिनाइयोंसे दूसरोंकी रुचिकी पुष्टिमें योग देना पड़ता है। प्रतिभावान कवियोंको पत्रिकाओंकी कलेवर-पूर्ति द्वारा धनलाभके अर्थ कविसे समालोचक बनना पड़ता है और समालोचकोंको आख्यायिका लेखक। साहित्यके उज्वल भविष्यके लिये यह बात अत्यन्त आवश्यक है, कि सच्ची प्रतिभाका मूल्य आकार और परिणाम पर न रखा जाये वरन् गुण पर—

"चन्दनकी चुटकी भली, भलो न गाठी भरो कबार"

आकार और परिणामका मूल्य होनेसे उच्च साहित्य का ह्रास होने लगता है। लेखकोंको इस बातका ख़्याल होने लगता है, कि कोई बात चटपटी लिख दी जावे, फिर चाहे उसका स्थाई मूल्य रहे या नहीं। चटपटी बातमें सच्ची प्रतिभा नहीं। कोई मनुष्य यदि एक पुष्पित मार्ग ढूंढ़ ले, तो उसका मूल्य तब तक नहीं है, जब तक कि यह न देख लिया जाये, कि वह पुष्पित मार्ग किसी राजपथमें जाकर मिल जाता है या नहीं। यही हाल चमत्कार पूर्ण रचनाओंका है। दो एक चमत्कार पूर्ण वाक्य प्रतिभाके द्योतक नहीं। हमको यह देखना चाहिये, कि वह बात जिस लक्ष्यसे लिखी गई वह लक्ष्य कैसा है और फिर उस लक्ष्यकी पूर्ति हुई या नहीं? जो बात कही गई, उसका पूरा

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

निर्वाह * हुआ है या नहीं। निर्वाह केवल लेखकी भीतरी बातोंमें नहीं होना चाहिये, वरन् लेखकके अन्य विचारोंसे भी होना चाहिये। बहुतसे लोग इस बातका विचार नहीं करते, कि हमने एक स्थानमें एक बात कही है और दूसरे स्थानमें दूसरी। बहुतसे लेखक आर्त मनुष्यकी भाँति जो बात जहांसे अच्छी मिल गई, उसे लेकर अपने लेखोंमें सम्मिलित कर देते हैं। संगति और निर्वाहका विचार नहीं करते। यह सच्ची प्रतिभा नहीं। जो स्वयं अपना विचार नहीं रखते, वे ही दूसरोंके प्रतिकूल विचारोंको सहज ही ग्रहण कर लेते हैं और इस तरह उस प्रतिकूलताका समन्वय नहीं होने पाता। ऐसी झूठी प्रतिभाका तिरस्कार करना चाहिये, जिससे कपूर और कपास एक भाव न बिक सकें। यह बात जभी हो सकती है, जब साहित्यिक-बाजारमें अच्छे परीक्षक हों। हमारे साहित्यका निर्माण साहित्यिक-बाजारके सर्राफ़ोंके हाथोंमें है। उनको धन कमानेके अतिरिक्त बाजारकी ख्याति और साखकी ओर भी ध्यान देना चाहिये। सच्ची और झूठी प्रतिभाको परखकर सच्ची प्रतिभाका उचित मूल्य देना चाहिये, जिससे कि प्रतिभाशाली लेखकोंको आर्थिक कठिनाइयोंके कारण, जनताको रुचिका दास न बनाना पड़े। एक सुगन्धित पुष्प सारे बनको सुवासित कर देता है, इसी प्रकार एक उत्तम पुस्तक सारे साहित्यका मस्तक गौरवसे उन्नत कर देती है। साहित्यिक-बाजारमें ऐसे ही रत्नोंका आदर होना चाहिये। यदि ऐसे रत्नोंका उचित मूल्य होने लगेगा, तो उनसे साहित्यिक क्षेत्र शीघ्र ही जगमगाने लगेगा। "गुण ना हिरानो गुण ग्राहक हिरानो है।"

* यह शब्द श्रीयुत निरालाजीका है।

कामना

(रचयिता—पण्डित अनूप शर्मा बी० ए० एल० टी०)

भावों के सुगंधित समीर के सुचालन से,
मोद का मृणाल मन्द मन्द हिलता रहे।
परम प्रशंसक मनोरम मराल -वृन्द,
मुदित महान हो विनोद मिलता रहे।
कोष में सुधा के अनुराग रस रंजित हो,
रसिक गुणज्ञ भृंग ही सा पिलता रहे।
मेरे मनोमानस में मुदित सदैव यह,
प्रेम पारिजात हो सरोज खिलता रहे।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoF-IKS

सरोज २

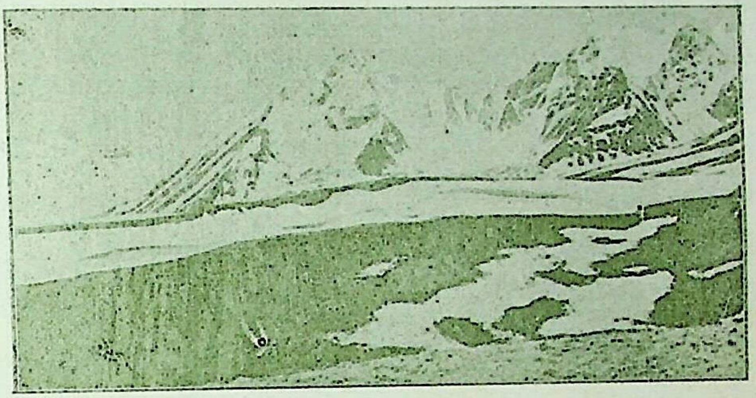

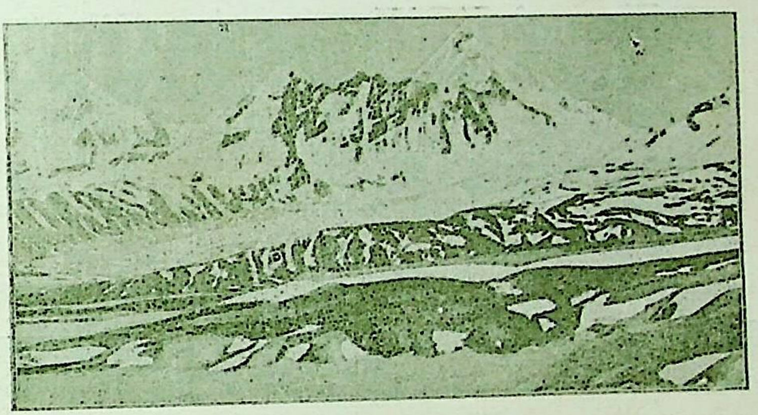

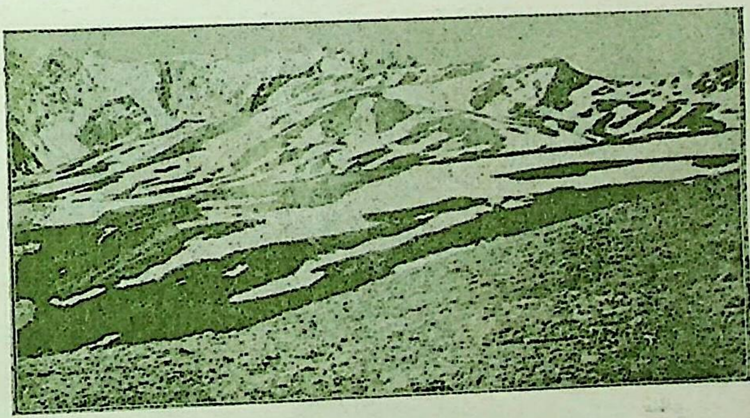

पीर पंचाल (काश्मीर) के कुछ दृश्य

Butnath Press, Calcutta.

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

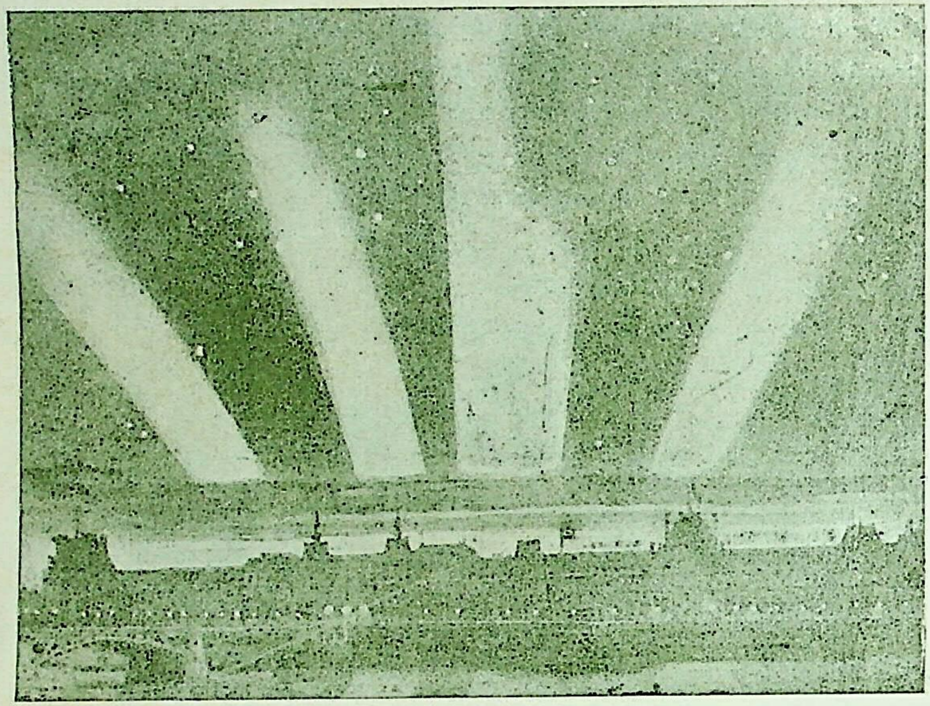

न्युयार्क बन्दर (अमेरिका)

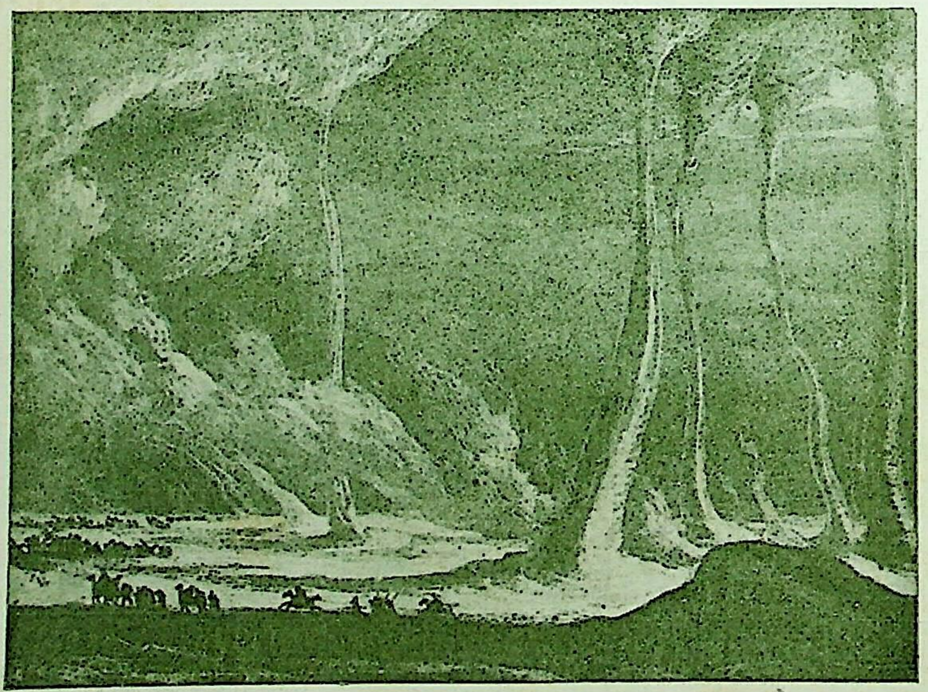

अरबका एक दृश्य

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आधुनिक खड़ी बोलीकी कविताकी प्रगति

(लेखक—श्रीकृष्णदेव प्रसाद गौड़, एम० ए०)

मा-नव-मस्तिष्कके विकासके साथ-साथ भाषा तथा साहित्यमें परिवर्तन होते जाते हैं। सजीवताका यही लक्षण है। हिन्दी कविता-कामिनीका जबसे भारतीय रंग-मंचपर प्रवेश हुआ है, विविध पट-परिवर्तन हुए हैं। कभी तो इसने प्राकृत-मिश्रित भाषाका रूप धारण कर रण-चण्डीका वेश बनाया, कभी व्रजभाषाकी सुन्दर सारी पहनकर नागर नटवरके संग नृत्य किया, और फिर खड़ी बोली रूपी आभूषणसे सुसज्जित होकर साहित्य जगतको जगमगा दिया।

यों तो उस समय भी खड़ी बोलीके अंकुर लगे हुए थे जब व्रजकी वीथियोंमें व्रजभाषा-वेली लहालहा रही थी। पर वह समय ऐसा न था जिससे सिंचित होकर वह अंकुर लहलहा सकता। भक्तिरसकी जो धारा बह रही थी वह व्रजभाषा तथा कृष्ण-काव्यके ही लिये उपयुक्त थी।

खड़ी बोलीका कविता-काल तीन युगोंमें विभाजित हो सकता है। सीतलसे पण्डित श्रीधर पाठक तक प्रारम्भिक काल, पाठकजीसे जयशंकर प्रसाद जी तक सरस्वती काल, तथा वर्तमान काल। प्रत्येककी अपनी अपनी विशेषता है। सीतलके पहले खुसरो, कबीर, नानक, रहीम, भूषण, ताज, सूदन, घनानन्दजीकी कविताओंमें खड़ी बोलीकी कुछ रचनाएं हैं। श्री आनन्दघनकी विरह लीलामेंसे कुछ पंक्तियां उद्धृत करता हूं।

सलोने स्याम प्यारे क्यों न आओ,
दरस प्यासी मरैं तिनको जियाओ।
कहाँ हौ जू कहाँ हौ जू कहाँ हौ,
लगे ये प्रान तुमसों है जहाँ हो।
—इत्यादि

खुसरो, अथवा रहीमकी रचनाएँ आपने सुनी अथवा देखी होंगी। वास्तविक खड़ी बोलीका समय आजसे दो सौ साल पहले सीतलसे आरम्भ होता है। सीतलका जन्म सं० १७५० के लगभग माना गया है। आप वैष्णव धर्मावलम्बी टट्टी सम्प्रदायके महन्त थे। उर्दूकी कविता तथा हिन्दीकी खड़ी बोलीकी कविता लगभग एक ही कालसे आरम्भ हुई। आरम्भमें दोनोंकी भाषा एक-सी थी। धीरे धीरे मुसलमानोंने अरबी फारसी शब्दोंके जालमें फंसाकर उसे उर्दू करार दी और संस्कृतके शब्द बाहुल्यने उसे हिन्दी कहा। उर्दू के पहले कवि वलीका शेर :—

जग हंसाई न कर खुदा सों डर,
बे वफाई न कर खुदा सों डर।

अथवा मुबारक शाहके शेर—

नैनसे नैन जब मिलाय गया,
दिलके अन्दर मेरे समाय गया।
तेरे चलनेकी सुन:खबर आशिक,
यही कहता मुआ कि हाय मुआ।

साफ हिन्दी कविताएँ मालूम होती हैं।

सीतलने चार भागोंमें गुलजार चमन नामक ग्रन्थ लिखा है जिसकी मुद्रित प्रतियां नहीं हैं। आपकी कवितामें लालित्य है और विशुद्ध खड़ी बोलीमें यह ग्रन्थ लिखा गया है। फारसी तथा व्रजभासाके शब्द अवश्य आये हैं, पर भाषा-शैली आजकलकी है। श्रीकृष्ण भगवानके मुखपर काले घुघराले केश-पाशको देखकर कवि कहता है:—

पंकज पर भौंरे मधुमाते
ससि पर अहिपतिकी भीरें हैं।
मखतूल नीलमनि चारु
चौंर उपमा नहीं आवत नीरें हैं॥
के वरक तिलई पर सीतल
ये खैंच दई तहरीरें हैं।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

या लाल बिहारीके मुखपर
क्या कहर ज़ुल्फ जंजीरें हैं ॥

प्रेमीका हृदय किस मूल्यपर बिकता है, आप फरमाते हैं:—

हम दर्द मन्द मुशताक़ रहे
तुझ बिन उर दूजा दुरा नहीं,
तीखी चीतवनका जख्म लगा
दिलमें सो अबतक पुरा नहीं।
तुझ हुस्न वलख में ए दिलवर
कुछ हम लोगोंका कुरा नहीं,
विहँसनके मोल बिकाते हैं,
'सीतल' इन मोलों बुरा नहीं।

उपमाओंकी लड़ी कैसी मुक्तावलीसे सजा रखी है:—

मुख शरद चन्द्रपर श्रम सीकर
जगमगें नखत गन जोती से,
कै दलगुलाबपर शबनमके हैं
कनिका रूप उदोती से।
हीरेकी कनियां मन्द लगें
हैं सुधा किरनके गोती से,
आया है मदन आरती को,
धर हेम थारपर मोती से।

इनके पश्चात् खड़ी बोलीके दूसरे कवि मुन्शी सदासुख निसार दिहलवी हुए हैं जिनका जन्म सं० १८०० का है। आपकी कोई पुस्तक प्रकाशित नहीं हुई है। केवल ऐतिहासिक रचनाका अंश सर चार्लस ईलियटके "हिस्ट्री आफ़ इंडिया ऐज़ टोल्ड बाइ हर ओन हिस्टोरियन्ज़"की आठवीं जिल्दमें उद्धृत हैं। आपकी कविताएं भी हैं। हस्तलिखित पोथी इस समय मेरे पास न होनेसे स्मृतिसे केवल दो पंक्तियां लिखता हूं:—

खायी जिन मिश्री वे ही गूंगे होय बैठे,
और जिन्होंने न खायी सोही लज्जत बतावते।
जाना जिन लोगोंने दीवाना बने दुनियामें,
जिन्होंने न जाना वेही दाना हैं कहावते।

भगवत रसिकने भी जिनका जन्म सं० १७६५ के लगभग था, खड़ी बोलीमें कविता की है। परन्तु खड़ी बोलीकी उत्कृष्ट रचनाओंका रस एक दूसरे कवि पान कराते हैं। आप भी टट्टी सम्प्रदायके महन्त राधिका दासजीके उत्तराधिकारी थे। आपका नाम सहचरी शरण है। आप भी सांवले वंशी वालेके प्रेममदके मतवाले थे और भवबाधा हरनेवाली राधाके स्नेहमें पगे थे। आपका रचना काल सं० १८२० के लगभग माना गया है। आपकी भाषामें कहीं कहीं पंजाबी भाषाका भी पुट आ गया है। मनमोहनके ज़ोरपर आप संसारसे लापरवाह हो गये और किसीको कुछ नहीं समझते।

फक्कड़के टक्कर अब सबसे हला भला न हमारी;
दफ्तर फार खुशामदहूंका डार दिया उर भारी।
वे परवाह भये दुनियासे मेहर फकीरा धारी;
रसिक सहचरी सरन हमनसे मनमोहनसे यारी।

और कहते हैं:

उर अनुराग दोस्ताँ गुलसन चाह बहार चहाकर;
दिलाराम दिलदार प्यारकर सरस कलाम कहाकर।
सहचरी सरन दुआगो आशिक़ आशिर्वाद लहाकर,
सुखदकिशोरी गोरीका तू मरज़ीदार रहाकर।

फिर कहते हैं:—

हरदम याद किया कर हरिको दरद निदान करेगा;
मेरा कहा न खाली ऐदिल आनन्द कन्द करेगा।
ऐसा नहीं जहां बिच कोई लंगर लोग लरेगा;
सहचरी सरन सेरदा बचा क्या गजराज करेगा।

इसके पश्चात् खड़ी बोलीके दूसरे कवि श्री ललित किशोरीजी थे। आपकी रचनाएं अप्राप्य हैं। आपकी खड़ी बोलीकी रचनाएं रासधारियोंमें खूब प्रचलित हैं। आपका कविताकाल सं० १६२० के लगभग है। इश्कका खेल आप बतलाते हैं:—

जंगलमें हम रहते हैं, दिल वस्तीसे घबराता है।
मानुस गन्ध न भाती है मृग मरकट संग सुहाता है।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

चाक गरेबाँ करके दमदम आहें भरना आता है;
ललित किशोरी इश्क रैन-दिन ये सब खेल खिलाता है।

इतना ही नहीं खड़ी बोलीकी कविताका प्रचार धीरे धीरे बढ़ रहा था। कितने मुसलमान लेखक तथा कवि इसी खड़ी बोलीमें अपनी रचनाएँ रच कर सरस्वती माताके चरणोंपर अपना सर नत कर गये हैं। केतकीकी कहानी कहनेवाले सैयद इन्शा अल्लाहखाँने अपनी कहानीमें थोड़े से पद्य बनाये हैं। इस समयके एक उत्कृष्ट कवि नज़ीर अकबराबादी हैं, जिन्होंने रसीले रसखान तथा सहृदय मुसलमान कवियोंपर प्राचीन परिपाटी पकड़े हुए हिन्दू देवताओं तथा भारतीय विषयोंपर कविता की है। आपकी रचनाएं श्रद्धा और भक्तिके भावोंसे भरी हैं। एक बानगी देख लीजिये।

बजी जो मोहनकी बाँसरी वाँ तो
धुन कुछ उसकी अजब ही निकली;
पड़ी वह जिस जिसके कानमें भी
उसे सुध अपने बदनकी बिसारी।
भुलाई बन्शीने कुछ तो सुध बुध
उधर झलक जो स्वरूपकी थी;
हर एक तरफ़को, हर एक मकाँपर
झलक वह हरिकी कुछ ऐसी झमकी;
कि जिसकी हर एक झलकके देखे
तमाम बसती वह जगमगाई।

कवि समुदाय अपनी रचनाओंकी नवीन तरंगोंमें तो उठ ही रहा था पर यह ब्रजभाषा सरिताके बीच छोटी छोटी लहरियाँ थी। उनका प्रयास प्रशंसनीय है पर उनसे साधारण रुचिको उतनी उत्तेजना न मिल सकी, जितनी जनसाधारणने अपने प्रति दिवसके मनोरंजन नाच गाने रास इत्यादि संस्थाओंसे परोक्ष रूपसे इसमें सहायता दी। रासधारी, नौटंकी जोगीड़ा, लावनी आदि गानोंसे खड़ी बोलीका गढ़ दृढ़ करनेमें बड़ी सहायता मिली। इन्होंने इतने मजबूत मसालेसे खड़ी बोलीकी ईंटे जोड़ीं, कि सारा प्रहार निष्फल गया। जान-बूझकर लोग ऐसे प्रयोग नहीं करते थे, कि कविता खड़ी बोलीमें लिखी जाए। वह जनताकी रुचिके अनुसार उनके समझने योग्य भाषा काममें लाते थे। हाथरस वाले चिरञ्जीलाल और नथारामका श्रवण चरित्र, सांगीत चित्रकूट, लाला गोविन्दरामका सांगीत मैन-भैया, ओरईके पं० मातादीन चौबेका सांगीत पूरनमल, छदामा चरित्र, तथा हरिश्चन्द्रमें खड़ी बोलीको बहार देख लीजिये। पहले तीनमें ब्रजभाषा मिश्रित भाषा है और अन्तवाली पुस्तकोंमें विशुद्ध खड़ी बोली लिखी गयी हैं। पुस्तकें छपी हैं और इच्छुक पाठक पढ़ सकते हैं। केवल एक उदाहरण सांगीत हरिश्चन्द्रसे देता हूँ।

हरिश्चचन्द्रके सत्यसे ज्ञानी सुनी,
मंजु आसन सुरेन्द्रका हिलने लगा।
जाना मनमें कि राज्य हमारा गया,
सोच बस होके हाथोंको मलने लगा।
हुआ सत्यके भानुसे तेज सभी
पाप रूपी अन्धेरा खिसलने लगा।
सभी प्रजा आनन्दसे रहने लगी,
नया सृष्टिका रंग ढंग बदलने लगा।

आज लगभग सवा सौ सालके होते हैं, मिरजापुरमें रिसालगिरि तथा पश्चिममें तुकनगिरि हो गये हैं। जिन्होंने लावनीकी लहलहाती लता लगायी। जिनमें खड़ी बोलीके छन्दर छन्दर पुष्प खिले, जिनका सौरभ साहित्य-संसारमें सदा वास करेगा। तुकनगिरि तुर्राके तरानेमें ब्रह्मका निरूपण करते थे और रिसालगिरि कलग़ीकी छायामें मायाका राग अलापते थे। संभव है रिसालगिरिके शिष्य देवीसिंहके शिष्य बनारसीकी लावनी छननेका अवसर गुरुजनोंको मिला हो। इनकी मृत्यु सम्वत् १९५० में हुई। लावनीकी कविताएं अनेक छन्दोंमें रची गयी हैं। छोटी रंगत, बड़ी रंगत और बहरे तवील आदि मुख्य हैं। कविताएं मोहन और मुरलीके रसमें सराबोर हैं। दो एक छन लीजिये। छोटी रंगत :—

दिलमें पाये दीदार वो वंशी वटके,
शिर मौर मुकुट कटिसे जरीके पटके।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कहैं देवीसिंह हैं अजब खेल नटखटके।
कहैं बनारसी हम आशक नागर नटके।

लावनीकी कविताएं सरस तथा मनोमुग्धकारिणी होती हैं। कवि रूपकिशोरसिंहकी कविता 'शीशफल वर्णनका' एक टुकड़ा आपके सम्मुख रखता हूँ, देखिये कितनी चमक दमक है।

है शीश पै शीश फूल शोभित,
स्वरूप आभा अखण्डका है।
मनों भुजंगोंकी भूमिका पै,
निवास श्री मारतण्डका है।
सजा वो तैंने विचित्र भूषण कि,
जैसी भूषित तू सुन्दरी है।
खिला है जमुनामें पीत पंकज कि,
जिसमें दिनकरकी दुति भरी है।
ये फूल तेरेने आज उपमा,
गगनके गुरुकी हरन करी है।
कनक शिखरपर कि वासुकीने,
उगलके मस्तक पै मनि धरी है।
बनाया किसने ये फूल जिसमें,
प्रकाशमणि गण प्रचण्डका है।

इधर लावनी बाजोंने यह लय उड़ायी उधर लखनऊ वालोंने महफिलमें भी पुरानी भाषा छोड़ नवीन शैलीका अनुकरण किया। कदर पिया, सनद पिया, फरहत आदिने छोटे छोटे गाने रचकर जनताका हृदय मुग्ध कर लिया।

कदर पियाकी एक ठुमरी सुनियेः—

वारे बलमूने बहियां मरोर डारी।
कदर पिया तुम बड़े हो रसीले;
लपट झपट चुरियां तोड़ डाली सारी।...

फरहतकी एक रचना देखिये,—

मन कौन भरोसे फूला है,
सुख सम्पत्ति सब घड़ी दिन पलकी
तापर इतना करत मान,
मोरी सुन नादान क्यों फूला है।

जिस पुस्तकसे ये गीत लिये गये हैं, वह सम्वत् १९४६ की मुद्रित है। गाने इसके बहुत पहलेके बने हैं। खैराशाहका बारहमासा भी खड़ी बोलीकी साधरण कविकी रचना है, पर बहुत मशहूर है।

इस प्रकारसे इन गायकों तथा कवियोंने खड़ी बोलीकी कविताके लिये माग प्रशस्त कर दिया। विशेष विचारणीय विषय यह है कि इन कवियोंके कविता-कुंजमें पुष्पोंका रंग तो अवश्य बदला पर उसमें गन्ध वही पुरानी ही थी। वही ब्रजमें मुरलीको तान और वही राधाकी मुसकान, वही कालिन्दी कूल और वही कदम्बके फूल एक नये आवरणमें दिखायी देने लगे। पर पाठकजीके लिये नया मैदान तैयार हो गया। पाठकजीका आरम्भिक जीवन आगरेके पन्ना लावनीबाजके साथ बहुत कुछ बीता था। उसका प्रभाव उनकी कविता पर पड़ा। पाठकजीके पहले भारतेन्दुजीने खड़ी बोलीके विरोधी होते हुए भी खड़ी बोलीमें कुछ कविता रची थी। दशरथ विलाप 'कहां हो ए हमारे राम प्यारे' बहुत विख्यात है। उनकी दूसरी रचना सुनिये,—

अग्नि वायु जल पृथ्वी नभ इन तत्वोंहीका मेला है;
इच्छाकर्म संयोगी इञ्जन गारड आप अकेला है।
जीव लाद खींचत डोलत औ तन स्टेशन झेला है;
जयति अपूरब कारीगर जिन जगत रेलको रेला है।

सर फ्रेडरिक पिनकाटने लनन्दनसे खड़ी बोली नामकी एक पुस्तक प्रकाशित की है। यह पुस्तक सन् १७८७-८८ ई० में बाबू अयोध्याप्रसादने लिखी थी। आपके विचारसे हिन्दी-उर्दू एक हो भाषा है। आपने खड़ी बोलीकी कविताकी भिन्न-भिन्न शैलियां बनाई। मुन्शी स्टाइल, पण्डित स्टाइल तथा मौलवी स्टाइल इनमें मुख्य हैं। मुन्शी स्टाइलमें साधारण उर्दू के शब्द आते हैं, पण्डित स्टाइलमें तत्सम शब्दोंका आधिक्य है और मौलवी स्टाइलमें अरबी, फारसी शब्दोंका बाहुल्य। भारतेन्दु बाबूके समकालीन अनेक कवि ऐसे हैं जो साहित्य-संसारमें विख्यात नहीं हैं पर जिन्होंने खड़ी बोलीमें रचनाएं की हैं। उनकी रचनाओंकी बानगी उपर्युक्त पुस्तकमें है।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दो एक पाठकोंके लिये लिखता हूँ। अपने देशकी दुर्दशा पर (सन् १८७६ में) बाबू लल्ली प्रसाद लिखते हैं,—

दुर्दशा तेरी है जब ध्यान में आती एक बार,
आँसू आँखोंमें उमड़ आता है बन्ध जाता है तार।
सोच यों व्यग्र है करता कि न रहता है विचार,
सर्वथा जीसे बिसर जाता है जगका व्यवहार।
सोना स्वप्न होता है अच्छा नहीं अन लगता है।
शोक की आगमें भस्म होने बदन लगता है॥

यह समय बाबू हरिश्चन्द्रकी प्रतिभाप्रभासे चमक रहा था। वह ब्रजभाषाके उत्कृष्ट श्रेणीके कवि थे। अत्र तत्र खड़ी बोलीकी कविता होती थी। जिससे पता चलता है कि इस ओर कवियोंकी दृष्टि अब पड़ रही थी। राय सोहनलाल भारतकी प्राचीन छन्दरता पर कहते हैं:—

ए हिन्द तेरा वह रङ्ग कहां है,
पहला-सा तेरा वह ढङ्ग कहां है।
कर्तारने तुझको था बनाया,
वह रङ्ग वह रूप था दिखाया।
वह फूलसा आप ही खिले था,
उससे वह बनाव कब मिले था।
वह सादी अदा निपट भली थी,
हाँ सचके वह नूरसे खिली थी।

सन १८८१ की एक रचना बाबू महेशनारायण (पटना) की है।

सब्जीका बना था शामियाना
और सब्ज हो मखमली बिछौना
फूलोंसे बसा हुआ था वह कुञ्ज
था प्रीत मिलनके योग्य वह कुञ्ज
एक कुञ्ज
बहुत गुञ्ज,
पेड़ोसे घिरा था
झरनोंके बगलमें;
बिजलीकी चमक भी न पहुंचती थी जहाँ तक।
ऐसा वह घिरा था
जस दीप हो जलमें;
पानीकी टपक राह भला पावै कहाँ तक।

पंडित अम्बिकादत्त व्यास तक इसके प्रभावसे वंचित न रह सके। आप भी खड़ी बोलीकी कविताएं लिखा करते थे। आपका एक कवित्त देखिये।

अमृतके रसकी भरी-सी उस मुरलीको,
कब प्यारे आके मेरे सामने बजावेगा?
चढ़के कदम्बपर चारो ओर देख-भाल,
हाथको उठाके कब बच्छोंको बुलावेगा?
अम्बादत्त कविकी रसीली कविताको सुन,
मुकुट झुकाके कब फिर मुसकावेगा?
मुझसे गँवारकी पुकार बार बार सुन,
साँवले सलोने कब दरस दिखावेगा?

इससे पता चलता है कि यद्यपि अभी ब्रजभाषा ही कविता की भाषा थी, पर खड़ी बोलीका दरिया उमड़ चला था। बान्ध टटनेकी देर थी। सं० १९४३-४४ (सन ई० १८८६-८७) के लगभग कविताकी भाषाका विवाद चल पड़ा। दोनों ओरसे पत्रोंमें युद्ध छिड़ गया। उस समय पं० श्रीधर पाठकने 'जगत सचाई सार' नाम्नी कविता काशी पत्रिकामें छपवाई थी।

कहो न प्यारे मुझसे ऐसा, झूठा है यह सब संसार;
थोथा झगड़ा जीका रगड़ा केवल दुखका हेतु अपार।

उसके पश्चात आपने ऋतुसंहारका कुछ अंश अनुदित किया था। 'ग्रीष्म वर्णनका एक छन्द आप लोगोंकी सेवामें रखता हूँ—

खिलित नवकुसुमी रङ्ग सिंदूर का सा;
अतिपवन चलेसे वेग जिसका बढ़ा है।
निज तट विटपोंको, चोटियोंसे लिपटके;
विकट प्रबल ज्वाला दाह करती फिरै है।

इसके पश्चात पं० श्रीधर पाठकजीने खड़ी बोलीमें कविता आरम्भ कर दी। यद्यपि उन्होंने काश्मीर छखमा, तथा ऊजड़

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

गाम आदि ब्रज भाषामें ही लिखे हैं पर अब उनकी प्रवृत्ति खड़ी बोलीकी ही ओर अधिक थी। 'हरमिट' के अनुवादका एक छन्द सुनिये :—

प्राण पियारेकी गुणगाथा साधु कहाँ तक मैं गाऊँ;
गाते-गाते चुके नहीं वह चाहे मैं ही चुक जाऊँ।
विश्व निकाई विधिने उसमें की एकत्र बटोर;
बलिहारौं त्रिभुवन धन उसपर वारौं काम करोर।

'भ्रान्त पथिक' में आप लिखते हैं :—

जहाँ द्रव्य और स्वाधीनी है तहाँ चित्त सन्तोष नहीं;
जहाँ बनिजका वासा है ह्वां पर महत्व निर्दोष नहीं।

अथवा—

है स्वदेश प्रेमीका ऐसा ही सर्वत्र देश अभिमान;
उसके मनमें सर्वोत्तम है उसका ही प्रिय जन्म स्थान।

यह खड़ी बोलीकी सरल रचनाएं हैं। अनुवाद होनेपर भी मौलिकताकी छाप है। लावनी छन्दोंका प्रयोग किया गया है। कथानक काव्य है, परिपाटी पुरानी है। पाठकजी जो बहरे तवील बहुधा लिखा करते थे वह लावनी वालोंके संसर्गका फल था।

इसी समय सम्वत् १९४७ में कतिपय साहित्य सेवियोंके प्रयत्नसे सरस्वती पत्रिकाका प्रादुर्भाव हुआ और थोड़े ही दिनोंमें उसका सम्पादन आचार्य प्रवर पं० महावीर प्रसादजी द्विवेदीके हाथोंमें गया। यह द्विवेदीजीकी प्रौढ़ प्रतिभा तथा प्रचुर प्रयत्नका फल था कि हिन्दी-माताकी सेवा करनेके लिये अनेक सुपुत्र उद्यत हो गये। उनमेंसे कितनोंने स्वयं द्विवेदीजीके चरणोंमें शिक्षा-दीक्षा प्राप्त की है। द्विवेदीजी स्वयं कविता करते थे और उन्होंने होनहार कवियोंको प्रोत्साहित करके उनकी पावन प्रतिभा पूर्ण रूपसे विकसित करा दी। पं० नाथूराम शंकर शर्मा, रायदेवी प्रसाद पूर्ण और बाबू मैथिलीशरण गुप्त सरस्वतीकालके पथ प्रदर्शक कवि थे। अबसे कविता कामिनीके आराध्यदेव रति पति नहीं रह गये। देवताओंकी पूजा और उनकी प्रशंसामें कविकी वाणी पवित्र होने लगी। जहाँ कृष्णके कपोल और राधिकाकी कंचुकीपर कवि अपनी सारी कल्पना लेकर उलट पड़ते, वहां लक्ष्मी और सरस्वतीके पदपद्मोंकी आराधना होने लगी। प्राचीन वीरों और भारतीय नायक-नायिकाओंके गुणोंकी गाथा फिरसे गायी जाने लगी। कवित्त भी खड़ी बोलीमें लिखा जाने लगा। इस परिवर्तन कालकी दो एक रचनाएँ आप लोगोंके विनोदार्थ उपस्थित करता हूं,—

वसन्त सेनाकी आंखोंकी प्रशंसामें शंकरजी कहते।

तेज न रहेगा तेज धारियोंका नामको भी,
मङ्गल मयङ्क मन्द-मन्द पड़ जायंगे।
मीन बिन मारे मर जायंगे सरोवर में,
डूब डूब शङ्कर सरोज सड़ जायंगे।
चौंक-चौंक चारो ओर चौकड़ी भरेंगे मृग,
खंजन खिलाड़ियोंके पंख अड़ जायंगे।
बोलो इन अंखियोंकी होड़ करनेको अब,
कौनसे अड़ीले उपमान अड़ जायंगे।

पूर्णजी मा रमाकी प्रार्थना करते हैं :—

अज्ञानको तू रवि मालिका है,
सङ्कष्टको काल करालिका है।
दया समुद्रा जन पालिका है;
अनूप माता जल बालिका है।

यही समय था जब बाबू मैथिलीशरण गुप्तने भारत भारती लिखकर भारतकी भारतीको जागृत कर दिया। अब देवताकी ओरसे दृष्टि हटाकर देशके धुनमें कविता कोकिल अलापने लगी। प्राचीन संस्कृतिकी पुकार नवीन कानोंमें जाने लगी। राष्ट्रीय वीणाकी झनकार कानोंमें गूंज गयी। जो कविता लोरियां देकर 'कोमल कमलसे गुलाबनके दलसे' सुख शैय्यापर सुलाती थी, वह कहने लगी,—

पर हाय अब भी तो नहीं निद्रा हमारी टूटती,
कैसी कुटेवें हैं कि जो अब भी नहीं हैं छूटती।
बेसुध अभीतक हैं न जाने कौन ऐसा रस पिया,
देखा बहुत कुछ किन्तु हमने सब बिना देखा किया।

(मै० श० गुप्त)

कवि पुकारने लगा :—

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सबकी नसोंमें पूर्वजोंका पुण्यरक्त प्रवाह हो।
गुण शील साहस बल तथा सबमें भरा उत्साह हो।
सबके हृदयमें सर्वदा समवेदनाका दाह हो।
(मै० श० गुप्त)

गुप्तजीका देश-प्रेम भारत भारती ही तक नहीं रहा। और भी कविताओंको आपने राष्ट्रीय लड़ी पहनायी। एक स्थान. पर कहते हैं—

जिस पृथ्वीमें फले हमारे पूर्वज प्यारे,
उससे हे भगवान रहें हम कभी न न्यारे।
लोट-लोटकर वहीं हृदयको शान्त करेंगे।
उसमें मिलते समय मृत्युसे नहीं डरेंगे।
उस मातृभूमिकी धूलमें जब पूरे सन जायंगे।
होकर भव-बन्धन मुक्त हम, आत्मरूप बन जायंगे।

आपका किसानोंका क्रन्दन पढ़कर किस मुर्देका हृदय नहीं स्पन्दन करने लगता। हिन्दू तथा गुरुकुल काव्य भी आपके राष्ट्रीय हृदयके चित्र हैं। पं० गयाप्रसाद शुक्लजीने त्रिशूलके उपनामसे सुन्दर राष्ट्रीय भावोंसे विभोर कविताओंकी माला से हिन्दी साहित्यको शृङ्गारित किया है। गुप्तजीने कविता सरितामें राष्ट्रीयताकी जो लहरियां उठायीं उसे त्रिशूल, पं० माधव शुक्ल आदिने उत्तुङ्ग तरङ्ग-माला बना दी।

इसी कालमें हमारे पूज्यवर पं० अयोध्यासिंहजी उपाध्याय ने प्रिय प्रवास नाम्नी पुस्तक खड़ी बोलीमें प्रकाशित की। इसे खड़ी बोलीका पहला महाकाव्य कहे जानेका सौभाग्य प्राप्त है। संस्कृत छन्दोंमें यह ग्रन्थ बड़े बड़े समासों सहित पद्योंमें है फिर भी ललित, प्रसाद गुण सम्पन्न तथा ओजपूर्ण है। कविता अतुकान्त है। रहीमका मदनाष्टक भी इसी प्रकार संस्कृत वर्ण वृत्तोंमें अतुकान्त पदोंमें लिखा गया था। इसके पहले बाबू जयशंकर प्रसादजीने मात्रिक छन्दोंमें तुकान्तहीन कवितायें इन्दुमें प्रकाशित करायी थी। उसका विवेचन आगे होगा। प्रियप्रवास सभी हिन्दी प्रेमियोंने पढ़ा होगा। ग्रन्थ बहुत ही लोकप्रिय है, केवल एक छोटा-सा उद्धरण देता हूं। राधाकी सुन्दरता सुनिये,—

रूपोद्यान प्रफुल्ल-प्राय कलिका राकेन्दु बिम्बानना,
तन्वंगी कलहासिनी सुरसिका क्रीड़ा कला पुत्तली,
शोभा वारिधिकी अमूल्य मणिसी लावण्य लीलामयी।
श्रीराधा मृदुभाषिणी मृगदृगी माधुर्य सन्मूर्ति थीं।

* * * *

नाना भाव विभाव हाव कुशला आमोद आपूरिता,
लीला लोल कटाक्ष पात निपुणा भ्रू भंगिमा पण्डिता,
वादित्रादि समोद वादनपरा आभूषणा भूषिता।
राधा थीं सुमुखी विशाल नयना आनन्द आन्दोलिता।

श्याम स्वप्न नामक एक और महाकाव्य इसी ढंगपर निकला है। पर दोनोंमें भेद वही है जो मिश्रीकी डली और गुड़के ढोंकेमें होता है।

अब खड़ी बोलीकी कविताने जनता पर पूरा अधिकार प्राप्त कर लिया और ब्रजभाषाका प्रयोग कवितामें लगभग लुप्त हो गया। इसी "सरस्वती"-कालमें अनेक कवि हो गये। उनमें कितने ही अच्छे और कितने साधारण थे। कितने जीवित हैं और सम्भव है उनकी प्रौढ़ रचनाओंने अभी प्रेसका मुंह न देखा हो। पं० रामचरित उपाध्याय भी इसी परिपाटीके कवि हैं। दो छन्द सुन लीजिये। सरस्वती माताका वरदान जिसे नहीं मिला और जिसे मिल गया उन दोनोंमें क्या अन्तर है।

मन! रमा, रमणी, रमणीयता,
मिल गयीं यदि ये विधि योगसे।
पर जिसे न मिली कविता सुधा,
रसिकता सिकता सम है उसे।
सुविधिसे विधिसे यदि हैं मिली,
रसवती सरसीव सरस्वती।
मन! तदा तुझको अमरत्वदा,
नवसुधा वसुधापर ही मिली।

अब हम वर्तमान कालकी ओर आते हैं। आजकल कवियोंके दो बड़े भेद हैं। एक प्राचीन स्कूलके एक नवीन स्कूलके। प्राचीन स्कूलके वे ही कवि हैं जो सरस्वती कालके हैं अथवा उनकी शैलीका अनुकरण करते हैं। उनका वर्णन हो चुका है।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आजकलका साहित्यिक वातावरण इस बातका प्रत्यक्ष प्रमाण है कि कविता अपने समयकी प्रतिछाया है। शान्ति और अशान्तिकी लहरें बड़े वेगसे मानव हृदय-सागरमें टकरा रही हैं। भारतमें ही नहीं, पश्चिम और पूरबमें चीनसे पेरू तक युवक हृदय उद्वेलित हो उठा है। आज युवक हृदयकी अनुभूति कुछ और ही है। इनका हृदय विचित्र ही चोटसे बेचैन है। यह नहीं कहा जा सकता कि युवकोंमें जागृतिकी ज्योति फैल गयी है, पर इतना अवश्य है कि लोग अपना ध्येय पानेके लिये राह टटोल रहे हैं। आज युवक जिस पीड़ासे अधीर हो रहे हैं, उसी हृदय-पटको खोलकर कवि शब्दों और वाक्योंमें प्रतिबिम्बित कर रहा है। इस बातको थोड़ी देरके लिये छोड़ दीजिये कि आजकलकी कविता अच्छी है या बुरी। इतना अवश्य मानना पड़ेगा कि कवितामें परिवर्तन हो रहा है। शृङ्गारका सजा सद्म छोड़कर कविता कामिनिने देवताओंके पावन मन्दिरमें प्रवेश किया और वहाँसे राष्ट्रीय वेदी पर बलि होनेके लिये आयी। अब वातावरणमें परिवर्तन हो गया। देशमें सामाजिक तथा राजनैतिक जागृति हो गयी। जो हृदय कन्याकुमारीसे चलकर हिमाचलकी उत्तुङ्ग शृङ्गोंसे टकराकर भारतभूमिमें रह जाता था वह आज अखिल विश्वमें भ्रमण-कर विमोहित हो, उल्लासमें मस्त हो जाता है। दासताकी शृङ्खलाने अपनी झनझनाहटसे हमें जगाकर उद्विग्न कर दिया। दासताकी ठोकरोंने हमारे हृदय-पर आघात किया है। ऐसी अवस्थामें अन्धविश्वासका गढ़ चूर्ण होने लगता है। धर्म और कलाके बन्धनोंको मनुष्य पहले तोड़ना चाहता है।

कविके अनुसार मनुष्य जब रोता है तो वह रागसे नहीं रोता।

> तार बिगड़ा हुआ हैं दिलका सभालूं कबतक,
> लयकी पाबन्द कहां तक मेरी फरयाद रहे।

स्वतन्त्रताका जब झोंका आता है तब सारे नियमोंकी अवहेलना की जाती है। आजकल काव्यरचनामें जो स्वतन्त्रता अभी आयी है जिसे आप उच्छ्रृङ्खलता कहते हैं परन्तु उसके मूलमें यही कारण है—यही मनोवृत्ति है। पुराने बन्धन तोड़नेमें मनुष्यकी आत्माको आनन्द होता है, यह यौवनका चिन्ह है। पुरानी शैलीके परिपोषक और नवीन स्कूलवालोंमें यह भेद तो गौण है कि शैली अलग अलग है। मुख्य भेद यह है कि एक यौवनकी तरंगोंमें हिलोरें ले रहा है जिसके कानोंमें स्वतन्त्रताकी बीणाकी झनकार आ रही है, दूसरा अपना जीवन-काल समाप्त कर रहा है। नवीन कविताके प्रवर्तक होनेका सौभाग्य काशी निवासी बाबू जयशंकर प्रसादजीको है। जो कविता-जान्हवी स्वर्गरूपी ब्रजधामसे भगवान कृष्णका चरण छूकर प्रवाहित हुई, वह काशीमें शंकरके प्रसादसे प्रसादमयी होकर नवीन रूप धारणकर, कलरव-कलित कलोलिनी हो रही है। प्रसादजीने प्राचीन परिपाटी पहले तोड़ी। संस्कृत छन्दोंमें तो अतुकान्त कविता होती थी। मात्रिक छन्दोंमें अतुकान्त लिखनेका रिवाज न था। भारतीय-भाषाओंमें पहले पहल बंगलामें माइकल मधुसूदनने मिलटनके समान ब्लेंक वर्समें मेघनाद वध लिखा। बंगला भाषामें उसका बड़ा आदर है। हिन्दीमें प्रसादजीका प्रेम-पथिक पहला अतुकान्त प्रबन्धकाव्य है। भाव हमको कहाँ उठा ले जाते हैं:—

> "प्रियतम मय यह विश्व निरखना
> फिर उसको है विरह कहाँ,
> फिर तो वही रहा मनमें,
> नयनोंमें प्रत्युत जगभरमें ;
> कहाँ रहा तब द्वेष जगतमें,
> क्योंकि विश्व ही प्रियतम है।"

नवीन कविताएँ मुख्यतः अतुकान्त होती हैं। इसलिये नहीं कि सरलता पड़ती है अथवा प्रास खोजनेका प्रयास कवि नहीं करना चाहता। परन्तु यह कि यह विधि बन्धनोंसे मुक्त है। यह मार्ग स्वाधीनताका मार्ग है। नवीन कवि अधिकांश मुक्तक छन्द लिखते हैं। प्रबन्ध काव्य भी लिखते हैं, तो कहानी भी हृदयकी किसी भावनाकी छाया होती है। केवल घटनाका वर्णन नहीं होता। आत्मानुभूतिकी व्यञ्जना होती है।

इनके विषय होते हैं प्रकृतिकी सौन्दर्यमयी सृष्टि, आत्माके सुख दुखके अनुभव, 'एबस्ट्रैक्ट' भावनाएँ, तथा ऐसे हो आत्माभिव्यंजित 'सबजेक्टिव' विचार। संसारके केवल स्थूल पदार्थों की निन्दा अथवा प्रशंसा इनकी परिधिसे परे हैं। यही कारण है कि नवीन स्कूलकी कविताएँ साधारणतः लोगोंकी

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

समझमें नहीं आती और इसलिये लोग इसकी विडम्बना करते हैं। वाह्य पदार्थों का वर्णन सरलतासे हो जाता है और सब लोग समझ लेते हैं पर मनके विचारोंको स्पष्ट कर देना कठिन है और उसे वही समझ सकता है जो स्वयं वैसा अनुभव कर सकता हो।

फ्रेंच लेखक ह्यूगो लिखता है कि "मास्तिष्कके भावमय विचारोंका सीमाबद्ध वर्णन करना प्रायः असम्भव है। शब्दोंमें एक अछविधा रहती है। विचारोंकी अपेक्षा उनके अर्थकी सीमा अधिक निश्चित रहती है। सभी विचारोंकी सीमान्त रेखाएं अनिश्चित रहती हैं। शब्दोंमें यह बात नहीं रहती। आत्माका स्पष्ट पहल सदा शब्दोंसे परे रहता है। भाषणकी परिधि रहती है, विचारोंकी नहीं।"

इसलिये ऐसे कवि जो आत्माकी अनुभूति चित्रित करना चाहते हैं, जहाँ तक शब्दोंको पाते हैं, उनमें अपने विचारोंका चित्र उपस्थित कर देते हैं। पर छन्दरसे छन्दर शब्दावली द्वारा भी वे केवल विचारोंका आभास ही दिखला पाते हैं। यदि कोई अपने हृदयकी पीड़ाका वर्णन करना चाहे, तो जो व्यथा उसे हो रही है उसे कितना ही लिखे तो भी कागजपर कहाँ तक दिखला सकता है ? हाँ साधारण मनुष्योंसे अच्छा वर्णन अवश्य कर सकता है। और जिसे जितना ही ऐसी पीड़ाका अधिक अनुभव होगा, वह उतनी ही कविकी रचनामें वेदनाकी गहराई देखेगा।

यह एक विशेष कारण है, जिससे नवीन स्कूलकी कविताएं साधारणतः समझमें नहीं आतीं। ऐसी सारी कविताओंको व्यंग्य मिश्रित हास्यमें लोग 'छायावाद' के नामसे सम्बोधित करते हैं। यहाँ पर दो बातें स्पष्ट कर देना चाहता हूं। छायावाद रहस्यवाद नहीं है। कुछ कवि छायावादी हैं जिनका वर्णन आगे करूंगा। बहुतसे ऐसे 'कवि' हैं जो छायावादियोंका अनुकरण करते हैं पर न हृदयमें वह अनुभूति है न वह दर्द—केवल शब्दोंका निरर्थक जाल बिछा देते हैं। मैं इन्हें मिथ्या छायावादीके नामसे पुकारूंगा। छायावादका अर्थ समझनेमें लोगोंने भूल की है। रहस्यवादके साथ इसे सान दिया हैं। हिन्दीमें रहस्यवादका कुछ रहस्य पं० रामचन्द्रजी शुक्लने उदुघाटन करनेका प्रयास किया है। जायसीकी भूमिका पृष्ठ १६६ में आप लिखते हैं, अतः हिन्दी साहित्यमें "रहस्यवादी कवि सम्प्रदाय" यदि कोई कहा जा सकता है तो इन कहानी कहनेवाले मुसलमान कवियोंका ही।" इससे अनुमान होता है कि केवल कहानियों अथवा प्रबन्ध-काव्योंमें ही रहस्यवाद हो सकता है। काव्यके इतर भेद भावात्मक मुक्तक छन्दोंमें नहीं। इसी व्याख्यानमें—पृष्ट ७१ पर आप व्याख्या करते हैं"—जहाँ जहाँ प्रबन्ध-प्रस्तुत वर्णनमें आध्यात्म पक्षका कुछ अर्थ भी व्यंग हो, वहाँ वहाँ समासोक्ति ही माननी चाहिये।" और "जहाँ कथा प्रसंगसे भिन्न वस्तुओंके द्वारा प्रस्तुत प्रसंगकी व्यंजना होती हो, वहाँ 'अन्योक्ति' होगी।" इन अवतरणोंसे यह स्पष्ट हो जाता है कि कथा प्रसंगसे फुटकर ऐसी व्यंजनाओंको वह केवल अलंकारकी ही दृष्टिसे देखना चाहते हैं। यदि कथानक सम्पूर्ण नहीं है, केवल भावका ही अवलम्बन करके किसी 'एबसट्रेक्ट आइडिया'से जब कवि अपनी प्रतिभाका सामंजस्य करता है तो शुक्लजीके कथनानुसार वह काव्य रहस्यवाद न होकर कोई अलंकार विशेष हो जाता है। रहस्यवादको मूलमें कुछ न माननेके लिये ही यह चेष्टा प्रतीत होती है। भाव विशेष वस्तु बनकर जब एक या अधिक छन्दोंमें लिखा जाता है तो मानो उसका पवित्र रहस्यवाद होनेका हक जाता रहता है। फिर वह अन्योक्ति, समासोक्ति, अतिशयोक्ति हेतूत्प्रेक्षा के नामोंसे पुकारा जाय, पर उसे रहस्यवाद कहना पाप होगा, चाहे वह प्रधान वस्तु अध्यात्मिक प्रेमकी ही ध्वनि क्यों न हो। पृष्ठ ६७ में ईश्वरोन्मुख प्रेम शीर्षकमें अपने रहस्यवादकी व्याख्या करते हुए आप कहते हैं, "क्या संयोग, क्या वियोग, दोनोंमें कवि प्रमके उस आध्यात्मिक स्वरूपका आभास देने लगता है, जिससे जगतके समस्त व्यापार उसकी छायासे प्रतीत होते हैं" फिर आपने पृष्ठ ४६ में लिखा है कि "पर जायसीने जिस प्रकार मनुष्यके हृदयमें पशुपक्षियोंसे सहानुभति प्राप्त करनेकी संभावना की है, उसी प्रकार पक्षियोंके हृदयमें सहानुभूतिके संचार की भी। उन्होंने सामान्य हृदय तत्वकी सृष्टि-व्यापिनी भावना द्वारा मनुष्य और पशु पक्षी सबको एक जीवन-सूत्रमें बद्ध देखा है। रामके प्रश्नका खग-मृग जवाब नहीं देते, पर नागमतीकी दशापर एक पक्षीको दया आती है।" इसमें यह विचारना होगा कि जहाँ तक कवि केवल उस विशेष दशाको दिखला देना चाहता है, जिसमें एक सचेतनका जड़को सचेत समझ

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कर प्रबन्धकी पूर्णतयाके लिये वह चेतनाका आरोप मान लेता है, वहाँ कविका उद्देश्य केवल उस हृदयकी असाधारण स्थितिका वर्णन करना है। कवि स्वयं जड़को सर्वत्र सचेतम नहीं मानता, किंतु निबद्ध नायककी ही वह दशा है। शुक्लजी भी इसे उन्माद कहते हैं। किन्तु जब जड़ भी वैसी ही सहानुभूति प्रकट करने लगे, तब तो उसे वही कवि लिख सकता है जो उसे उन्माद न मानकर साधारण वस्तुस्थिति समझता है।

जहाँ कहीं कविकी यह दृष्टि हो, वहीं रहस्यवादका आरम्भ है। शुक्लजीके मतानुसार उन मुसलमान कहानी लेखक-कवियोंमें ही हम रहस्यवादका आरम्भ और अवसान नहीं मान सकते। हम उनसे आदरणीय विरोध रखते हुए यही कहेंगे, कि जहाँ उस अध्यात्म प्रेमकी ध्वनि चाहे वह संयोगात्मक या वियोगात्मक हो, चाहें एक छन्दमें ही या पचीस पक्तियोंमें हो. अपनी झलक दिखला दे, तस हृदयपर अपनी छाया डाल दे जिसमें 'सामान्य हृदय तत्वकी सृष्टिव्यापिनी भावना' का उन्मेष हो जाय, उसे रहस्यवाद ही कहेंगे। अन्योक्ति वा समासोक्ति नहीं।

इस विषय पर अधिक मैं यहाँ नहीं कहना चाहत। केवल यह संकेत करना चाहता हूँ, कि रहस्यवाद वही है जिसे अंग्रेज़ोमें मिस्टिसिज्म कहते हैं। यह यनानी मिस्टिकोस शब्दसे निकला है जिसका अर्थ 'रहस्यपूर्ण मत' 'सीक्रेट डाक्ट्रिन' है। इसकी व्याख्यामें एक विद्वान् लिखता है,— 'इनवालविंग ए सेक्रेड और सीक्रेट मीनिंग हिडेन फ्राम दि आइज़ आव दि औरडिनरी रीडर ओनली रिवील्ड टु ए स्प्रिचुअली एनलाइटेयड माइण्ड अर्थात् रहस्यवादमें किसी ऐसे गुप्त अथवा पूत सिद्धान्तका समावेश होता है, जो साधारण पाठकोंके नेत्रोंके सम्मुख नहीं आ सकता। ऐसे ही लोग उसके अर्थकी महत्ता समझ सकते हैं, जिनके हृदयमें आत्माकी जागृति हो।" *

आजकल कुछ लोगोंकी धारणा हो गयी है, कि जितनी कविताएँ नवीन कवि लिखते हैं, रहस्यवाद या छायावाद होती हैं। रहस्यवाद लिखना सबका काम नहीं है। जो विराट् ईश्वरको कण कणमें देखता है, जिसके हृदय-मानसमें पर-ब्रह्मकी ज्योति झिलमिल झिलमिल करती है, वही रहस्यवाद लिख सकता है। जिसका हृदय अदृश्य तारों और प्रकृतिसे बंधा हुआ है, जिसका हृदय पत्तों और पुष्पोंकी वेदनासे प्रभावित होता है, उनके हास्यमें सम्मिलित होता है, प्रकाश रश्मियोंके नृत्यसे जिसका हृदय नाच उठता है, वही छायावादी कवि है। नवीन स्कूलके कवियोंमें यह भावनाएं हैं। पहले मैं थोड़ा उदाहरण उन रचनाओंका सुनाता हूं, जिनकी पंक्तियोंमें रहस्यवादकी झलक है। वह जहां प्रेम संयोग-वियोगमें साम्य दिखलाती है, मैं वहीं रहस्यवादकी सत्ता मानता हूं। प्रेमकी परिधि 'प्रसाद' जीने कितनी बढ़ा दी है। कहते हैं:—

'इस पथका उद्देश्य नहीं है श्रान्त भवनमें टिक रहना,
किन्तु पहुंचना उस सीमा पर जिसके आगे राह नहीं,

और देखिये। कवि नये रूपमें विश्वको देख रहा। 'सामान्य हृदय-तत्वकी विश्वव्यापिनी भावना' द्वारा अनुप्राणित होकर कवि कह उठा।

प्रकृति मिला दे विश्व प्रेम में,
विश्व स्वयं ही ईश्वर हैं' (प्रसाद)

कविकी दृष्टि कितनी विशाल हो गयी। कहता है :—

'खड़े विश्व जनतामें प्यारे हम तुमको पाते हैं'
'ऐसे तुम सर्वत्र सुलभको पाकर भला कौन खोता'
(प्रसाद)

इन्हीं भावोंके भव्य मानस-सरोवरमें निमज्जित होकर 'एक भारतीय आत्मा' कहते हैं :—

किन घड़ियोंमें तुझको झाँका तुझे झाँकना पाप हुआ,
आग लगे वरदान निगोड़ा, मुझपर आकर शाप हुआ।
जाँच हुई नभसे भूमण्डल तकका व्यापक माप हुआ,
अगणित बार समाकर भी छोटा हूं यह संताप हुआ।
अरे अशेष शेषकी गोदी तेरा बने बिछौना सा,
आ मेरे आराध्य खिला लूं मैं भी तुझे खिलौना सा।

क्या कवि ब्लेकका भाव, जैसे,— *

* Involviug a sacred or secret meaning hidden from the eyes of the ordinry reader, only revealed to a spiritually enlightened mind.

* To see a world iu a grain of sand.
And a heaven in a wild flower;
Hold Infinity in the palm of your hand.
And Eternity in an hour.

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

टु सी ए वर्ल्ड इन ए ग्रेन आव सैण्ड,
एण्ड ए हेवेन इन ए वाइल्ड फ्लावर,
होल्ड इर्नाफ़िनिटी इन दि पाम आव योर हैण्ड,
ऐण्ड इटर्निटी इन ऐन आवर,

पं० माखनलालजीकी कवितामें भरा नहीं है ?

सुमनजीकी ये पंक्तियां क्या उस आध्यात्मिक ध्वनिसे पूर्ण नहीं है, जो विराट् स्वरूपकी व्यंजना है।

मुझमें तू होकर विलीन प्यारे विराट हो जाने दे,
वह अभेद भावोंको लिपटा आलिंगन पा जाने दे।
उस अनन्त आलिंगनमें 'तेरा, मेरा' मिल जायेगा,
विस्मृतिकी असंख्य स्मृतियोंमें, 'मैं ही मैं' हो जायेगा।

निरालाजीकी निम्नलिखित पंक्तियां उसी असीमके मिलन का राग अलापती हैं। धारा कहती है—

"जवानी की प्रबल उमंग,
जा रही मैं मिलनेके लिये—पारकर सीमा—
प्रियतम असीमके संग"

कवि उस महान् सर्वस्व रसपूर्ण रचयिताकी खोजमें है। कहता है—

जीवनकी इस सरस सुरामें,
सखि है किसका मादक राग ?
फूट पड़ा तेरी ममतामें,
जिसकी समताका अनुराग ?
किन नियमोंके निर्मम बन्धन,
जगकी संसृतिका परिहास—
कर, बन जाते आकुल क्रन्दन,
सखि वे किसके निर्दय पाश। (निराला)

उपर्युक्त सभी पंक्तियाँ विश्व-रचयिताके विराट स्वरूपको व्यंजना है, उसका दिग्दर्शन है। अतएव यह रहस्यवादकी रचनाएँ हैं।

छायावादका विशेष वर्णन करनेमें लेख बढ़ जायेगा। इस सम्बन्धमें केवल इतना कहना है, कि छायावादसे उसी कविताका अभिप्राय समझना चाहिये जिस अर्थमें अंग्रेजी शब्द 'रेफ्लेकटिव पोएट्री' बोधक होते हैं। यह कविता आत्माभिव्यंजित भावोंको लिये होती है। हृदयकी भावनाओंको कवि वर्णन करता है। बाह्य प्रकृतिमें भी कवि अपने हृदयकी विचारधारा बहती हुई देखता है, वह प्रकृतिमें मिल जाता है और प्रकृति उसमें मिल जाती है। दूसरी विशेषता यह है कि उसके विचार स्थूल जगतसे ऊपर होते हैं। वर्णन करते करते वह सब स्थानोंसे हट कर अपने आत्माके प्रासादमें विचरने लगता है और उसीमें लीन हो जाता है। ऐसी कविताएँ भी साधारणतः कम समझमें आती हैं।

महात्मा गाँधी अपनी 'आत्मकथा' में लिखते हैं, "हममें जो सद्भाव सोए हुए हैं, उन्हें जाग्रत करनेकी शक्ति जिसमें है, वही कवि है। सब कवियोंका असर सबों पर एक सा नहीं होता। क्योंकि सबमें सारी सद्भावनाएँ समान परिमाणमें नहीं होतीं।"

छायावादी कविताएँ क्यों नहीं समझमें आतीं, इसका समाधान महात्माजीने भले प्रकार कर दिया।

इस शैलीकी कुछ उत्कृष्ट रचनाएँ आपको सुनाकर आगे बढ़ता हूँ। श्री सियारामशरण जी वीणासे कहते हैं:—

हे साधन-सिद्धि ललित वीणे,
तू है कलकण्ठ कलित वीणे।
मेरे जीवनमें कर निवास,
तेरे निक्कण का—सा सुन्दर।
आनन्द भरित जीवन धरकर।
क्षण भरमें ही करके विकास,
फैला जाऊँ आनन्द हास।

हृदयमें बैठकर कौन मसोस रहा है, पता नहीं। इसी अज्ञातको पकड़ने द्विजजी चलते हैं—

कौन तू उर निकुञ्जमें बैठ,
मृदुल स्वरमें गा-गा यह गीत,
जगाता निष्ठुरतासे छेड़,
बता क्यों मेरा सुप्त अतीत ?
थिरकने चञ्चल गतिसे आह,
लगी हृत्कम्पनपर वह तान,

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

विकलताके चरणोंपर झुका,
रहा कर क्यों मेरा बलिदान ?
"देख अपने ही भीतर पैठ,
कौन मैं" कह:इतनी ही बात।
बात-हत तरुसा कर विच्छिन्न,
मुझे क्यों चला कहाँ अज्ञात ?

इसी प्रकार अनेक कवि हैं जिनकी रचनाएँ इसी शराबमें मतवाली हैं।

प्राचीन कविता तथा नवीन खड़ी बोलीकी कवितामें एक और भेद है। प्राचीन कवि प्रकृतिका वर्णन करते थे, तो किसी वस्तु विशेषकी प्रशंसा कर देते थे। उनकी प्रकृतिकी कविता केवल उद्दीपन विभावके लिये होती थी। प्रकृति उनके लिये कोई जीवित वस्तु न थी। वर्डसवर्थका यह कहना:—*

वन इम्पल्स फ्राम ए वर्नल वुड
मे टीच यू मोर आव मैन,
× आव मोरल ईविल ऐण्ड आव गुड
दैन आल दि सेजेज़ कैन,

उनके लिये कोई अर्थ नहीं रखता था। मेरा यह अभिप्राय नहीं है, कि प्राचीन कवि कुछ जानते ही न थे। सूर, तुलसी, मीरा, सरीखे कवियोंकी चरण-रजसे आजकलके साहित्य महारथी पवित्र हो सकते हैं। मैं उनसे तुलना भी नहीं कर सकता, मुझमें यह क्षमता नहीं। वसन्त वर्णनमें पद्माकर लिखते हैं 'बननमें बागनमें बगरो बसन्त हैं।' आप स्वयं बिचारिये कवि बसन्तकी आत्मातक पहुंचा ? उनकी कविता है:—

ए बृज चन्द चलौ किन वा व्रज
लूकैं वसन्तकी ऊकन लागी।
त्यों पद्माकर देखौ पलासन
पावक-सी मनों फूंकन लागी।
वै बृजवारी विचारी वधू
वन बावरी लौ हिये हूकन लागी।
कारी कुरूप कसाइनै यै सु
कुहूकुहू क्वैलिया कूकन लागी।

पदावली सजी है, शब्द योजना है, अनुप्रास है। कोई अर्थ गौरव भी है ? प्रसादजीकी प्रारम्भिक रचना है। वसन्तसे कहते हैं।

तू आता है फिर आता है—
जीवनमें पुलकित प्रणय सदृश
यौवनकी पहली कान्ति अकृश।
जैसी हो वह तू पाता है।

दोनों पढ़कर किसमें अर्थ गौरव है, सहृदय पाठक ही सोचें। नदियोंके प्रवाहका वर्णन अनेक कवियोंने किया है। निरालाजी यमुनाके धारा-प्रवाहसे कहते हैं—

'मुग्धाके लज्जित पलकों पर,
तू यौवनकी छवि अज्ञात।
आँख मिचौनी खेल रही है,
किस अतीत शिशुताके साथ ?
किस अतीत सागर संगमको,
बहते खोज हृदयके द्वार
बोहितके हित सरल अनिलसे,
नयन सलिलसे ओत अपार···

दोनों स्कूलोंकी कविताओंमें कितनी विभिन्नता है। और देखिये। वियोगके ऊपर अनेक कवियोंने कविताएं की हैं। भाषा साहित्यके रसग्रन्थोंमें ढेरी लगी है। कोई कहते हैं "पहिले अंचवैंगी हलाहलको फिरि कैकी कोलाहल के नचि है" अथवा कोई कहती है।

लाज ऊपर गाज परै ब्रजराज मिलै सोई काज करोरी।

मैं नवीन स्कूलकी दो एक रचना सुनाता हूं। विरह वेदनाका कैसा चित्र है—

आह वेदना मिली विदाई
मैंने भ्रमवश जीवन संचित

---

* Oneimpulse from a vernal wood.
May teach you more of man.
× Of moral evil and of good.
Than all the seges can.

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मधुकरियोंकी भीख लुटाई।
छलछल थे संध्याके श्रमकण,
आँसूसे गिरते थे प्रति क्षण।
मेरी यात्रापर लेती थी
नीरवता अनन्त अंगड़ाई॥
चढ़कर मेरे जीवन रथमें,
प्रलय चल रहा अपने पथमें।
मैंने निज दुर्बल पद बलपर
उससे हारी होड़ लगाई॥
(प्रसाद)

क्या हृदयमें तूफान नहीं उठ जाता?

प्रेमजन्य वियोगमें नवीन कवि केवल उशीरका लेपन और खसखानेमें बैठकर अपनी तप्त उसासोंसे नगर भरकी नदियां और तालाब नहीं सुखाता। वह केवल यह नहीं रोता, "रात ना छहात ना परभात आली जब मन लागी जात काहू निरमोहीसे" उसके लिये तो—

अयि अमर शान्तिकी जननी जलन,
अक्षय तेरा शृङ्गार रहै।
जीवन धन स्मृतिसा अमित
निरन्तर तेरा मेरा प्यार है।
धधके लपटें अन्तर तरमें
तेरे चरणोंपर शीश झुके।
तूफान उठें अंगारों के,
उर प्रलय सृष्टिका स्रोत रुके।
हाँ खूब जला दे रह न जाय
अस्तित्व और जब वे आवें।
चरणोंपर दौड़ लिपट जाने-
वाली केवल विभूति पावें।
(द्विज)

एक और विदग्ध हृदय 'श्याम' जी कहते हैं।

तेरी स्मृतिके मधुर अंकमें
देख पड़ा यह सपना।
सर्वनाश करना ही सुख है,
सबसे बढ़कर अपना।

फिर आप कहते हैं—

हँसते हुए तुम्हें देखा था,
हिमकर नील गगनमें।
उस दिन प्रथम चरण डाला था,
मैंने इस जीवनमें।
अगणित बार तुम्हें देखा पर,
कभी न थे तुम इतने।
आज जगतसे विदा-समय,
तुम सुन्दर लगते जितने।

कितना दर्द है?

शेलीकी उक्ति:—

अवर स्वीटेस्ट सांग्ज़ आर दोज़,
दैट टेल आव सैडेस्ट थौट। *

इन कविताओंमें कितनी स्वाभाविकता चरितार्थ होती है।

रूप अथवा सौन्दर्य वर्णनमें भी नये स्कूलके कवि एक नवीन प्रणाली पर चल रहे हैं। अधिकांश प्राचीन कवि जड़ रूपकी प्रशंसामें उपेक्षा और रूपकके भंवरमें फंस गये। बाह्य सौन्दर्य के भीतर द्रष्टाकी दृष्टि, उस महान विधाताकी महान सुन्दरता को देखकर स्पष्ट न कर सके। रवि बाबूने कहा है—

ब्यूटी इज़ दि सिगनेचर व्हिच दि क्रिएटर स्टैम्पस व्हेन ही इज़ सैटिस्फ़ाइड विद हिज़ वर्क। + कीट्स भी कहता है,—ब्युटी इज़ ट्रुथ, ट्रुथ ब्युटी × हमारे यहां तो कहा ही गया है, 'सत्यं शिवं सुन्दरं'। प्राचीन कवि कटिकी क्षीणता तथा केशकी कालिमामें राह भूल गये। बड़ीसे बड़ी कविता ऐसी थी—

'एक बली सबहीको बसकरि राखत हैं।'
त्रिवली जो करै बश अचरज कौन है,।

---

* Our sweetest songs are those.
That tell of saddest thought.

\+ Beauty is the signature which the Creator stamps when he is satisfied with his work.

× Beauty is Truth; Truth Beauty.

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust, Funding by MoE-IKS

अथवा,—

शम्भु हैं पै उपजाव मनोज,
सुवृत्त हैं ये पर-चित्तके चोर हैं।

यह कविता देवीकी आराधनामें पुष्प नहीं बिखरे गये है, पंक फेंका गया है। नवीन स्कूलके सौन्दर्य वर्णानमें छषमा (ग्रेस) को प्रथम स्थान दिया गया है। सौन्दर्यमें एक विशेष स्निग्धता होती है। जिसे हम छषमा (ग्रेस) कह सकते हैं। सूरने कृष्ण राधाके वर्णनमें और तुलसीने सीता तथा रामके वर्णनमें इसे स्थान दिया है। और भी कवियोंने अपने पद्योंमें सौन्दर्य कलाको कलाविदकी दृष्टिसे देखा है। कपोलको मक्खनका ढोका कह देना कविता नहीं है। देव और बिहारी और पद्माकरके आपने बहुत कवित्त पढ़े होंगे। जरा आजकलके सौन्दर्य निरीक्षणकी बानगी देखिये—

मन्द-मन्द मुसकानेमें अधरोंकी वह मिलती लाली
ऊषाकी घूंघट-लालीमें झांक पड़े ज्यों करमाली
पूर्णचन्द्रमें क्या है कमलोंमें क्या रखा है आली
वह तो था कुछ और हमारे उपवनका प्यारा माली
(सुमन)

मधुर मुसकान देखकर पन्तजी कहते हैं :—

विपिनमें पावस केसे दीप,
सुकोमल, सहसा, सौ सौ भाव,
सजग हो उठते नित उर बीच
नहीं रख सकती तनिक दुराव
कल्पनाके ये शिशु नादान
हँसा देते हैं मुझे निदान

रूपका कितना सुन्दर वर्णन है,—

"और देखा वह सुन्दर दृश्य,
नयनका इन्द्रजाल अभिराम;
कुसुम वैभवमें लता समान,
चन्द्रिकासे लिपटा घनश्याम
नील परिधान बीच सुकुमार,
खुल रहा मृदुल अधखुला अंग
खिला हो ज्यों बिजलीका फूल,
मेघबन बीच गुलाबी रंग
घिर रहे थे घुंघराले बाल,
अंस अवलम्बित मुखके पास
नीलघन शावकसे सुकुमार,
सुधा भरनेको विधुके पास
और उस मुख पर वह मुसकान,
रक्तकिसलय पर ले विश्राम
अरुणकी एक किरण अम्लान,
अधिक अलसाई हो अभिराम"
(प्रसाद)

कल्पनाकी कितनी ऊंची उड़ान है। न वासना उत्तेजित होती है, न कोई अपवित्र विचार ही हृदयमें उठते हैं।

इन्हीं प्रसादजीकी एक और कविता सुनिये—

तुम कनककिरणके अन्तरालसे
लुक छिपकर चलते हो क्यों।
नतमस्तक गर्व वहन करते,
यौवनके घन रसकन ढरते,
हे लाज भरे सौन्दर्य बता दो,
मौन बने रहते हो क्यों।
अधरोंके मधुर कगारोंमें,
कलकल ध्वनिकी गुञ्जारोंमें,
मधुसरितासी यह हँसी तरल
अपनी पीते रहते हो क्यों?

जो लोग कहा करते हैं, कि नवीन कवितामें कुछ नहीं है, केवल तुकवन्दी है। जरा एक बार इन रचनाओंको पढ़नेका कष्ट उठाएं। किसकी कल्पनाशक्ति अधिक ऊँची और गौरव पूर्ण है। यदि पक्षपात हटा दिया जाय और इस स्कूलके उत्कृष्ट कवियोंकी रचनाएँ पढ़ी जायँ, तो आश्चर्य नहीं नवीन कविता बाज़ी मार ले जाय। महात्मा कवियोंको छोड़ दीजिये तो भगवान कृष्ण और राधिकाकी आड़में ऐसे भद्दे भद्दे कवित्त बने हैं, कि आश्चर्य होता है। उस कालका

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

यह नियम रहा होगा। हम उससे नाक भौं नहीं चढ़ाते। संसारके जीवनकालके, प्रभातमें लोग पत्तोंसे तन ढकते हैं, पर आज हम वैसा नहीं कर सकते। हमारे नवीन कवियोंके सामने प्रेम एक अतुलनीय, अनश्वर नैसर्गिक वस्तु है। यह अन्तस्थलका सौदा है। चांदी सोनेके मोल नहीं हो सकता।

आज कलकी कविताकी कल्पनाकी उड़ान जितनी ऊँची होती है, जितनी इसमें महानता (ग्रॅन्डुयोर) होती है पुरानी कवितामें साधारणतः नहीं मिलती। एक साधारण वस्तुका भी वर्तमान कवि वर्णन करेगा तो वह एक विशाल रूपसे होगा। जिससे वस्तुका चित्रण और भावोंकी गम्भीरता हृदय पटपर एक जबर्दस्त; छाप रख दे। कोमल कल्पना भी होगी तो इतनी गम्भीर होगी, कि वह असाधारण हो जायेगी। पन्तजीका एक पद्य देखिये :—

स्तब्ध ज्योत्सनामें जब संसार,
चकित रहता शिशुसा नादान।
विश्वके पलकोंपर सुकुमार,
विचरते हैं जब स्वप्न अजान।
न जाने नक्षत्रों से कौन
निमंत्रण देता मुझको मौन।
देख वसुधाका यौवन भार,
गूंज उठता है जब मधुमास,
विधुर उरकेसे मृदु उद्गार
कुसुम जब खुल पड़ते सोछ्वास
न जाने सौरभके मिस कौन
निमंत्रण देता मुझको मौन (पन्त)

प्रसादजीने पगलीके रुपकमें रात्रिका कसा चमत्कार पूर्ण चित्र खींचा है।

विश्व कमलकी मृदुल मधुकरी
रजनी तू किस कोनेसे
आती चूम चूम चल जाती
पढ़े हुए किस टोनेसे
रजत कुसुमके नव परागसी
उड़ा न दे तू इतनी धूल
इस ज्योत्सनाकी आह बावली
तू इसमें जाएगी भूल
फटा हुआ था नील बसन क्या,
ओ यौवनकी मतवाली
देख अकिञ्चन जगत लूटता,
तेरी छबि भोली भाली (प्रसाद)

नवीन कविताके पारखी एक बात और पाएँगे, कि कवि अब सारा विश्व अपना वर मानता है। सच पूछिये तो कवि देशराष्ट्र, जातिके ऊपर है। वह राष्ट्रीयताका भी उपदेश देगा तो विश्ववाद की भित्तिपर। वाल्ट व्हिटमैन, यीट्स, माटरलिंक, टैगोर जितने महानकवि, हैं, इसी रंगमें रंगे हैं। हां दासताकी श्रृङ्खलामें जकड़े भारतको ऐसी बात आश्चर्यजनक अवश्य प्रतीत होती है। हमें विश्ववादके पहले राष्ट्रीयताकी ओर ध्यान देना चाहिये। वैदिककालसे हम विश्वसंगीत गाते चले आते हैं। अब तो उस भारतीको जगाना चाहिये कि भारत प्राचीन गरिमा ग्रहण कर ले। हां हमारे भाव संकुचित न होने चाहिये। एक बात और है। आज कलकी कविता करुण कहानी है। जीवनशोकका सागर है। मनुष्य इसीकी लघु लहरियोंमें हिलोरें लेता है। आनन्दकी मात्रा जीवनमें बहुत कम होती है। और कवि सचाईको छोड़ नहीं सकता।

एक और बात प्राचीन स्कूलवालोंको वर्तमान कवियोंकी बुरी मालूम होती है। अकसर आप लोगोंने ऐसी कविताएँ देखी होंगी, जिनके चरण बड़े छोटे होते हैं। इसपर हिन्दी जगतमें बड़ी हँसी उड़ायी जाती है। वाल्टव्हिटमैनने पहले पहल अंग्रेजीमें ऐसी कविता लिखी। ईट्स, टैगोर और बड़े बड़े कवि लिखते हैं, कोई चूं नहीं करता। बंगालमें भी रवि बाबू आजकल ऐसी ही कविता लिखते हैं, उनका 'ताजमहल' देखिये:—

चलेगेछ तुमि आज
महाराज
राज्य तब स्वप्न सम गेछे छूटे
सिंहासन गेछे टूटे.
तव सैन्य दल
जादेर चरण भरे धरणि करित टलमल

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ताहादेर स्मृति आज वायुभरे
उड़े जाय दिल्ली पथेर धूलि परे

हमारे यहाँ निरालाजीने लिखा तो|कहा गया, कि निराला पंथ खड़ा करते हैं। हमारी रायमें जबतक कविका उद्देश्य वर्डस्वर्थ के अनुसार 'हाउ वर्स मे बिल्ड ए प्रिंसली थ्रोन आन ह्म्बुल ट्रूथ' * हो, तबतक सभी कविता है। मुक्तक हो, छप्पय, मालिनी हो। सभी भावके वाहक हो सकते हैं। भाव होने चाहिये। कलाका गला न घोंटना चाहिये। पर कलाकी शृङ्खलामें नवीन कड़ियां जोड़ी जा सकती हैं।

वर्तमान कविता राष्ट्रीय कम अवश्य है पर सुन्दर है। पं० माखनलाल चतुर्वेदीने राष्ट्रीयता और छायावादका ऐसा सुन्दर सम्मेलन किया है, कि सोनेकी कलिकामें चम्पककी सुगन्ध मिला दी है। आज जो राष्ट्रीय साहित्य है, वह सच्ची राष्ट्रीयताका सन्देश है, जीवनमें जागृति फैला देने वाला है। आजकी राष्ट्रीयताका संगीत हृदयके खूनका आँसू है। केवल शब्दाडम्बर नहीं है 'एक भारतीय आत्मा' की अन्तरात्माकी चाह सुनिये;—

चाह नहीं मैं सुरबालाके गहनेसे गूथा जाऊँ
चाह नहीं प्रेमी मालामें बिंध प्यारीको ललचाऊँ।
चाह नहीं सम्राटोंके शवपर हे हरि डाला जाऊँ
चाह नहीं इन देवोंके सिरपर चढ़ूं भाग्यपर इठलाऊँ
मुझे तोड़ लेना बनमाली, उस पथमें देना तुम फेंक
मातृभूमिपर शीश चढ़ाने जिस पथ जावें वीर, अनेक

फिर आप कहते हैं;—

किस प्रकार मिनटें गिनता हूं दिनके वरस बनाता हूं।
खानपानको ध्यान ज्ञानको धूनी यहाँ रमाता हूं।
तुमको आया जान वायुमें बाहोंको फैलाता हूं।
चरण समझते हुए सीकचों पर मैं शीश झुकाता हूं।
सुध बुधि खोने लगे, कहो क्या पूरी नहीं सुनोगे तान,
होता हूं कुरबान बताओ, किस क़ीमतमें लोगे जान

* How verse may build a princely throne on humble truth.

कविके हृदयपर राष्ट्रीयताकी छाया कितनी पड़ी है? कविता वैसी तुकबन्दी नहीं है, जैसी कभी कभी पत्रोंमें आती है। कविके दग्ध हृदयकी उत्तप्त उसासे हैं।

नवीनजी लिखते हैः—

सावधान मेरी बीणामें चिनगारियां आन बैठी हैं,
टूटी हैं मिजराबें युगलांगुलियां मेरी ऐंठी हैं।
कण्ठ रुका जाता है महानाशका गीतरुद्ध होता है।
आग लगेगी क्षणमें हृत्तलमें अब क्षुब्ध युद्ध होता है।

इतना ही नहीं, नवीनजी और बढ़कर कम्पित स्वरोंसे गाकर संसारको कम्पायमान कर देते हैं। कहते हैं :—

कवि कुछ ऐसी तान सुनाओ
जिससे उथल पुथल मच जाये,
एक हिलोर इधरसे आये,
एक हिलोर उधर से आये।
प्राणोंके लाले पड़ जायें,
त्राहि त्राहि रव नभमें छाये,
नाश और सत्यानाशोंका,
धुंआधार जगमें छा जाये।
बरसे आग जलद जल जायें,
भस्मसात् भूधर हो जाए।
पाप पुण्य, सद सद्भावोंकी,
धूल उठ उड़े दांये बांये।
× × + ×
नियम और उपनियमोंके
ये बन्धन टूक टूक हो जाए,
विश्वम्भरकी पोषक बीणाके
सब तार मूक हो जाएँ।
शान्ति दण्ड टूटे उस
महारुद्रका सिंहासन थर्राये,
उसकी पोषक श्वाच्छ्वास
विश्वके प्रांगणमें फहराये।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भूतनाथ तेल

में

कौनसे गुण है ?

१—**भूतनाथ तेल** केशोंको भौंरेकी तरह काला और घुँघर-
राला बनाता है।

२—**भूतनाथ तेल** सिरके चमड़ेके नीचे रहनवाली खूनकी
सोती हुई नाज़ुक नालियोंको जगा कर स्मरण शक्तिकी वृद्धि
करता है।

३—**भूतनाथ तेल** बालोंकी जड़ोंको मजबूत कर असमय
पकने तथा गिरनेसे बचाता है।

४—**भूतनाथ तेल** चन्दुलेपनको दूर कर बालोंमें नवीन संजो-
वनी शक्तिका संचार करता है।

५—**भूतनाथ तेल** भीषण सिर दर्दको एक क्षणमें हटा कर
आरामसे सुलाता है।

६—**भूतनाथ तेल** सिरकी खुशकीको दूर कर आंखोंमें तरा-
वट और रोशनी पैदा करता है। इसीसे लोग इसे सुगन्धि-
साम्राज्यका **विजयी सम्राट** कहते हैं।

प्रमाण ?

सरोजके चौथे चित्रके पृष्ठ पर पढ़िये !

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

चिन्ता !

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नाश नाश हा महानाशकी
प्रलयंकरी आँख खुल जाये।
कवि कुछ ऐसी तान सुनाओ
जिससे उथल पुथल मच जाये।

यह है नवीन कविताका थोड़ेमें दिग्दर्शन। इसका प्रभाव बढ़ रहा है। पुरानी शैलीके कवि भी अनुकरण करने लगे हैं। सनेहीजी पर भी छायावादकी छाया पड़ी है। आप लिखते हैं:—

वह बेपरवाह बने तो बने
हमको इसकी परवाहका है,
वह प्रीतिका तोड़ना जानते हैं
ढंग जाना हमारा निबाहका है।
कुछ नाज जफ़ा पर है उनको
तो भरोसा हमें बड़ा आहका है,
उन्हें मान है चन्द्रसे आननपै
अभिमान हमें भी तो चाहका है।

बाबू मैथिलीशरण गुप्तने भी कविताएं छायावादके रंगमें रंगी हैं। दो पंक्तियां यादसे लिखता हूँ।

विश्व तुम्हारी बीणा है अनमोल
जिसके दो तूम्बे भूगोल, खगोल।

प्राचीन कवियोंने बालकोंके योग्य कविताएँ न लिखीं। आजकल बालकोंके योग्य कविताएँ भी हो रही हैं। हरिऔधजी, श्रीनाथसिंह बालसखा सम्पादक, आदिने इस साहित्यका अच्छा निर्माण किया है। हरिऔधजीका एकाध नमूना देखिये,—

बिखरे मोती न्यारे हैं, या चमकीले तारे हैं,
सुथरी नीली चादर पर सुन्दर फूल पसारे हैं।
किसी बड़ी अलबेलीके बड़े छबीले प्यारे हैं,
या अंधियाली रातोंकी आंखोंके ये तारे हैं।

एक कविता है—

रूपरङ्ग दोनोंमें न्यारा, तेरे मुखड़े जैसा प्यारा,
हैं यह चंद या कि रस प्याला, या चांदीका थाल निराला
कोई बड़ा फूल है फूला, या है यह आइना भूला,
जोति बेलियोंका है बीया, या है यह आकासका दीया।

बीर रसका खड़ी बोलीमें काव्य गुरुवर लाला भगवानदीनजीने आरम्भ किया था। बीर पंचरत्नके :पश्चात बीर रसकी कोई सुन्दर रचना न निकली। बीर प्रतापका एक छन्द सुनाता हूँ,—

पुरखोंके बड़े बोलकी इज़्ज़तको बचाना,
माता व बहन बेटीका सत धर्म रखाना।
निजधर्म व सुरधामोंका सनमान बढ़ाना,
तीरथ व महा धामोंका सतकार कराना
इन कामोंमें गर जानका डर हो तो न डरिये
क्षत्रीका परम धर्म है यह ध्यानमें धरिये॥

इसी भांति महावरेदार काव्योंका भी प्रयोग हरिऔधजीने आरम्भ किया। उर्दूमें बड़ी टकसाली भाषामें महावरेदार कविता होती है।

दो एक उदाहरण देखिये :—

यह तसवीर चेहरा उतर क्यों रहा है?
खिंचे किससे हो, क्या है नक़शा तुम्हारा?

* * * *

रुकते रुकते रुकेंगे आंसू
रोना है कोई हँसी नहीं है।

हरिऔधजीने बोल-चाल पर एक कविताकी पुस्तक ही लिख डाली है। पर हास्य तथा व्यंग की अभी कमी है। कुछ कविताए निकलती हैं, पर हिन्दीमें अकबरका स्थान रिक्त-सा ही है।

यह खड़ी बोलीकी कविताके सम्बन्धमें मेरा थोड़ा सा ज्ञान है। हमारी प्रार्थना सहृदय सज्जनोंसे है कि वे विशेषतः नवीन स्कूलकी कविताओंको दुरूह और क्लीटकाव्यके नामोंकी उपाधि देकर अपनी हृदयहीनताका परिचय न दें। ऐसी कविताएँ अवश्य हैं जो कविता नहीं होती पर पुरानी शैली वालोंमें भी ऐसा ही है। पर प्रसादजी, पं० माखनलाल चतुर्वेदी, निराला जी, पन्तजी, नवीनजी, सुमनजी, द्विजजी, सियारामशरणजी तथा और भी सहृदय कवि हैं, जिनका हृदय भावुकतासे परि-

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्लावित है। प्रकृतिके नृत्यके साथ उनकी वीणामें भी झनकार हो उठती है। वह प्रेम-सरितामें बहे चले जा रहे हैं। उनका हृदय विदग्ध हो, पर उनकी कविता सरिताका जल सन्तप्त हृदयको भी शान्त कर सकता है। इन्हें अवहेलनाकी दृष्टिसे न देखिये। इनमेंसे कीट्स, शैली निकल सकते हैं। इतना हम कह सकते हैं कि उनकी आहोंमें सचाई है, उनके रोनेमें करुणा है, उनके हास्यमें मधुरिमामयी चन्द्रिका है और वे भी रावर्ट ब्रिजेज़के शब्दोंमें कहते हैं :—

माइ आइज़ फ़ौर ब्यूटी पाइन,
माइ सोल फ़ौर गौडेस ग्रेस ;
नो अदर केयर आर होप इज़ माइन,
टु हेवेन आइ टर्न माइ फ़ेस *

* My eyes for Beauty pine.
My soul for goddess Grace;
No other care or hope is mine,
To Heaven I turn my face.

माया

(रचयिता—श्री अवन्त विहारी माथुर "अवन्त")

जिसके कर्ण कुहरमें पड़ती, तेरी वह मधु मय झंकार।
जिसके हृदय कमल पर होता है तेरा आघात कुठार।
स्मरण करके तेरा उसको बस हो जाता है उन्माद ॥
जिस निर्जनमें ध्वनि करती है, तेरे नूपुरकी झंकार।
जिस अरण्यमें धनुवा तेरा, करता है अपनी टंकार।
बस मनुजोंमें उस स्थल पर होता अद्‌भुत वाद-विवाद ॥
ऊसरमें, भूतलमें, नभमें, सागरकी गहराई में।
हिममें, पर्वतमें, नालेमें नदमें और तराई में।
पाता तेरी खोज जहाँ पर वहीं दौड़ पड़ता संसार ॥
तुझको पाकर निर्धन कहता, मुझसा नहीं अनन्य।
भाग्य समझता है अपना अति धनी सुखी भी धन्य।
तेरी गोदीमें करते हैं, भारत मां के लाल विहार ॥
शुष्क हृदयमें तेरी आशा, करती है जीवनका काम।
तेरी प्यारी सुखद गोदमें, पाते सब निश्चिन्त विराम।
जगत समझता तुझे दूसरा ही ईश्वरका अवतार ॥

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जञ्जाल

(लेखक—श्री ऋषभचरण)

SRI JAGADGURU VISHWARADHYA
JNANA SIMHASAN JNANAMANDAL
LIBRARY
Jangamwadi Math, Varanasi
ACC No...

(१)

मैट्रिक पास करते न करते प्रेमनाथको जन्म-पत्रीके लिये नाई, रोज़-रोज़ आने लगे। कन्हैया था प्रेमनाथका दिली दोस्त और विवाहका कट्टर विरोधी। विवाहका नाम सुनते ही वह भौंह चढ़ा लेता था। किसी सहपाठीके विवाहका समाचार सुनते ही हवाई जहाज़की तरह उसके सिर पर मँड़राने लगता और मौक़ा पाते ही कड़ी लताड़ देता। पता नहीं, विवाहसे उसे क्या चिढ़ थी, क्या दुश्मनी और क्या भय कि वह अपने उन साथियोंसे, जिनका विवाह होनेवाला होता, घोर तर्क-युद्ध ठान देता; झगड़ाकर डालता, बोलना छोड़ देता और शामिल तो वह आजतक किसीके विवाहमें हुआ ही न था। उसका कोई सहपाठी उसके पास निमन्त्रण-पत्र लाता तो वह उसे ज्योंका त्यों वापिस कर देता, अपना वही पुराना युक्तियुक्त, नीरस लेक्चर झाड़ते हुए। "मुर्ख! अनुभव-शून्य मौत बुलानेवाले लड़के!" वह कहता—"दूरसे जिस सोनेके पहाड़को देखता हुआ तू मेरे पास हुलसकर यह निमंत्रण लाया है—याद रख—वह साँझके सूरज की सुनहली धूपमें सुनहला-भर हो गया है; उसमें वही कठोर पत्थर है। कल जब तू उस पर चढ़ जायेगा और सूरज अपनी पूरी तेजीसे चमकेगा तब तेरे तलुवे झुलसेंगे और तू वहीं तड़प-तड़पकर अपनी जान गँवायेगा।" सहपाठी निमन्त्रण-पत्र वापिस लेकर जेबमें रख लेता और मुँह बिचकाकर कन्हैयाकी खिल्ली उड़ाता।

पर प्रेमनाथको कन्हैयाने एड़ीसे चोटीतक अपने रङ्गमें रङ्ग दिया था। कन्हैयाका अकाट्य तर्क, उसका प्रवाह-पूर्ण भाषण—विवाहके विरोधमें और मुक्त-भोगीकी-सी उसकी आँसू-भरी आँखें प्रेमनाथके हृदयमें उसके प्रति घोर श्रद्धा पैदा करती थीं। प्रेमनाथ धीरे-धीरे कन्हैयाके भक्त—अन्ध-भक्त—बन गया और प्रतिज्ञा की कि जीवनभर विवाह न करेंगे।

प्रेमनाथ भक्त बना तो—पर धीरे-धीरे; यह नहीं था कि वह बिना शंका-समाधान किये ही कन्हैया-को बाइबिल, कुरान अथवा वेद समझ कर उसकी प्रत्येक बातपर विश्वास किये हो। उसने एक बार कन्हैयासे पूछा था—"क्यों जी, अगर तुम्हारे कथनानुसार सभी विवाह न करें, तो कुछ दिनोंमें सृष्टिका ही अन्त हो जाय।"

कन्हैयाने झट उत्तर दिया—"अपने इस प्रश्नको एक बार दुहराओ—"

प्रेमनाथने दुहराया तो सचमुच अपना प्रश्न सार-हीन-सा पाया।

कन्हैया उसी सिलसिलेमें कहता रहा—"देखो, मनुष्यके लिये विवाह करना अनिवार्य नहीं है। इस विषयमें मैं घोर अनुदार हूं। पर देखो, मेरे

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

सिद्धा[illegible] है कि [illegible]ने विवाह न करो [illegible]को जञ्जाल समझता हूँ ; [illegible] न फँसा जाय, अच्छा है [illegible] जा सके तो और भी...अच्छा !...ये...लोग...स्कूलके विद्यार्थी हैं ; सोलह-सोलह वर्षके सुकुमार फूल ! हाय ! ये बेचारे अनजानेमें किस प्रकार कुँएमें धकेले जा रहे हैं !"

प्रेमनाथने पूछा—"तो तुम्हारा सिद्धान्त-शास्त्र कितनी उम्रमें विवाह करनेकी अनुमति देता है ?"

कन्हैयाने प्रेमनाथका व्यंग्य सुनकर अविरक्त भावसे कहा—"विद्यार्थी-जीवन समाप्त करके, धनोत्पार्ज्जनका ज़रिया पैदा करके, जितनी देरसे हो, अच्छा है।"

प्रेमनाथने पूछा—"तो ऐसा क्यों ?"

कन्हैयाने बेबाकीसे जवाब दिया—"क्योंकि जञ्जाल है।"

प्रेमनाथने सोचकर पूछा—"वर्तमान परिस्थिति में युवकोंको किन कठिनाइयोंका सामना करना पड़ता है, तुम जानते हो ? अगर ये कठिनाइयां, ये परिस्थितियां युवकोंको पथ-भ्रष्ट कर दें—चरित्र-हीन बना दें तो ? चरित्र-हीनके पास रहा ही क्या ?"

कन्हैयाके पास इसका उत्तर भी सोचा हुआ, तैयार था। उसने कहा—"अठारह-उन्नीस—दो साल निकालनेके बाद ये कठिनाइयां बड़ी आसान हो जाती हैं, मेरे भाई और······और·········"

प्रेमनाथने कन्हैयाको रोककर कहा—"ये दो साल-ही कैसे निकलें ? यदि इसी उम्रमें युवक अपनी निधि—चरित्रको खोदे तो उसके पास क्या रहेगा ?"

कन्हैयाने धीरे-से कहा—"तुम चरित्रकी व्याख्या नहीं कर सकते। तुम चरित्रका अर्थ नहीं जानते। चरित्र यह नहीं है—जिसको तुम कह रहे हो—खोनेसे युवक कङ्काल हो जाता है।"

प्रेमनाथने साश्चर्य्य पूछा—"तो क्या तुम यह कहते हो कि चरित्रको—मेरे बताये हुएको—खोकर भी यदि विवाह न किया जा सके, तो न करना चाहिये।"

"हाँ, मैं कहता हूं," कन्हैयाने जोशमें आकर कहा—हाँ, मैं कहता हूं। यह चरित्र नहीं—चरित्रका आवरण-मात्र है, जिसके हरने पर ही चरित्रका असली रूप प्रकट होता है। जितने बड़े आदमी हैं, किसके आरम्भिक जीवनको तुम आदर्श कहनेका साहस कर सकते हो ? मैं कहता हूं—जहाँतक बने चरित्रको असली व्यभिचार-द्वारा नष्ट कर डालनेकी अपेक्षा इस चादरको हटा देना अच्छा है। एक शिक्षित युवकका स्वाभाविक विवेक उसके आवरण-हीन चरित्र पर धव्बा न देगा, यह निश्चय पूर्वक कहा जा सकता है।"

कन्हैयाकी अश्रुतपूर्व बातोंसे आश्चर्यित होकर प्रेमनाथने पूछा—"परन्तु अनेक ऐसी घटनायें होती हैं, जिनमें, युवक चरित्र खोकर दुर्गतिको प्राप्त होते हैं।"

"नब्बे फ़ीसदी विवाहित युवकोंसे," कन्हैयाने उत्तेजित होकर कहा—"बाकी दस फी सदी दुर्गति प्राप्त अविवाहित युवक अच्छे हैं।

प्रेमनाथने कन्हैयाके मौलिक तर्कके बहुत थोड़े अंशको ही समझकर ऊबकर प्रश्न किया—"आख़िर तुम यह समझते और देखते हुए भी कि तुम्हें सफलता नहीं मिल सकती, क्यों अपने सिद्धान्त-प्रतिपादनमें प्रयत्नशील हो ?"

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कन्हैयाने कहा—"वाह! प्रयत्न न कर मैं अपनी आत्माके विरुद्ध कैसे जा सकता हूं? रहा सफलताका सवाल—अगर संसारमें सभीको सफलता मिल जाय, तो उसका मूल्य ही क्या रहे?"

प्रेमनाथ कन्हैयाके इस अजीब तर्क पर हँस पड़ा। "पर यह तो बताओ," उसने हँसकर पूछा—"कि तुम क्यों विवाहका इतना विरोध करते हो?"

बस, कन्हैया यहीं चुप हो गया। उसकी आँखें भर आईं और उसने इसका कारण बतानेसे इनकार कर दिया।

वास्तवमें वह एक इतिहास था। बीस वर्षका वयस्क युवक कन्हैया उसका भुक्तभोगी था।

कन्हैयाकी बातें पहले प्रेमनाथको उन्मत्त कविके निरर्थक भाव-ही-भाव-सी जान पड़ीं, पर पीछे—जब उन बातोंका अर्थ समझा—वह उदारतापूर्वक कन्हैयाके मुरीद बन गया—उसपर ईमान लाया।

(२)

प्रेमनाथने एक दिन नाईको धक्का देकर बाहर निकाल दिया, माँको ख़ूब फटकारा, मौसी बोलीं तो उन्हें भी दस-बीस खरी-खोटी सुनाईं। बोला—"तुम लोगोंको आगा-पीछा कुछ नहीं सूझता; ब्याह! ब्याह! ब्याह! 'घरमें नहिं दाने, अम्मा चली भुनाने'; कालिजका ख़र्च ही कमर तोड़े डालता है, उसे क्या खिलाओगी?"

माँने अपमानको पीकर दुलारसे कहा—"बावला बेटा! अरे सबका भाग्य सबके साथ होता है; जिसने मुंह चीरा है, भरेगा भी वही; तुझे इसकी चिन्ता क्यों है? अगर कभी तुझसे खर्चा माँगूँ तो जूती निकालकर मारना।"

प्रेमनाथने बिगड़ कर कहा—"मुझे दिखाई तो यही पड़ रहा है, कि तुम लोग मुझे इण्टरमिडियेट भी पास न करने दोगी और मजबूर करोगी मुझे नौकरीके कांजी-हाऊसमें बन्द होनेके लिये।"

माँ और मौसी—दोनोंने समझाया—"नहीं बेटा, हम क्या पागल हैं? तू चाहे जबतक पढ़े। हम तो खुद-ही चाहती हैं, हमारा बेटा इलमदार हो, बड़े ओहदे पर पहुंचे और हम विधवा अनाथाओंका नाम उजागर करे।"

प्रेमनाथने दाँत पीसकर कहा—"क्या ख़ाक तुम्हारा बेटा इलमदार होगा, क्या ख़ाक ओहदे पर पहुंचेगा, क्या ख़ाक तुम्हारा नाम उजागर करेगा? तुम उसे बेड़ियोंमें कसना तो अभीसे चाह रही हो। मालूम होता है, मेरी तक़दीरमें वही पैंतीस रुपयेकी क्लर्की लिखी है।"

मौसीको भान हुआ, प्रेमनाथ कुछ रास्तेपर आया। उन्होंने रङ्ग और पक्का करनेके उद्देश्यसे कहा—"नहीं बेटे, तेरी इच्छा हो, जहाँ तक पढ़ना। हम खुद भूखे रह जायेंगे, मगर तुझे तङ्गी न होने देंगे। बहूका भाग्य बहूके साथ है। मेरे चाचा थे, जिस समय बापसे अलग हुए, चाचीके कानोंमें बालियोंके सिवा कुछ न था; दो बरस बाद ही परमात्माकी ऐसी दया हुई और ऐसी दूकान चली कि हाट और हवेली, सब घरके हो गये और नौकर-चाकर तक दूधों कुल्ले करने लगे।"

माँने भी मौसीकी बातकी पुष्टि की और कोई उदाहरण देना ही चाहती थी, कि प्रेमनाथ क्रोधसे उछलकर बोला—"तुम मुझे बर्बाद करके छोड़ोगी। तुम्हारी एक मूर्खतापूर्ण इच्छा-पूर्त्तिके लिये मैं विवाह

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कर, अपनी भावी उमंगों और आशाओंको कुचलना नहीं चाहता। बस! बस!.बस!"

माँने प्रेमनाथकी बातका मतलब निकाल कर, कुछ ठहर कर कहा—"तेरी अकल मारी गई है। शादीके बाद क्या पढ़ा नहीं जाता? गलीमें ही रतन है, ब्याहके छः बरस बाद तक पढ़ता रहा और वकालत पास करके ही छोड़ा।"

प्रेमनाथने क्षुब्ध होकर कहा—"और रतन फेल कं बार हुआ? और उसकी परिस्थिति ऐसी थी, जिससे पढ़ाईमें विघ्न न पड़ सका; मेरी परिस्थिति ऐसी नहीं है।"

मौसीने प्रेमनाथके सिर्फ पहले वाक्यका अर्थ समझ कर कहा—"फेलकी बात यह है—क्या अविवाहे फेल नहीं हो जाते? रामचन्द्रको ही देख कैसा मेहनती था। रातको रात और दिनको दिन न समझ कर पढ़ता था। दो बजे नींद खुले तो उसे पढ़ता सुन लो, तीन बजे खुले तो पढ़ता सुनलो। ऐसे मेहनती तक फेल हो गये।"

स्त्रियोंकी युक्तियाँ सड़कों पर फिरने-वाली वह बलायें हैं, जो एक पैसेके लिये मीलों गिड़गिड़ाती हुई चली जाती हैं, और जिनसे पीछा छुड़ानेके लिये हारकर, क्रुध होकर—इच्छा न होते हुए भी पैसा देना ही पड़ता है। प्रेमनाथने हारकर कहा—"अच्छा, सोचकर उत्तर दूँगा।"

माँ और मौसीने हँसकर कहा—"ठीक।"

तब दोनोंने घूम-फिरकर कर कई जगह सगाई की बात-चीत शुरू की। कई लड़कियाँ थीं। रिश्ता लड़केकी पसन्द पर तै होने का ठहरा। प्रेमनाथ सोच कर जो उत्तर देंगे, वह उनके अनुकूल ही होगा, माँ-मौसीको इसका निश्चय था। यही कारण था कि वे अगले वैशाखमें ही बहूके मुख-दर्शनकी आशामें प्रफुल्ल हो उठीं, और विवाहकी तैयारीमें लगीं।

माँने एक दिन एकान्तमें प्रेमनाथसे कहा—"लाला हुलासरायकी लड़की, दौलतरामकी लड़की और चमेलीकी—ये तीन हैं। मैं चाहती हूं, शादी तुम्हारी पसन्दसे हो, किसी दिन देख आना, उन्हें मौक़ा पाकर मन्दिर में।"

माँकी बात समाप्त होने तक प्रेमनाथने धीरज रखा। फिर तिलमिला कर बोला—"किसकी लड़की? कैसी लड़की? भाँग तो नहीं खा आई हो? मैं शादी-वादी नहीं करनेका।"

माँने अपने उच्छृङ्खल बेटेकी बातपर आँखें चौड़ी कर, मुँह फाड़कर कहा—"अरे! अरे! फिर क्या हो गया! उस दिन तो तुमने कहा था...।"

"क्या कहा था? क्या कहा था?" प्रेमनाथने मुँह बनाकर कहा—"यही न, कि मैं सोचकर उत्तर दूँगा। मैंने सोच लिया; मैं विवाह न करूँगा; न करूँगा।"

माँने कहा—"अब तेरा सोचना ख़तम हुआ है? मैं तो समझी, कई हफ्ते बीत गये। मेरे सामने यह तो क्या कहेगा—माँ! मैं ब्याह करूँगा, चुप हो गया है—ब्याह करानेकी इच्छा है। तुम्हीं सोचो, इसमें मेरा क्या अपराध है?"

प्रेमनाथने सोचा—सचमुच इतने दिनकी ढील देकर उसने भूल की है। फिर भी वह उसी दृढ़तासे बोला—"कुछ भी हो,—तुम्हें मुझसे पूछ लेना चाहिये था,—मैं ब्याह न करूगा।"

माँने कहा—"मैं तो ज़बान दे आई हूं, क्या मुझे औरतोंमें बैठने लायक भी न रखोगे?"

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रेमनाथ कठोर होकर बोले—"चाहे कुछ हो, अपनी करनीका फल भोगो, मैं ब्याह नहीं करनेका, चाहे इधरकी दुनियाँ उधर हो जाये।"

माँ सिर पर हाथ मारकर बोली—"इस छोकरेने मेरा कैसा फ़ज़ीता किया! हाय राम! ऐसी बेकही औलाद किसी की न हो। एक वह बेटे थे, जो सौतेली मांके कहने पर बापकी ज़ुबानकी लाज के लिये राज-पाट त्यागकर बन चले गये, एक ये हैं कि·······।"

इतनेमें मौसी भी आ पहुँची। प्रेमनाथ खिसक गया।

दोनों बहनोंने प्रेमनाथको राज़ी करने अथवा कमसे-कम अपनी लाज बचानेकी तर्कीब ढूंढनी प्रारम्भ की।

शामको ब्यालूके वक्त, रातको सोती वक्त, अगले दिन सुबह रसोईके वक्त, फिर शामके वक्त माँ-मौसीने प्रेमनाथके सामने ख़ूब अपना ज़ुबान का रोना रोया, पर प्रेमनाथ न डिगा! न डिगा!! न डिगा!!! माँने कहा—"जबर्दस्ती ब्याह कर दूँगी।" उसने कहा—"कल-ही घरसे चल दूँगा।" माँने कहा—"कुएं-झेरेमें डूब मरूंगी।" प्रेमनाथने हंसीमें उड़ाकर कहा—"अच्छा है, लकड़ियोंका खर्च बचेगा।" माँने कहा—"घर छोड़कर गिरिनार पर्वत पर चली जाऊंगी; पीछे रोता फिरेगा।" प्रेमनाथने कड़ककर कहा—"क्या वाहियात बक-वास लगा रखी है। जहाँ इच्छा हो, जाओ, मैं क़तई विवाह न करूंगा।

जब सभी ज़बानी उपाय काममें आचुके और प्रेमनाथके दिलका क़िला ज्योंका-त्यों खड़ा रहा तो उस दिन रातको—आखिरीबार—मौसीने रोते-रोते आकर कहा—"देख, बेटा! तेरी ज़िद्दसे यह (प्रेमनाथकी माँ) घुल-घुल कर मर जायगी। तेरे पैरोंमें आँचल रखती हूं, इसकी लाज रखले। गौना दो वर्ष बाद हो जायगा।"

यह कहकर मौसीने सचमुच आँचल प्रेमनाथ के पैरों पर रख दिया।

प्रेमनाथ कुछ नरमाया। भरभराकर कहने लगा—"देखो मौसी, ब्याहकी बात तो छोड़ दो। जो तुम्हें अपने वचनका ख़याल है, तो मैं ऐसी तर-कीब तुम्हें बता सकता हूं, जिससे 'गर्मी हो, बिनु आँच जलाये'।"

मौसीने प्रश्न-सूचक सिर हिला दिया।

प्रेमनाथने कहा—"देखो, तुमने लड़कीवालोंसे यही तो वायदा किया है कि लड़केकी पसन्द पर सम्बन्ध स्थिर होगा। उनसे कह दो—"लड़केने लड़-कियां देख लीं; उसे पसन्द न आईं।"

मौसीने पूछा—"क्या सचमुच तूने लड़कियां देख लीं?"

"नहीं," प्रेमनाथने कहा—"पर उनसे कह देनेमें क्या हर्ज़ है?"

मौसीने कहा—"कह कैसे दूँ, पसन्द न होनेका कोई बहाना भी तो हो। लड़कियां क्या हैं, फूल हैं फूल। दूसरे यह कि लड़कियाँ हमेशा अपनी माँताओं के साथ रहतीं हैं, उनकी अज्ञानतामें तुम्हारा उन्हें देख लेनेका बहाना ठीक नहीं है।"

प्रेमनाथके मनने अचानक प्रलोभनके झूले पर लम्बी पेंच मारी। बोला—"अच्छा, मैं तीनों लड़कियों को देख लेता हूं; फिर कह दूंगा ना-पसन्द हैं।"

मौसीने कहा—"ना-पसन्द हों तभी या वैसे-ही।"

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रेमनाथने कहा—"यह मेरी इच्छा और पसन्द पर निर्भर है।"

मौसीको आशा बँधी। प्रेमनाथने इस नवीनोदित विचारके अनुसार काम करना थिर किया—तीनों लड़कियोंको देखना—और फिर नापन्द कर देना।

प्रेमनाथ लड़कियां देखने गये। मौसीको आशा थी, माँको घोर निराशा! पर उस घोर निराशाके बीचोंवीच आशा बड़ी सुरक्षित अवस्थामें जमी बैठी थी।

बुद्धिमान युवक प्रेमनाथ काजरकी कोठरीमेंसे निकलकर आये—नीचेसे ऊपर तक स्याह होकर। सब सिट्टी गुम हुई। सारी दृढ़ता उड़ गई। कन्हैयाका चढ़ाया हुआ रंग कच्चा होकर धुल गया। वीरतापूर्ण सिद्धान्तकी पहली बातें मुरझाकर दुर्बल हो गईं। कन्हैयाके द्वारा सिंह बनाये हुए तर्कने माँ-मौसीके आगे सियारका रूप धारण कर लिया। प्रेमनाथ कान्ताके रूपकी कीचड़में फिसलकर चारों-खाने चित्त हो गया और घर लौटकर, विवेककी ललकारको बन्दर-घुड़की समझ, उसने धीरे-धीरे—हाँ-ना करके, सोच-समझ कर उस्तादीके साथ—अपना मत दे दिया—"शादी करूँगा तो,—तुम्हारी ज़बानकी लाज रखनेको—पर पीछे चाहे भीख माँगना, पढ़ाना होगा।"

(३)

प्रेमनाथ एक दिन शामको बाग़में पहुंचा, तो एक पेड़के नीचे ग़मग़ीन सूरत बनाये कन्हैयाको बैठे हुए देखा। उसने पास पहुंचकर पुकारा। कन्हैयाने सिर उठाकर प्रेमनाथको देखा और सिर झुका लिया। प्रेमनाथके कलेजेमें धक-से हो गया। कई सप्ताहसे वह व्याहकी बात कन्हैयासे छिपाये आ रहा था। उसकी ऐसी स्थिति देखकर प्रेमनाथको अपना भेद खुल जानेका अनुमान हुआ। एक बार उसकी इच्छा हुई—चुपचाप यहांसे भाग जाऊं। फिर उसने सोचा—हो सकता है, इसे कोई मानसिक व्यथा हो। अगर मैं इस प्रकार चला गया, तो यह क्या सोचेगा! नहीं जी, मिलना तो चाहिये ही।

प्रेमनाथ कन्हैयाकी तरफ़ बढ़ता हुआ अपना हृदय मज़बूत बनाने लगा। इतनेमें—प्रेमनाथके पास आ खड़े होने पर—कन्हैयाने सिर उठाकर, सफेद आँखें उनपर जमा कर कहा—"सुनता हूं, तुम्हारा व्याह होनेवाला है?"

कन्हैयाने यह बात इस प्रकार कही जैसे कर्ज़-देनेवाला क़र्ज़दारसे कहता है। प्रेमनाथकी वह श्रद्धा और अन्ध-विश्वास तो—कन्हैया पर—समाप्त हो ही चुके थे, यह बात उसे कुछ चुभी भी, मनमें कुछ उपेक्षा भी पैदा हुई। बैठकर गम्भीरतासे लापरवाही दिखाते हुए—कहने लगा—"हाँ, यार! रोता हूं और मजबूरीपर पछताता हूं।"

कन्हैयाने सजग होकर कहा—"अभी पछतानेकी क्या बात है? अभी तक तो कुछ नहीं बिगड़ा है, व्याह नहीं हुआ है।"

प्रेमनाथने माँके वचनकी बात कही, कुँएमें डूब मरनेकी आशङ्का बताई, गिरिनार चले जानेका रोना रोया।

कन्हैयाने एक-ही बातमें तीनों बातोंको काट दिया। कहा—"देखो, भाई! ये सब धमकियाँ निस्सार हैं। तुम्हारी माँ न तो गिरिनार ही जा सकतीं थीं, और न कुँएमें ही गिर सकती थीं;

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दोनों बातोंका भय दिखाकर वह एक भी नहीं कर सकतीं। निश्चय रखो यह मनोविज्ञान है।"

प्रेमनाथने रोनी सूरत बनाकर कहा—"भाई! आजतक कभी माँ की आज्ञा न टाली थी; सिर्फ़ इसे ही टालनेका इरादा कर चुका था। पर क्या करूँ, उनकी ज़बानकी लाज रखनेके लिये इस जञ्जालमें फँसने पर उतारू हुआ हूं, माँकी ज़बानके लिये ही मैं अपने सिद्धान्तका ख़ून कर रहा हूं।"

"मत करो, अपना और अपने सिद्धान्तका ख़ून!" कन्हैयाने तेजीसे कहा—"माँकी ज़बानकी लाज न रखनेका पाप तुमपर न लगेगा। छोड़ो, इस प्रलोभनको, और मारो ज़ोर, इस खिसकती हुई दलदलमेंसे निकलनेके लिये। मैं तुम्हारा हाथ पकड़ कर खींचता हूं।"

कन्हैयाकी सतेज बातें सुनकर प्रेमनाथ उसके अलङ्कार भरे रङ्गीन—पर प्रभावशाली—उपदेश पर मुग्ध हो उठे। एकबार फिर जी हिचकिचाया। पर वह सलोना मुँह, वह आकर्षक लज्जा, वह वेधक चाल और वह चमकीला रूप सामने आकर उनके इस क्षणिक आवेशको निगल गया। प्रेमनाथने ढीठ होकर कन्हैयासे तर्क छेड़ दिया। कहा—"भाई तुम्हारे उपदेशको मैं आदर्श और मान्य नहीं कह सकता। रामने तो पिताका बचन रखनेके लिये राज-पाट त्यागा और बन-गमन किया; क्या मैं कलियुगी पुत्र स्नेह-मयी माताकी बचन-रक्षाके हेतु इतना भी नहीं कर सकता?"

कन्हैयाने बिगड़ कर कहा—"वह एक आदर्श कल्पना है। अब न वह समय है, न वह परिस्थिति।"

प्रेमनाथने देखा—कन्हैयाकी युक्ति कुछ ढीली है। उसने अपने मतको धका देकर और लुढ़काया—"और भाई, माँकी इच्छा तो—बचन देनेमें—किसी प्रकार भी मेरा बुरा चीतने की थी नहीं। फिर भी अगर मैं उनके वचनकी रक्षा न करूं, तो मुझ-सा कृतघ्न कौन होगा? फिर, एक बात और है, कि मैं उनका एकलौता बेटा हूं,—ब्याह तो मुझे करना ही होगा? अब न सही, दो वर्ष बाद सही। सो मैं गौना शायद दो वर्ष बाद कराऊंगा। लड़की ऐसी है, कि अच्छी लड़कियोंकी इस महंगीमें वह हज़ार दोहज़ारमें एक है। रूपमें, गुणमें, बोल-चालमें..........."

"अच्छा, अच्छा रे सूअर! तू उसे देख भी आया है?" कन्हैयाने सीना तानकर स-रोष कहा—"अब इन व्यर्थकी युक्तियोंकी छतरीसे अपनी दुर्बलता छिपानेका प्रयत्न न कर। उफ़! बेचारा ग़रीब युवक! रूपके प्रलोभनमें आगया! अब भी समय है, प्रेमनाथ, भाई प्रेमनाथ, सम्भल जाओ!"

प्रेमनाथने कुछ चिढ़कर, अशङ्कित-सा होकर पूछा—"क्योंजी, ब्याह क्या कोई शेर है, जो आते-ही मुझे ग्रास कर लेगा।"

"उससे भी बुरा!" कन्हैयाने कहा।

"आखिर हो क्या जायगा?" प्रेमनाथने पूछा—"भाई, मैं सब तरह दिलजमई कर चुका हूं। मेरी पढ़ाईमें विघ्न न पड़ेगा।"

कन्हैयाने स्थिर दृष्टिसे प्रेमनाथको ताका, फिर काग़ज़-पेंसिल निकाल कर कुछ लिखा और पुर्जा मोड़कर प्रेमनाथके हाथमें देकर कहा—"इसे शीशेमें बन्द करके रखना और ब्याहके चार महीने बाद पढ़ना।"

प्रेमनाथने हँसकर पुर्जा जेबमें रख लिया। कन्हैया कुछ देर एकटक उसे निहारता रहा।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

फिर उसकी गोरी, गदराई कलाइयों पर, चौड़े चेहरे पर, सुन्दर आँखोंमें, ताज़े ओठोंपर सुर्खी दौड़ गई और वह एकाएक आँसू बहाने लगा—और वह सिर धुनने लगा।

प्रेमनाथ इस नाटकको न समझ सका।

× × × ×

मिलनकी आगने प्रेमनाथका खूब पतन किया। गौना गया चूल्हेमें—ब्याह होतेही वह सुख-समुद्रमें डुबकी मार गया,—और भूल गया कुछ दिनके लिये पढ़ाई लिखाईको, कसरतको और साथही अपने-आपको। याद थी—केवल कान्ता और देखना चाहता चौबीस-घण्टे वह कान्ताकी सूरत को। दिनमें, एक घण्टा बीतता, पुकारते—"पानी, एक गिलास।" पानी लानेवालीका हाथ पकड़कर बैठाल लेते, और फिर घण्टों बातें होती। कभी पानी माँ या मौसी ले आती तो उन्हें बड़ा बुरा लगता, और बहुधा वह पानी ज्योंका-त्यों शाम तक रखा ही रह जाता। माँ-मौसी दोनोंके इस प्रेम-भाव पर प्रसन्न थीं। सोचती थीं—अच्छा है, दोनोंका मन मिल गया है। ईश्वर इसी तरह मिलाये रखें। प्रेमनाथ बड़ा खुश था—फूला न समाता था। एक बार किसी सहपाठीने पूछा—"क्योंजी, प्रेमनाथ, तुमने ब्याह न करनेकी प्रतिज्ञा की थी; यह क्या हुआ?"

प्रेमनाथने बेबाकीसे जवाब दिया—"जवानीके समुद्रकी उत्ताल तरंगोंमें हाथ मारते मारते मुझे जब अपने पर विश्वास न रहा और डूबनेका अन्देशा हुआ तो दुश्मनोंकी नावमें बैठ जाना मुझे श्रेयस्कर जान पड़ा।"

मित्रने मुस्करा कर उपेक्षा-पूर्ण स्वरमें कहा—"अरे म्याँ, क्यों सफाई झाड़ते हो?"

पड़ोसकी लड़की विद्याने सुहाग-रातके दूसरे दिन प्रेमनाथको लम्बा सलाम ठोंक कर हंसते हुए कहा—"भाई साहब, सलाम! मुबारक हो! आपके टूटे सिद्धान्तको, जोड़नेके लिये गोंद लाऊं क्या?"

प्रेमनाथ कटे नहीं; खुश होकर हँसते हुए टल गये।

ब्याहके दो महीने बाद एक दिन प्रेमनाथने ऊपरसे पुकारा—"पानी।"

"रामरे! सर्दीका मौसिम और पानीकी दौं लगाए हैं," मौसीने बड़बड़ा कर कहा—"एक बहाना ज्यादा दिन तक नहीं चलता। पुकारकर ही क्यों नहीं बुला लेता! ऐसी निर्लज्जता किस काम की!"

मौसीकी बड़बड़ाहट प्रेमनाथ न सुन सका।

बात यह थी कि उस दिन मौसीसे प्रेमनाथको कुछ कहा-सुनी हो गई थी और हलके पेटकी मौसीने अपने हृदयके ज़हरको उगल दिया।

फिर बोली—"ले जा री कान्ता! पानी दे आ।"

यह कहकर वह मुंह बिचकाने लगीं।

कान्ता लाजसे गड़ गई। इच्छा हुई, धरती फट जाय और वह समा जाय। चुपचाप बैठी रह गई।

प्रेमनाथने पुकारा—"पानी!"

मौसीने कहा—"दे क्यों नहीं आती हैं, पानी?"

कान्ता थरथराते पैरोंसे पानी लेकर ऊपर चली। सब बात प्रेमनाथसे कही और समझाया—"भविष्य में नीचे जाकर पानी पी आया करो।"

प्रेमनाथ बड़ा बिगड़ा। इधर कान्ताके आनेके बाद माँने मौसीको खूब लताड़ा—उसके इस व्यवहार पर। इधर शामको प्रेमनाथ गरजा मौसी पर।

बस, विरोधका बीज पड़ गया। मौसीके मनमें

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अंकुर जमा—तीनों आदमी चाहते हैं, मैं ज़हर खाकर मर जाऊँ, या घरसे चली जाऊँ, या अलग हो जाऊँ। माँका विचार हुआ—बहन मेरे बेटे-बहूका सुख नहीं देख सकती, उनसे जलती है; ऐसी बहनका मुंह फूंक देना चाहिये। प्रेमनाथको निश्चय हुआ—माँ और मौसी मुझे अलग करके छोड़ेंगी। सारा धन कलेजे-नीचे रखना चाहती हैं, मुझे सूखा ही टरकाना चाहती हैं। कान्ताने विचारा—मेरे कारण ही यह विरोध-भाव पैदा हुआ है, मेरा मर जाना ही अच्छा है।

विरोध बढ़ने लगा—बड़ी तेज़ीसे। चौबीस घण्टे नीचेसे किल-किल सुनाई पड़ती थी। लड़ाई कब चेत उठेगी कोई निश्चय पूर्वक नहीं कह सकता था। रातके एक बजे भी उतनी ही सम्भावना थी, जितनी दोपहरको और सुबहके चार बजे भी उतनी ही आशा थी, जितनी शामको।

प्रेमनाथ चक्कीके पाटोंमें आ गया। माँ-मौसीको झिड़कता तो दोनों छाती पीटकर उसपर बहूके पक्षपाती होनेका लाञ्छन लगातीं, कान्ताको कच्ची-पक्की कहता तो सासजी उपदेश देतीं। बेचारा शोकमें घुलने लगा और मौतको समीप देखने लगा।

एक दिन प्रेमनाथको कन्हैयाके दिये हुए काग़ज़ की याद आई। ढूंढ़ कर पढ़ा। उसमें सिर्फ यह लिखा था—क्यों, ब्याहका मज़ा लूट रहे हो न? परमेश्वर तुम्हारा कल्याण करे।

कालिजमें अगले दिन प्रेमनाथने चार महीने बाद उस दिन कन्हैयासे बात करनेकी कोशिश की। कन्हैयाने रुख न मिलाया। एक पुर्जा लिखकर दे दिया। लिखा था—टूटे पीछे फिर जुड़ं, तो गाँठ-गँठीली होय। प्रेमनाथ घर आकर खूब रोया—"हाय! क्यों इस जञ्जालमें फसा!"

एक दिन कान्ताने रोते-रोते कहा—"मुझे थोड़ा ज़हर क्यों नहीं ला देते। ये रोज़का क्लेश और तुम्हारा घुलना मुझसे नहीं देखा जाता।"

उस दिन गहरी लड़ाई हुई थी। प्रेमनाथ उदास बैठे थे। एकाएक कहने लगे—"ज़हर खा लोगी?"

कान्ताने आँखें पोंछ कर दृढ़तासे कहा—"हाँ, खा लूंगी।"

प्रेमनाथने मुस्कुरा कर कहा—"खा लोगी?"

कान्ता और दृढ़ होकर बोली—"हँसी नहीं, लादो, खा लूंगी।"

प्रेमनाथने उसका मुंह देखा। फिर खिलखिला कर कहा—"दुर पगली!"

दूसरे दिन, तीसरे दिन—तीन दिन—बराबर क्लेश और लड़ाई-झगड़े तोबा-तिल्ला, कोसा-काटीका साम्राज्य रहा। प्रेमनाथकी बुद्धि लोप हो गई। न खाना, न पीना। तीसरी शामको बैठे-बैठे कुछ सोच रहे थे। इतनेमें पड़ोसकी किसी औरतने दूसरीसे कहा—"हरे राम! लड़ाईकी भी कोई इन्तहा होती है। दोनों बेचारी बहूके पीछे पड़ी रहती हैं।"

दूसरीने कहा—"यह लड़ाई किसीकी भेंट लेकर शान्त होगी।" इतनेमें प्रेमनाथने खाँसा। आवाज़ें बन्द हो गईं।

प्रेमनाथके कानोंमें बार-बार ये शब्द गूंजने लगे, "यह लड़ाई किसीकी भेंट लेकर शान्त होगी!"

क्या सचमुच? प्रेमनाथ सोचने लगे—क्या सचमुच भेंट देनी होगी? वे एक घण्टे तक घोर चिन्ता में निमग्न रहे। तन-बदनका होश न रहा। फिर

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

एक घण्टे बाद एकाएक यह कह कर खड़े हो गये---"मैं भेंट चढ़ाऊंगा, आत्म-त्याग करूंगा!"

प्रेमनाथ तीन घण्टे बाद घर लौटे। साथमें थीं दो वस्तुएं---दूधका मटका और पोटासियम सियेनेटकी पुड़िया।

रास्तेमें पुड़ियाकी दवा दूधमें डाल दी और मटका लाकर मेज़पर रख दिया। फिर मुंह फेरकर और आंसू पोंछकर चुपचाप कुर्सीपर बैठ गये। कान्ताने दो-एक बार उदासीका कारण पूछा तो कहने लगे। "कान्ता, मैं तुमसे नाराज़ हूं।"

पतिका जी बहलानेके इरादेसे कान्ताने कहा---"यह नाराज़ी कैसे दूर हो?"

प्रेमनाथने हंसकर कहा---"अगर यह दूध पीलो तो।"

कान्ताने हंसकर कहा---"वाह! यह भी कोई दण्ड हुआ? लाओ अभी पी लेती हूं।"

उसने मटका उठाया।

न शङ्का किया, न कल्पना की और न सन्देह। कान्ताने मटका मुंहसे लगाया---प्रेमनाथकी ओर मुस्कुरा कर देखते हुए।

प्रेमनाथके हृदयमें मानों किसीने जोरसे घूंसा मारा और ललकार कर कहा---"कायर! क्या करता है?"

मटकेका कन्ना ओठोंसे छू गया था। कान्ताने घूंट भरनेके लिये साँस खींचकर जीभ हिलाई ही थी कि प्रेमनाथने चिल्लाकर मटकेमें हाथ मारा और भावावेशने उन्हें मूर्च्छित कर दिया।

कान्ता अवाक् खड़ी थी! मटका टुकड़े-टुकड़े हो गया और दूध जमीन पर फैल गया। प्रेमनाथ जञ्जालमें फंसे रह गये!

अरे समर्पक

(रचयिता---कविवर मिलिन्द)

कसकोंके आंगनमें सुखका सार लुटाते क्यों हो?
इस खँडहरमें निधियोंसे धूनी तपवाते क्यों हो?
अरे समर्पणके मतवाले! करो न ऐसी भूल!
कहाँ कलेजेकी ज्वालाएँ, कहाँ प्रेमके फूल!

अन्तस्थलके बाल, किसी कोमल आँचलके लाल,
ये रसवाले, किसी रसिककी झोली करें निहाल!
अरे, जलनसे कोमलताका मेल मिलाते क्यों हो?
मेरे ज्वालामुखी हृदय पर फूल चढाते क्यों हो?

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हिन्दी शार्टहैण्ड

(लेखक—श्री लाल बहादुर शास्त्री)

वर्तमान युग विचारोंका युग है। क्या पश्चिम क्या पूर्व, सभी ओर विचार-संघर्ष दिखाई पड़ रहा है। सबके विचारोंमें परिवर्तन हो रहा है और अपने विचारोंकी प्रौढ़ता सभी सिद्ध करना चाहते हैं। इन विचारोंके प्रचारके लिये लोगोंके पास दो ही प्रधान साधन हैं, (१) बोलना और (२) लिखना। कितने व्याख्यान रोज भिन्न-भिन्न विषयोंपर दिये जाते हैं, इसका ठीक ठीक अन्दाज़ा लगाना कठिन है। यदि एकसे एक बढ़कर विद्वानोंके दिये हुए व्याख्यानों को केवल सुनकर ही लिपिबद्ध कर दिया गया होता तो आज क्रांतिकारी, गम्भीर दार्शनिक, वैज्ञानिक तथा राजनैतिक विचारोंकी बहुत-सी सुन्दरसे सुन्दर पुस्तकें तैयार हो गई होतीं। इससे सहज ही उस क्षतिका अनुमान किया जा सकता है जो इन व्याख्यान-दाताओंके भाषणोंके लिखनेका कोई साधन उपलब्ध न होनेसे होता है।

ऐसे व्याख्यानोंको लिख लेनेकी आवश्यकता पश्चिममें पहले पहल गिरजाघरोंमें पादरियोंके धार्मिक विषयों पर दिये हुए सुन्दर उपदेशोंको सुनकर प्रतीत हुई। इसलिये यूरोपनिवासी एक ऐसी लिपि खोज़ निकालनेके दृढ़ प्रयत्नमें लगे जिससे वक्ताके मुखसे निकले हुए शब्दोंको तत्क्षण ही लिख लिया जाय। पहले अन्य प्रयत्न भी हुए, परन्तु अन्तमें सर आइजक पिटमैनने अंग्रेज़ी शार्टहैण्डके आविष्कार द्वारा, जो हर तरहसे पूर्ण था, इस कमीकी पूर्ति करके संसारका उपकार किया। अंग्रेज स्वभावसे ही गुणग्राही होते हैं, इसलिये उन्होंने इस कलाकी उन्नतिके सभी साधन सुलभ किये और आज अंग्रेजी शार्टहैण्डका जितना प्रचार है उससे ही उसकी उन्नति और अंगरेजोंकी गुणग्राहिताका अनुमान किया जा सकता है।

इङ्गलैण्ड स्वतन्त्र देश है। वहां शार्टहैण्डका आविष्कार साहित्यकी वृद्धि आदिकी दृष्टिसे किया गया। परन्तु उन्हीं इङ्गलैण्ड निवासियोंने परतन्त्र भारतमें उसी शार्टहैण्डके प्रचारका प्रयत्न यहांके गुलामीकी बेड़ियोंको और जकड़नेके निमित्त किया। ठीक ही है, स्वतन्त्र देशोंमें जो आविष्कार आदि राष्ट्रकी उन्नति और समाजके सुखकी वृद्धिके लिये किये जाते हैं, वे ही उन्हीं राष्ट्रों द्वारा परतन्त्र देशोंकी दासताको दृढ़ करनेके निमित्त प्रयोगमें लाये जाते हैं। यहां अंग्रेजोंने शार्टहैण्डके प्रचारका क्यों प्रयत्न किया? जब उन्होंने देखा कि भारतमें स्वतन्त्रताकी लहर फैल रही है, कुछ स्वतंत्रता प्रेमी वर्तमान शासन-पद्धतिके विरुद्ध आन्दोलन कर रहे हैं और सरकारके विरुद्ध गरम-गरम व्याख्यान दे रहे हैं, तो उन्होंने इन व्याख्यानों-को लिखने और उसपर कार्यवाही करनेकी आवश्यकता समझी। सरकारने रीड क्रिश्चियन कालेज वालोंसे अनुरोध किया कि वे उर्दू शार्टहैंड बनानेका प्रयत्न करें। उर्दू शार्टहैंडका आविष्कार हुआ। यह पिटमैनके शार्टहैंडकी एक प्रकारसे नक़ल है। सी॰

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आई० डी० विभागकी सुगमताके लिये गवर्नमेंटने उर्दू शार्टहैंडकी उन्नतिमें बहुत ही सहायता दी।

कुछ समयसे देशमें अंग्रेजीकी प्रधानता रहते हुए भी हिन्दीका जोर बढ़ रहा हैं। अंग्रेजी शासनके आरम्भ कालमें तो जो दो अक्षर अंग्रेजी पढ़ लेता वह शिक्षित समझा जाता था और हिन्दी संस्कृत-का अच्छा विद्वान भी अशिक्षित माना जाता था। परन्तु अब समय बदल रहा है। जैसे-जैसे देशमें स्वतन्त्रताके भाव उद्दीप्त हो रहे हैं, स्वाभिमान-उत्पन्न हो रहा है और अपनी मातृभाषा हिन्दीकी प्रगतिका विचार सबके हृदयमें उत्पन्न हो रहा है। सभी देशानुरागी सज्जन अपनी मातृ-भाषाकी उन्नति के लिये हिन्दीमें बोलना और लिखना पसन्द करते हैं। कांग्रेसने भी महात्मा गांधीके प्रयत्नसे हिन्दीको अपनाया है। ऐसे समयमें इसकी बड़ी आवश्यकता थी कि हिन्दी-शार्टहैंडका आविष्कार किया जाय।

व्यासजी बोलते जाते थे और गणेशजी लगातार लिखते जाते थे, महाभारतकी इस कथासे यह अनुमान होता है कि यहां प्राचीन कालमें कोई ऐसी विद्या थी, जिससे मुखसे निकले हुए शब्दोंको उसी समय लेखबद्ध कर लिया जाता था। सहज ही उस विद्याको हम शार्टहैंएड कह सकते हैं। इसीलिये बाबू रामदास गौड़जीने जब हिन्दी शार्टहैंएड बनाया तो उसका नाम 'गणेश-लिपि' रखा। हिन्दी शार्टहैंएडके लिये यह नाम उचित और उपयुक्त ही है। वर्तमान हिन्दी शार्टहैंएडका जन्म सन् १९०७में हुआ। श्रीयुक्त पण्डित निष्कामेश्वर मिश्रने बाबू श्रीशचन्द्र बसुके सहयोगसे हिन्दी शार्टहैंएडकी प्रथम पुस्तक लिखी। परन्तु हिन्दीकी प्रधान संस्थाओं—नागरी प्रचारिणी सभा और हिन्दी साहित्य-सम्मेलनने भी—लेखकोंको उत्साह नहीं दिलाया इसलिये वह पुस्तक जहाँकी तहाँ रखी रह गई। उसका दूसरा भाग भी नहीं लिखा जा सका।

१९२१-२२ में जब देशव्यापी असयोग-आन्दोलन आरम्भ हुआ तब हिन्दीमें व्याख्यान देना गौरवकी बात हो गई। जहाँ देखिये हिन्दीमें ही व्याख्यान दिये जाते थे। बड़े बड़े नेता भी हिन्दीमें बोलने लगे। इस आन्दोलनका प्रभाव केवल राजनैतिक क्षेत्रमें ही नहीं बल्कि अन्य क्षेत्रोंमें भी पड़ा। बहुत-सी सभा-सोसाइटियोंमें हिन्दीमें ही व्याख्यान दिये जाने लगे। इस समय लोगोंको हिन्दी शार्टहैंएडकी आवश्यकता विशेष रूपसे जान पड़ी। चारों ओरसे इसकी मांग हुई। सबका ध्यान इस ओर खिंचा। इसकी आवश्यकताको अनुभव करते हुए देशके कुछ गणमान्य नेताओंने हिन्दी शार्टहैंएडके बनाने वालेको कुछ पुरस्कार देनेके लिये भी कहा जिससे लोग इसके बनानेके लिये उत्साहित हों। चारों ओरसे इसकी माँग और आवश्यकताको देखते हुए श्रीयुत् पण्डित निष्कामेश्वर जीको अपनी प्रथम पुस्तकको पूरा करनेकी इच्छा हुई। आपने हिन्दी शार्टहैंएड नामकी दूसरी पुस्तक लिखी। इन पुस्तकों × को प्रकाशित हुए लगभग सात वर्ष हुए। इतना ही नहीं आपसे कुछ सज्जनोंने हिन्दी शार्टहैंड पढ़ लिया है और वे अच्छी गति (Speed) में हर प्रकारके व्याख्यान भी लिख लेने लगे हैं। हिन्दी शार्टहैंडके बनते ही श्रीयुत् पण्डित अलगूराय शास्त्रीने

× 'हिन्दी शार्टहैंड' मूल्य २) 'हिन्दी शार्टहैंडकी कुञ्जी' मूल्य १) मिलनेका पता—श्रीयुत् निष्कामेश्वरमिश्र बी० ए०, एल० एल० बी० लाहौरी टोला, बनारस।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पहले पहल ग्रन्थकर्त्ता महोदयसे शार्टहैंड पढ़ा और लिखनेका बहुत तेज़ अभ्यास कर लिया। आप १३० शब्द फी मिनिटकी स्पीडसे बहुत अच्छी तरह लिख लेते हैं। केवल चार मासके अभ्यासमें जब कि हिन्दी शार्टहैंड बना ही था आपने कतिपय अच्छे व्याख्यानदाताओंके भाषण पूरे पूरे लेकर उनको दिखला कर प्रमाण पत्र प्राप्त किया। आपने गयाकी भारतीय राष्ट्रीय महासभा (Indian National Congress) के हिन्दी व्याख्यानोंका पूरा विवरण लिया। गयाकी कांग्रेसमें हिन्दी व्याख्यान अंग्रेज़ीसे यदि अधिक नहीं तो कम भी नहीं हुए। इसलिये कांग्रेसका कार्य बड़े परिश्रमका था परन्तु उसका सारा विवरण ठीक ठीक कांग्रेसके उस वर्षकी रिपोर्टमें प्रकाशित है। जिस तरह अंग्रेज़ीके व्याख्यान विवरणके साथ प्रकाशित हैं उसी प्रकार हिन्दीके भी व्याख्यान सम्पूर्णतः लिये हुए हैं।

शायद कांग्रेसके जीवनमें यह पहला ही अवसर था कि अंग्रेजी-शार्टहैंड लिखने वालोंके साथ हिन्दी-शार्टहैंड लेखक भी बैठे और रिपोर्टमें अंग्रेजीके साथ-साथ हिन्दीके भी सम्पूर्ण व्याख्यान प्रकाशित हुए। उसके बाद कोकोनाडा, बेलगाम, देहली, कानपुर आदि सभी कांग्रेसोंमें इसी प्रकार समस्त हिन्दी-व्याख्यान लिये गये और सभी जगहों का स्वागतकारिणी समितियोंके अधिकारियोंने ठीक-ठीक विवरण लेनेके लिये लेखकोंकी बड़ी प्रशंसा की और प्रमाणपत्र भी दिये। अन्य सम्मेलनों, लिबरल कानफरेन्सों आदिके सभी हिन्दी-व्याख्यान लिख लिये गये हैं। इस हिन्दी-शार्टहैंड द्वारा उर्दूके व्याख्यान भी बहुत अच्छी तरह लिख लिये जाते हैं। कांग्रेसमें मौलाना आज़ाद और आज़ाद सुभानी साहबने अपना व्याख्यान सुनकर चकित होकर कहा, "मेरे कोकोनाडा कांग्रेसकी तक़रीरका खाका असलके मुताबिक है, यह देखकर मेरे हैरत और खुशीकी हद न रही।" पण्डित अलगूरायजीके अतिरिक्त और कई सज्जनोंने भी हिन्दी शार्टहैंड सीखा है। अलवरके तीन और बीकानेर राज्यके दो सज्जनोंने भी सीखा है। ये सभी महोदय अलवर और बीकानेर राज्यमें अच्छे वेतनोंपर नियुक्त किये गये हैं। जब हिन्दी-शार्टहैंडके लेखक महोदयने इसके सीखनेके लिये लोगोंमें बहुत उत्साह देखा तो काशीमें हिन्दी-शार्टहैंडकी एक पाठशाला स्थापित कर दी, और प्रतिदिन दो घण्टे अपना समय देकर वहां आनेवाले विद्यार्थियोंको शिक्षा देते थे।

पाठशालामें पढ़नेवाले विद्यार्थियों तथा अन्य सज्जनोंसे जिन्होंने इसे सीखा था, यह मालूम हुआ है कि हिन्दी-शार्टहैंडमें प्रति मिनिट १०० शब्दोंकी गति बहुत ही कम समयमें प्राप्त हो जाती है। जहां अंग्रेजी शार्टहैंडमें १०० की स्पीडके लिये कमसे कम छ मास लग जाते हैं और उर्दू शार्टहैंडके लेखक महोदय स्वयं अपनी भूमिकामें इतना अभ्यास कर लेनेके लिये पन्द्रह मासका वक्त कलील बतलाते हैं, वहाँ हिन्दी-शार्टहैंडमें इस गतिके लिये यदि विद्यार्थी उतना ही परिश्रम करे जितना वह अंग्रेजी या उर्दूके लिये करता है तो वह आसानीसे तीन अथवा अधिकसे अधिक चार मासमें काफ़ी ज्ञान प्राप्त कर सकता है। इसके अतिरिक्त इसके पढ़नेमें समय तथा परिश्रम दोनों ही कम लगते हैं। चार मासमें सारी पुस्तककी समाप्ति और १०० शब्दोंकी गति प्राप्त की जासकती है और पढ़नेवालेको उर्दू और अंग्रेजी शार्टहैंडकी

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अपेक्षा आधे भी वाक्य-चिन्ह और शब्द-चिन्ह नहीं याद करने पड़ते।

परन्तु खेद इस बातका है कि इसके सीखनेमें इतनी सुविधायें होते हुए, इतना कम समय लगते हुए भी हिन्दी-प्रेमियोंका ध्यान इस ओर आकर्षित नहीं हुआ है। इसमें सन्देह नहीं कि लेखक महोदय ने गवर्नमेंटकी संरक्षता प्राप्त करनेका प्रयत्न नहीं किया है, नहीं तो इसकी उन्नतिमें सहायता मिलती। परन्तु जब हम स्वावलम्बी बनना चाहते हैं तो इसकी आवश्यकता ही क्या है ? हमें स्वयं अपने साहित्यकी वृद्धिके लिये इसे सफल बनानेका पूरा प्रयत्न करना चाहिये। यदि हिन्दी-प्रेमी तथा हिन्दीके उपासक नेतागण इस ओर थोड़ा भी ध्यान दें तो हिन्दी शार्टहैंडका प्रचार बहुत शीघ्र बढ़ सकता है।

किलोल

(रचयिता—श्री सत्यव्रत शर्म्मा "सुजन")

मैं भी आज चन्द किरणों-सा खेलूँगा लहरोंके संग।
सघन पल्लवों के भीतर से झाकूँगा रजनी के अंग॥
मलय-पवन के मधुर झकोरों-सा चूमूँगा कली-कपोल।
मेघोंकी सुनहली किनारी पर हँस दूँगा रवि-सा लोल॥

नील सिन्धु के शोभन उर पर उतरूँगा मैं उषा समान।
जाल गुलाबी बुन दूँगा मैं गगन पलट पर नित्य अजान॥
पाटल-सा खिल खिल झूमूँगा सरस जवाकुसुमों के बीच।
बिखरा कर मृदु हँसी प्यारसे झट लूँगा मैं आंखें मींच॥

पुष्पोंके पलनों पर प्रेमी अलि-सा गाऊँगा मैं गीत।
हिमकण-सा मैं ढुलक पड़ूँगा हरियालीमें सुना अतीत॥
कोमल लय-सा, मधुर स्वप्न-सा, मद बरसाऊँगा मनमें।
कविकी सुखद कल्पना-सा मैं स्वर्ग बसाऊँगा वनमें॥

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जरा इसे भी पढ़िये

कुछ चुने हुए लोग भूतनाथ तेलके बारेमें अपनी क्या राय देते हैं।

(१) सरदार सुन्दरसिंहजी डेरा-गाजी-खां से लिखते हैं,—सचमुच आपका भूतनाथ तेल अत्यन्त मनोहर है। इससे शिरकी कुल बीमारियाँ दूर हो जाती है। यह मस्तिष्कमें शीतलता लाकर स्मरण शक्तिको बढ़ाता है। मेरी राय है कि सुगन्धित और लाभदायक तेलोंके शौक़ीनोंको दूसरा तेल न व्यवहार कर भूतनाथ तेलको ही सदा व्यवहार करना चाहिये।

(२) कलकत्तेके प्रसिद्ध होमियोपैथिक डाक्टर श्रीयुत बाबू यतीन्द्रनाथ बनर्जी अपना मत जाहिर करते हुए लिखा है—भू नाथ तेल मस्तिष्कके कुल रोगोंको दूर करनेके लिये एक लाभदायक केश तेल है, इसमें जो कुछ औषधियां डाली गई हैं अत्यन्त गुणकारी है. साथ ही इसकी सुगन्ध भी बड़ी मनमोहिनी है।

(३) श्रीयुत लाला बिशनदास साहब मुकाम लाहौर पञ्जाब से लिखते हैं, मैं आपका भूतनाथ तेल बहुत दिनोंसे व्यवहार करता हूं। इसकी मिठी सुगन्ध बहुत ही सुन्दर और कई दिनोंतक ठहरनेवाली हैं, साथ ही ये मस्तिष्कमें शीतलता लाकर स्मरणशक्तिको बढ़ाने बहुत ही उपकारी केश तेल है।

मगर सावधान !

जरा सरोजके पांचवें पृष्ठके तस्वीर पर देखिये।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वियोग-विधुरा

Bhutnath Press Calcutta.

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सपना

(लेखक—श्री 'मुक्त')

(स)

ऊँची और भयावनी प्राचीरोंसे घिरा हुआ, वह सघन बगीचा था।

मेंहदीकी घनी झाड़ियोंमें केतकी फूली हुई थी।

अस्त होनेवाले चन्द्रमाका अस्पष्ट और फीका आलोक धरणी पर फैला हुआ था।

बगीचेके मध्यमें एक सूनासा प्रासाद खड़ा था। उसके प्राणोंकी अनन्त उदासी बगीचेको नीरव निस्तब्धताको बढ़ाती हुई, मनुष्यके हृदयमें, भय और आकुल हाहाकारकी सृष्टि कर रही थी।

उस समय, पानी बरस कर खुल चुका था। धरित्रीके हृदयसे सोंधी सुगन्ध निकल कर वायुमें गूञ्ज रही थी।

प्रासादके चारो ओर लाल कंकड़ोंकी सड़क फैली हुई थी। मल्लिकाके सघन कुञ्जोंके नीचे श्वेत संगमरमरके चबूतरे बने हुए थे। मल्लिकाके झिल-मिल पत्तोंके अन्तरालसे छनकर आती हुई चन्द्रमाकी ज्योतिहीन किरणें अन्धकारमें नाच रही थीं।

रात्रिके अवसान और उषाके आगमनका वह अधिक संयोग था। संगमरमरके चबूतरे पर बैठी हुई उषाकी आंखोंमें अनन्त उदासी थी, प्राणोंमें अतीतकी वेदना-मयी स्मृति। बायें हाथकी अंगु-लियों पर अपने चन्द्रमुखका भार रक्खे हुए देरसे वह कुछ सोच रही थी। वास्तव जगतमें रहते हुए भी उसका हृदय किसी कल्पनातीत लोककी ओर अपना चञ्चल चपल-चरण बढ़ा रहा था।

प्रासादके हृदयमें पीड़ा थी, अकुलता थी, अन्धकार भी था। उसकी ओर देखने पर स्वभावसे ही मनुष्यका हृदय भय और क्रन्दनकी चञ्चल लहरों-से आन्दोलित हो उठता था। न जाने उसके जीवनका अतीतकी कितनी करुणा और वेदनायुक्त कथाओंसे सम्बद्ध था।

उषा अपनी चिन्ताओंमें भूली ही रही; प्रासाद अपने हृदयके अन्धकारमें छिपा ही रहा, तबतक उसके निभृत कक्षमें सरसोंके तेलके दीपकका क्षीण प्रकाश चमचमा उठा। दीपकको आँचलमें छिपाये हुए एक तरुण रमणी छज्जेपर दीख पड़ी। उसके मुंहपर सही हुई वेदनाओंके साथ वार्धक्यका निष्ठुर चिन्ह अंकित था। शीतल समीरके वेगसे बुझते हुए दीपक और लहराती हुई अपनी कुंचित अलकोंको सँभालती हुई उसने पुकारा,—"जीजी।"

उषाके विचारोंमें बाधा पड़ी। चौंककर उसने इधर-उधर देखा। वास्तव जगतमें आकर, जैसे, उसके प्राण अतीतकी दुखद स्मृतिसे व्याकुल हो उठे। खोयी-सी उसने अपनी आंखोंसे एक बार चारों ओर देखा।

रमणीने चञ्चल होकर फिर पुकारा, "जीजी! जीजी!!"

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उषाके पैर अपने ही आप प्रसादकी ओर बढ़ चले। अन्धकारसे भरी हुई सीढ़ियोंको एक छलांगमें वह पार कर गयी। रमणीके पास पहुंच कर उसने पूछा—"सन्ध्या, रञ्जन कहां है ?"

सन्ध्याने कुछ उत्तर न दिया। शायद उत्तर देनेको उसके पास कुछ था ही नहीं।

उषाने फिर पूछा—"बोलती क्यों नहीं, सन्ध्या ! मेरे रञ्जनको तुमने क्या किया ?"

सन्ध्याके होंठ हिलकर चुप हो गये। मानों उसे जो कुछ कहना था, वह इतना ही कठोर, इतना ही आवञ्छनीय था।

उषाका हृदय अथिर हो उठा।

"बोलो, बोलो सन्ध्या, तुमने मेरी धरोहरका क्या किया ?" वह चिल्ला उठी।

अपने उच्छ्वसित हृदयके वेगको दोनों हाथोंसे सँभालती हुई सन्ध्याने उत्तर दिया—"हाय जीजी ! मैं बड़ी अभागिन हूं। तुम्हारी धरोहरकी रक्षा नहीं कर सकी ! मैंने उसे खो दिया।"

छाती पर पत्थर रखकर उषाने सब सुना। उसके हृदयमें बल नहीं था, आंखोंमें जल भी नहीं। वह खोयी-सी खड़ी रह गयी। वेदनाकी क्या इससे भी कठोर अनुभूति संसारमें हुआ करती है ?

(प)

उषा और सन्ध्या दोनों बहनें थीं, एक मां-बापकी सन्तान और एक ही मां-बापके आदर-दुलारमें पली हुई थीं। जीवनमें दुखका मुंह उन्होंने नहीं देखा था। सोचा था हलचलसे भरे हुए सुखके ये खूबसूरत दिन आज्ञाकारी सेवककी भांति-सदा उपस्थित रहेंगे। किन्तु मनुष्यकी सोची हुई बात ही सच्ची नहीं हुआ करती तो इनका सोचना कैसे सफल होता ?

सहसा-पतन शील विद्युतकी भांति एक दिन दुःखका पहाड़, उनके जीवन पर भहरा पड़ा।

उषा बड़ी थी, सन्ध्या छोटी। क्रमसे इनके पति मदन और वसन्त भी इसी वयके थे। घर भरापूरा था। वैभवकी तरल तरंगें परिवारमें हिलोरें मारा करती थीं। आनन्दके कोलाहलसे दिवा-निशि प्रासाद मुखरित हुआ करता था। किन्तु संसारके चिर सत्य—मृत्युके सम्मुख उनका अस्तित्व के घड़ी टिक सकता था ?

एक दिन, मृत्युका अमर सन्देश लेकर काल-ज्वरने प्रासादमें प्रवेश किया और इन दो अभागिनोंको अनन्तकाल तक दुःखके समुद्रमें डूबने उतरानेके लिए अकेली छोड़ कर, परिवारके सब लोगोंको अपनी सत्य और सुन्दर गोदमें आश्रय दिया।

मृत्युके मुखसे उषाकी गोदका केवल एक खिलौना बच सका था। सेवा और यत्नकी छायामें उन दो बहिनोंने केवल उसी एक स्मृतिको बचा पाया था।

जीवनके दस उदास वसन्त अर्थहीन भावसे ही न जाने कब व्यतीत हो गये। देखते ही देखते ऊषाकी अन्धी आंखोंकी लकड़ीने उगे हुए गुलाबके फूलकी भांति सुन्दर रूप धारण किया। किन्तु संसारकी सारी अच्छाई और सुन्दरताको ईश्वर शायद स्वर्गमें ही रखना चाहता है। एक दिन वहांसे रञ्जनका आमन्त्रण भी आही पहुंचा।

दुख सहते सहते उषाका मोमसा कोमल कलेजा शायद पत्थरसे भी कठोर हो गया था। जब रञ्जन की हालत बहुत शोचनीय हो गयी, तो सन्ध्या पर

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उसका भार छोड़ कर वह संग-मरमरके चबूतरे पर जाकर अपने कातर हृदयका सारा आकुल उच्छ्वास मङ्गल-मयके चरणों पर उँड़ेलने लगी थी।

*　　*　　*　　*

सन्ध्याकी बातें सुनकर कुछ देरके लिये उषा चेतना हीन-सी हो गयी। किन्तु शीघ्र ही संभल कर उसने कहा—"संध्या, तुम झूठ बोलती हो। सब कुछ खोकर मैंने जिस वैभवको संचित किया है, वह खोया नहीं जा सकता। अवश्य ही मेरा रञ्जन उद्यानके सघन कुञ्जोंकी छायामें कहीं विश्राम कर रहा होगा। चलो, हम लोग उसे ढूंढ़ लावें।

उत्तरकी विना प्रतीक्षा किये ही सन्ध्याको अपने पीछे आनेका इशारा करके उषा सीढ़ियोंसे नीचे उतर गयी। लाल सड़ककी चक्करदार गतिके साथ वह उद्यानके एक निभृत-प्रान्तकी ओर चल पड़ी। मिट्टीकी मूर्तिके समान चेष्टा-हीन भावसे सन्ध्या उसके पीछे हो ली।

दोनोंने मिलकर उद्यानका कोना—कोना ढूंढ़ डाला। किन्तु प्यारे रञ्जनका कहीं पता न मिला।

"संध्या!" उषाने पुकारा—"हाँ जीजी!" संध्याने उत्तर दिया।

"मेरा रञ्जन किस खोहमें छिप गया है, सन्ध्या! इस निर्दय खेलका अन्त कब होगा बहिन!"

"जीजी!"

"क्या कहती हो सन्ध्या?"

"तुम पागल क्यों हुई जाती हो जीजी?"

"जो चला गया वह प्राण दे देने पर भी फिर न मिलेगा। हम लोगोंको छोड़ कर रञ्जनने जिस चिर सुन्दर देशकी यात्रा की है, ईश्वरसे प्रार्थना करो जिसमें वहीं चलकर हम लोग भी सदाके लिये उससे मिल सकें। वह मिलन अक्षय होगा। उस देशमें विरह-विच्छेद नहीं होता।

सन्ध्याकी वाणीमें कम्पन था, हृदयमें छलकता हुआ क्रन्दन। वह सँभल न सकी। रो पड़ी। आंखोंसे गङ्गा-जमुनाकी धाराएँ बह चलीं।

"छिः! तुम रोती हो सन्ध्या!" उषाने कहा—"रञ्जन हम लोगोंको छोड़कर कहीं नहीं जा सकता। इतना निष्टुर नहीं है वह। चलो एक बार फिर हम लोग उसे ढूंढ़नेकी कोशिश करें।"

अर्थ-हीन उदास दृष्टिसे सन्ध्याने उषाकी ओर देखा। उषाके हृदयकी अगाध वेदना उसपर प्रति-बिम्बित हो रही थी। उसने मन-ही-मन कहा—हाय रे मनुष्यका मोह! हाय रे मायाका संसार!

(ना)

सरोवरके चञ्चल जलमें लहरियाँ उठ रही थीं। कूलों तक लबालब पानी भरा हुआ था। सरोवरके मध्यमें एक लौह-स्तम्भ अटल भावसे मस्तक ताने हुए संसारकी असारताका निष्टुर गीत गा रहा था। कमलके लाल फूल फूले हुए थे। उनके पत्तों पर बरसे हुए जलकी मोती-सी बूंदें चमक रही थीं। चारों ओर सेवार फैले हुए थे।

तटकी पतली सीढ़ियों पर माँकी गोदमें रञ्जन मचल रहा था—"माँ, मैं लाल-लाल फूल लूंगा।" उषाने कहा—"मैं तुझे बहुतसे लाल-लाल फूल दूंगी, बेटा! वे तो निकम्मे हैं।" उषाने गुलाबके कई फूलोंसे रञ्जनकी छोटी-सी हथेली भर दी।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

"नहीं माँ—"रञ्जनने गुलाबके फूलोंको जलमें फेंककर हठ किया—"मैं तो वही फूल लूंगा। उसे ही मँगा दे।

बच्चेके हठसे क्षुब्ध होकर उषाने आशा भरी दृष्टिसे चारों ओर देखा। इतने हीमें मौका पाकर रञ्जनने माँके हाथोंसे अपनेको छुड़ा लिया और पल भरमें सरोवरके किनारे बँधी हुई डोंगी पर जा बैठा। जबतक उसकी ओर देखकर उषा हाय-हाय करती ही रही रञ्जनने अपने नन्हें हाथोंमें पतवार लेकर डोंगीका बन्धन खोल दिया।

पतवारके हलके आघातके साथ डोंगी बह चली। उषा बहुत चिल्लायी, मगर, रञ्जनने ध्यान न दिया। फूलोंके आकर्षणने उसे ऐसा ही मोह लिया था।

देखते ही देखते—विपत्तिके वादलोंकी तरह आसमानमें काले-काले वादल फैल गये। पुरवैया वायुके प्रवल झकोरोंने सरोवरके हृदयमें उत्क्रान्ति मचा दी। हलकी डोंगी प्रकृतिके निष्ठुर आघातोंसे जर्जर हो उठी, डोलने लगी।

तटसे एक बार फिर उषा चिल्ला उठी—"लौट आओ मेरे प्यारे! मेरे लाल! मैं तुन्हें वैसा ही फूल मंगा दूगी।"

किन्तु, उषाकी वातोंपर ध्यान देनेका रञ्जनको अवकाश ही न था। रञ्जन प्रायः फूलोंके समीप तक पहुंच चुका था।

उसने जोरसे दो डाँड़ और मारा, और, वह फूलोंके बीचमें था—आनन्दसे उछलते हुए हृदयके साथ उसने दोनों हाथ फूलोंकी ओर बढ़ा दिया। डोंगी हिल उठी। ठीक इसी समय प्रचण्ड वायुके एक झोंकेने सहारा दिया। पलक मारते रञ्जन जलके अन्दर हाथ पैर पीटते देखा गया। सेवारके समूहको अधारके लिये पकड़ा। सेवार उसके पैरमें लिपट गये। हाथ पैर चलाना बन्द हो गया। जलकी लहरियाँ दूर तक दौड़ गईं। फिर सब शान्त हो गया।

उषा सब देख रही थी, उसके हृदयमें बवंडर उठ रहा था। रञ्जनको जलमें गिरते हुए देखकर एक बार चीख उठी। सहायताके लिए एकबार उसकी करुण वाणी पुकार उठी। किन्तु प्रतिध्वनिके निष्ठुर अट्टहासके सिवा उसकी सहायता करनेवाला वहाँ कोई न था।

स्नेह कातर आंखोंमें जल भरकर वेदना-व्यथित हृदयमें साहस भरकर वह स्वयं ही सरोवरके अगाध जलमें कूद पड़ी!

किन्तु उसकी आंखें खुल गईं। उसने देखा—उषाकालके सूर्य संसारको अतीतका रक्त-रञ्जित इतिहास सुना रहे हैं और वह मल्लिकाके सघन कुञ्जोंके नीचे संगमरमरके चबूतरे पर उदास बैठी हुई थी।

× × × +

पासके आम्र-वृक्षसे एक कोयल कूक उठी मानो वह अपनी भाषामें कह रही थी—तुम दुख न करो उषा! मनुष्यके हृदयकी दुर्लभ आशाएं स्वप्नमें प्रत्यक्ष होकर कभी कभी उसका निष्ठुर उपहास किया ही करती हैं!

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

खादीकी प्रगति

(लेखक—श्री कन्हैयालालजी शास्त्री)

चरखा-सङ्घकी स्थापना सितम्बर १९२५ में हुई थी। लेकिन संगठित रूपसे खादीका काम कोकोनाड़ा की कांग्रेसके बाद अर्थात् जनवरी १९२४ से ही हो रहा है। इसलिये चरखा-सङ्घकी सन् १९२७-२८ की रिपोर्ट सङ्घके कार्यों की तीसरी रिपोर्ट होते हुए भी खादी कार्यकी पाँचवीं रिपोर्ट है। इस वर्ष (सन् १९२७-२८ में) खादीके कार्यकी कितनी प्रगति हुई, चरखासङ्घको अपने प्रयत्नोंमें कितनी सफलता मिली, किन कार्यों में वह असफल हुई और खादी आन्दोलनकी आज क्या अवस्था है—इत्यादि बातोंकी जानकारीके लिये यह आवश्यक है कि विगत वर्षकी रिपोर्टका अध्ययन पिछले सभी वर्षोंकी रिपोर्टों को सामने रख कर किया जाय। इस प्रकार तुलनात्मक दृष्टिसे विवेचना करने पर यह बात स्पष्ट हो जायगी, कि यद्यपि कई दृष्टियोंसे विस्तारकी बातोंमें कहीं कहीं कुछ ढीलापन दिखाई देता है और कहीं कहीं पिछले वर्षों की अपेक्षा क़दम पीछे हटते नज़र आते हैं, तो भी सारी बातोंको सामने रखते हुए यह कहा जा सकता है कि पिछले वर्ष खादी आन्दोलनको अच्छी सफलता मिली है और उसकी नींव पहलेकी अपेक्षा बहुत अधिक मज़बूत हुई है। ऐसे विषयोंका अध्ययन करते समय एक बात ध्यानमें रखना अत्यन्त आवश्यक है और वह यह कि केवल अङ्कोंके आधार पर कोई राय नहीं कायम की जा सकती। इसके सिवाय अङ्कोंके ठीक-ठीक विश्लेषण किये बिना उनका मूल्य जाना भी नहीं जा सकता। उदाहरणके लिये मान लीजिये कि किसी वर्ष २५ लाख रुपयोंकी खादी बिकी हो और उसके दूसरे वर्ष २६ लाख की। अब वास्तवमें केवल इन दो अङ्कोंको देखकर यह नहीं कहा जा सकता कि किस वर्ष अधिक खादी बिकी। क्योंकि हो सकता है कि दूसरे वर्ष खादीका दाम बहुत बढ़ा दिया गया हो और पिछले वर्षकी अपेक्षा कम तादादकी खादीसे भी अधिक रुपये आये हों। दूसरी ओर अगर खादीके दाममें कुछ कमी की गई हो तब उसकी वास्तविक वृद्धि उससे कहीं अधिक होगी जो कि उपरोक्त अङ्कोंकी तुलनासे प्रगट होती है। यह तो एक बहुत मामूली उदाहरण हुआ, जो केवल उत्पत्ति और बिक्रीसे ताल्लुक़ रखता है। लेकिन खादी आन्दोलनके तो कई पहलू हैं और अभी वह अपनी प्रारम्भिक अवस्थामें ही है। इसलिये उसकी स्थितिकी वास्तविकताका पता लगानेके लिये अङ्कोंके ठीक ठीक विश्लेषणके अतिरिक्त उन तमाम बातोंका भी ख़याल रखना होगा जो सचमुच उसकी नींवको मज़बूत करनेमें सहायक या बाधक होती हैं।

कार्यक्षेत्र

काम्रेसके विधानमें समस्त भारतवर्ष २१ सूबोंमें बटा हुआ है। इनमेंसे इस वर्ष सिन्ध, हिन्दोस्तानी—मध्य—प्रान्त और पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तमें

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

खादी सम्बन्धी कोई काम नहीं हुआ। आसामका भी रीपोर्टमें कोई जिक्र नहीं है—इससे मालूम होता है कि वहांका काम बन्द हो गया। सन् १९२६-२७ में वहां चरखासङ्घका लगभग ८ हज़ार रुपया खादीके काममें लगा हुआ था। दिल्ली और गुजरात इन दो प्रान्तोंमें चरखासङ्घकी कोई शाखा नहीं है, पर अन्य सार्वजनिक संस्थाओंके द्वारा वहां काम होता रहा। बम्बईमें सङ्घकी एक बड़ी दूकान मात्र है। शेष १४ प्रान्तोंमें चरखासङ्घकी शाखाएं, सङ्घके एजेण्ट और मंत्रीकी निगरानीमें खादीका काम कर रही हैं। सङ्घने सहूलियतके लिये मराठी मध्य प्रदेश और बरारको महाराष्ट्रके साथ, तथा केरलको तामिलनाडू प्रान्तके साथ मिला दिया है। इस प्रकार इन १४ प्रान्तोंका कार्य सङ्घके ११ एजेण्टों और मंत्रियोंके द्वारा होता है।

आर्थिक अवस्था

इस वर्ष सङ्घकी आमदनीका मुख्य ज़रिया था, देशबन्धु स्मारक कोषके लिये गान्धीजी द्वारा उगाहा हुआ चन्दा। इस मदसे सङ्घको ३४४६१२≡)७ मिले। वर्षके अन्तमें सङ्घकी कुल पूंजीकी मालियत २२०१९७६॥) पौने नौ पाई की बतलाई गई है। लेकिन उसकी वास्तविक हैसियत इससे कम है। बात यह है कि इस वर्ष की आमदनीमें काग़ज़ी लिखा-पढ़ी पर कुछ ऐसी रक़में भी शामिल हैं जो वास्तवमें सङ्घको मिली नहीं हैं, पर काग़ज़ पर दिखाई गई हैं। चरखा-सङ्घकी पूर्ववर्तिनी संस्था अखिल भारतीय खादी-बोर्डने भिन्न भिन्न प्रान्तोंको कुछ क़र्ज़ दिया था जो अभी तक वसूल नहीं हुआ है, पर बहीमें क़र्ज़दारोंके नाम लिखा हुआ है। यह रक़म अब चरखासङ्घके हिसाबमें दे दी गई है, पर उनकी वसूलीके कोई लक्षण नहीं है और शायद अन्तमें हिसाब ठीक करनेके लिये वही परसे भी उसे काट देना पड़े। इस अवस्थाका ख़याल रखते हुए वर्षके अन्तमें सङ्घकी वास्तविक पूंजी १९८१०१०॥) पौने तीन पाई।

चरखासंघने अपनी पूंजी दो प्रकारसे लगाई है। एक तो स्वतः खादीके उत्पत्ति-केन्द्र और उसकी बिक्रीके लिये दूकानें खोलकर और दूसरे खादीका काम करने वाले अन्य संस्थाओं अथवा व्यक्तियोंको कर्ज देकर। इसवर्ष कुल २१७१६३५|||≡) ३ की पूजी लगी हुई थी। सन् १९२६-२७ से इसकी तुलना करनेके लिये दोनों वर्षोंके अङ्क नीचे दिये जाते हैं—

	१९२७-२८	१९२६-२७
स्वयं चरखा संघके द्वारा	१५६७४२१|||=) ८	१५२१०४३|||≡) ३
अन्य संस्थाओंको ऋणके रूपमें	६०४२१४) ७	४३३३३३-) ८

इन अङ्कोंको देखनेसे दो बातें साफ जाहिर होती है। एक तो यह कि इस वर्ष सन् १९२६-२७ की अपेक्षा लगभग दो लाख रुपयोंकी पूंजी अधिक लगी है और दूसरे यह कि इन दो लाख रुपयोंमेंसे लगभग पौने दो लाख रुपये अन्य संस्थाओंको ऋणके रूपमें दिये गये हैं। लेकिन इससे न समझना चाहिये कि चरखा सङ्घकी पूंजीमें कोई हेर फेर नहीं हुआ। सन् १९२६-२७ में सङ्घकी तामिलनाडूकी शाखामें लगभग ३ लाख रुपये लगे थे और इस वर्ष ५ लाख २२ हजार लगे हैं। इस प्रकार इस प्रान्तमें सवा दो लाख रुपयोंकी पूंजी अधिक लगाई गई है। लेकिन इस वर्षके चरखा-सङ्घकी पूंजीमें इतनी अधिक वृद्धि न दिखाई देनेका कारण यह है कि बम्बईकी दूकानमें सवा लाख रुपयोंकी जो पूंजी लगी है वह

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पिछले वर्ष चरखा सङ्घके मदमें दिखलाई गई थी, लेकिन इस वर्ष अन्य संस्थाओंके मदमें शामिल की गई है। इसके सिवाय लगभग पौन लाख रुपयोंका और भी हेर-फेर हुआ है। अस्तु।

उत्पत्ति और बिक्री

इस प्रकार इस वर्ष लगभग पौने बाइस लाख रुपयोंकी पूंजीसे खादीका काम चलाया गया, जिससे २४१६३८२ रुपयोंकी खादी तैयार हुई और ३३०८-६३४ रुपयोंकी बेंची गई। सन् १९२६-२७ के अङ्कों से इसकी तुलना करनेके लिये दोनों वर्षोंके अङ्क नीचे दिये जाते हैं—

	उत्पत्ति	बिक्री
	रुपया	रुपया
१९२६-२७	२४०६३७०	३२८८७९४
१९२७-२८	२४१६३८२	३३०८६३४

सन् १९२६-२७ की रिपोर्टमें उस वर्षकी बिक्री ३२८८ ७९४ रुपयोंकी बतलाई गई थी पर इस वर्षकी रिपोर्टमें वही रकम ३३०८६३४ रुपयेकी बतलाई गई है। खोजनेसे पता लगता है कि उस वर्ष पञ्जाब प्रान्तमें १०६८२४ रुपयोंकी खादी बिकी थी, जो भूलसे उस वर्षकी रिपोर्टमें १६६८२४ रुपये लिख दी गई थी। अस्तु। इन दोनों वर्षोंकी उत्पत्तिके अङ्कों-की तुलना करनेसे उनमें कोई विशेष अन्तर नहीं दिखलाई देता। इस वर्ष केवल दस हजार रुपयोंकी वृद्धि मालूम होती है। किन्तु प्रत्येक प्रांतकी उत्पत्ति के अङ्कोंपर दृष्टि डालनेसे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि यदि आन्ध्र, तामिलनाडू और गुजरात इन तीन प्रान्तोंको छोड़ दिया जाय तो शेष प्रान्तोंमें इस वर्ष सन् १९२६-२७ की अपेक्षा खादीकी उत्पत्तिमें २१०-७३४ रुपयोंकी वृद्धि हुई है। उपरोक्त तीनों प्रांतोंकी उत्पत्तिमें गुजश्ता सालकी अपेक्षा २००७२२ रुपयोंकी कमी हुई, जो नीचे लिखे अङ्कोंसे प्रगट होगी—

	उत्पत्ति	
	१९२७-२८	१९२६-२७
	रुपया	रुपया
आन्ध्र	२९४०८३	३५२०३७
तामिलनाडू और केरल	९९७४९९	१०९४६३३
गुजरात	३७६४६	५२२५०
	१३२९१९८	१५२९९२०

आन्ध्रकी उत्पत्तिमें कमी होनेका कारण यह है, कि इस प्रान्तमें जहाँ जहां बारीक खादी बनती थी, वहां वहां इस साल प्रायः कुछ भी काम नहीं हुआ। पूरे सात महीनों तक तो काम बिलकुल ही बन्द रहा। बात यह हुई कि बारीक खादीका काम कुछ खानगी संस्थाएं करती हैं, जिन्हें ऋणके रूपमें चरखा सङ्घसे सहायता दी जाती है और इस आशयका प्रमाण पत्र भी दिया जाता है कि इन संस्थाओं द्वारा बनाई गई खादी शुद्ध होती है। किन्तु कुछ संस्थाओंके सम्बन्धमें चरखा-सङ्घको मालूम हुआ कि वे अपने यहां मीलके सूतका भी प्रयोग करते हैं। जांच करने पर यह बात सही मालूम हुई और उन संस्थाओंके नामके प्रमाण-पत्र रद्द कर दिये गये। तामिलनाडूकी उत्पत्तिमें कमी आनेका एक कारण यह भी हुआ कि कपासका दाम बढ़ जानेके कारण बहुत-सी खानगी संस्थाओंने अपना काम बन्द कर दिया। गुजरातकी उत्पत्तिमें पिछले तीन वर्षोंसे बराबर कमी हो रही है जैसा कि नीचेके अङ्कोंसे प्रगट होगा—

	उत्पत्ति
१९२५-२६	८९८७२ रु०
१९२६-२७	५२२५० रु०
१९२७-२८	३७६४६ रु०

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अर्थात् इस वर्ष सन् १९२५-२६ की अपेक्षा ५२ हजार सन् १९२६-२७ की अपेक्षा १४ हजार कमकी उत्पत्ति हुई। रिपोर्टमें इसका कोई कारण नहीं बतलाया गया है किन्तु अनुमान किया जा सकता है, कि बाढ़ और बारदोली सत्याग्रह आन्दोलनके कारण कार्यकर्ताओंकी कमी हो जानेसे खादीकी उत्पत्ति उत्तरोत्तर गिरती गई होगी। इस प्रकार हम देखते हैं कि इन तीनों प्रान्तोंमें भी केवल आकस्मिक कारणोंसे ही उत्पत्तिमें कमी आई है। यदि ये आकस्मिक कारण न उपस्थित हुए होते और अवस्था साधारण रहती तो इस वर्ष समस्त भारतवर्षमें खादीकी उत्पत्ति लगभग २७ लाख रुपयोंकी हुई होती।

अब बिक्रीके अङ्कोंको लीजिये। सन् १९२६-२७ से मिलान करनेपर मालूम होता है कि इस वर्ष इसमें केवल १९८४० रुपयोंकी वृद्धि हुई है। किन्तु उत्पत्तिकी भांति यदि आन्ध्र, विहार, दिल्ली और तामिल प्रान्तोंको छोड़ दें तो शेष प्रान्तोंकी बिक्री सन् १९२६-२७ की अपेक्षा १२५ ३२४ रुपये अधिक की होगी। उपरोक्त चार प्रान्तोंको छोड़कर शेष सब प्रान्तोंकी बिक्री सन् १९२६-२७ की अपेक्षा बढ़ी है। इन चार प्रान्तोंकी कमी नीचे लिखे अङ्कोंसे प्रकट होगी।

बिक्री

	१९२७-२८ रुपया	१९२६-२७ रुपया
आन्ध्र	३७१६९८	४०३७३७
विहार	२४३३५९	२७७३०२
दिल्ली	१९८०९	१९८११
तामिलनाडू और केरल	१०२३५२१	१०७३०२१
	१६५८३८७	१७६३८७१

इन प्रान्तोंमें इस वर्ष खादीकी बिक्रीमें १०५४८४ रुपयेके कमी होनेका क्या कारण है इसके सम्बन्धमें रिपोर्टमें कुछ भी नहीं कहा गया है। किन्तु एक बात स्पष्ट है। और वह यह कि यद्यपि सन् १९२६-२७ की बिक्रीके अङ्कोंकी तुलनामें इन प्रान्तोंकी इस वर्षकी बिक्री कम हुई है, किन्तु इस वर्षकी उत्पत्तिकी तुलनामें कम नहीं बल्कि अधिक ही हुई है जो कि नीचेके अङ्कोंसे प्रगट होगा—

सन् १९२७-२८

	उत्पत्ति	बिक्री
आन्ध्र	२१४०८३	३७१६९८
विहार	२१२४४१	२४३३५९
दिल्ली	१६७५८	१९८०९
तामिलनाडू और केरल	९९७४६६	१०२३५२१

इससे यह अनुमान किया जा सकता है कि इन प्रान्तोंमें पिछले वर्षकी अपेक्षा इस वर्ष बिक्री कम होनेके कारण यह नहीं था कि खादीकी मांग कम हो गई वरन् यह कि उत्पत्तिकी कमीके कारण मांगकी पूर्ति न की जा सकी। वर्षके बीचमें दो एक बार यह सुना भी गया था कि बिहारमें खादीकी मांग इतनी बढ़ रही है, कि उसकी पूर्ति करना असम्भव हो रहा है। इससे भी उपरोक्त अनुमानकी पुष्टि होती है। किन्तु फिर भी वह केवल अनुमान मात्र है। रिपोर्टमें इस विषयपर पूरा पूरा प्रकाश डाला जाना चाहिये था।

बनावटमें सुधार

यहांतक तो खादीकी उत्पत्ति और बिक्रीकी बात हुई और हमने देखा कि कुछ आकस्मिक कारणोंसे तीन चार प्रांतोंकी उत्पत्ति और बिक्रीमें कमी आ जानेपर भी पिछले वर्षकी अपेक्षा इस वर्ष अधिक

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उत्पत्ति और विक्री हुई। किन्तु इसके अतिरिक्त अन्य दिशाओंमें भी खादीने इस वर्ष अच्छी तरक्की की है। राजस्थान, आन्ध्र और तामिलनाडूमें खादीकी बनावटमें विशेष सुधार हुआ है। राजस्थानमें सन् १६२६-२७ में ३० इञ्च चौड़े गाढ़ेके तानेमें १२०० तागे लगाये जाते थे। वहां इस वर्ष इसी चौड़ाईके मामूलीसे मामूली गाढ़ेके तानेमें १३०० तागे लगते हैं। अच्छे गाढ़ोंमें उनकी संख्या १६०० तक जाती है।

प्रारम्भके तीन चार वर्षोंमें खादीकी संस्थाओंके सामने मुख्य प्रश्न था, खादी सम्बन्धी मांगकी पूर्ति करना। उत्पत्तिकी वृद्धिके साथ-साथ अब भिन्न-भिन्न प्रकार और भिन्न-भिन्न रुचिके अनुकूल खादी तैयार करनेकी ओर भी ध्यान दिया जा रहा है। सफेद खादी तो अब प्रायः हर तरहकी मिलने लग गई है। रङ्गीन और छापेदार खादी तैयार करनेका भी विशेष प्रयत्न किया जा रहा है। तामिलनाडूकी प्रान्तीय शाखाने तिरुपुरमें रंगाईका कारखाना खोला है। इसके सिवाय वह मदुरासे भी अपनी खादी रंगवा कर मंगाती है, जहांकी रंगाईका काम मशहूर है। बङ्गालके खादी प्रतिष्ठानने सोदपुरमें रंगाईका काम शुरू किया है, जहां उसे अच्छी सफलता मिल रही है। मछलीपट्टमकी छपाईका काम बहुत पसन्द किया जा रहा है और पंजाबमें ताड़-छाप और मोर-छापके अच्छे अच्छे परदे और मेज़पोश बनने लगे हैं। बम्बईकी राष्ट्रीय-स्त्री सभा भी बारीक खादी खरीद कर उसपर गोटे और कसीदेका काम करती है।

खादी केन्द्र

इस वर्ष खादी कार्यके ३१० केन्द्र थे, जिनके द्वारा लगभग ३००० गांवोंमें काम होता रहा। इस वर्षकी रिपोर्टकी एक बहुत बड़ी कमी यह है, कि इसमें जो अङ्क दिये गये हैं उनमेंसे अनेक अधूरे हैं। बङ्गालके कितने गांवोंमें काम हो रहा था—इस सम्बन्धमें ठीक ठीक अङ्क रिपोर्टमें नहीं दिये हुए हैं। जो कुछ अङ्क प्राप्त हैं, वे पिछले वर्षकी तुलनामें बहुत कम हैं और उन्हें देखकर यह मालूम होता है, कि इस वर्ष कई ऐसे केन्द्र बन्द कर दिये गये, जहां पिछले वर्ष काम हो रहा था। दोनों वर्षोंके अङ्क नीचे दिये जाते हैं।

	उत्पत्ति-केन्द्र	विक्रीकी दूकानें	कितनेगांवोंमें काम हुआ
१६२६-२७	१७७	२०४	२८३१
१६२७-२८	१३८	१७२	२६५४

इससे यह जाहिर होता है कि इस वर्ष ३६ उत्पत्ति-केन्द्र और ३२ खादीकी दूकानें बन्द कर दी गईं, और १७६ गांवोंको खादी कार्य-क्षेत्रके लाभसे वञ्चित होना पड़ा। रिपोर्टको देखनेसे इस बातका पता नहीं चलता, कि किन किन प्रान्तोंके कितने कितने उत्पत्ति केन्द्र बन्द कर दिये गये अथवा कितनी दूकानें तोड़ी गईं। पर गांवोंके सम्बन्धमें प्रत्येक प्रान्तके अङ्क प्राप्त हैं और उनके देखनेसे पता लगता है कि बङ्गाल और तामिलनाडूको छोड़कर शेष सब प्रान्तोंमें इस वर्ष पिछले वर्षको अपेक्षा अधिक गांवोंमें काम हुआ है। बङ्गालके अङ्क अधूरे हैं। तामिलनाडूमें पिछले वर्ष ११७७ गाँवोंमें काम हो रहा था पर इस वर्ष केवल ६२५ में ही हुआ।

परवरिश

खादीका सबसे बड़ा दावा यह है कि वह देशकी कपड़े सम्बन्धी जरूरियातको पूरा करनेके अलावा, खेती करनेवालोंको उनकी बेकारीके वक्तमें रोजगार

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

देती है और इस प्रकार उनका जो वक्त बिलकूल फ़िज़ूल जाता था, वह काममें लग जानेसे उनकी आमदनी बढ़ जाती है। साथ ही खादी ऐसे गरीब लोगोंको रोजी देती है जो और किसी उपायसे अपना भरण-पोषण नहीं कर सकते। हमें देखना है कि इस वर्ष खादीने ऐसे कितने लोगोंकी परवरिश की। खादीके द्वारा पिछले दोनों वर्ष जितने धुनने, कातने और बुननेवालोंकी परवरिश हुई है, उनकी संख्या इस प्रकार है--

	धुननेवाले,	कातनेवाले	बुननेवाले
१९२६-२७	६२७	८३३३९	५१९३
१९२७-२८	७०३	९७७००	४९४४

बुननेवालोंकी सन् १९२७-२८ की जो संख्या दी गई है, वह अधूरी है, रिपोर्ट छपते तक बिहार और बङ्गालके पूरे अङ्क नहीं मिले थे। उन्हें मिलाकर उनकी संख्या ५ हजारसे ऊपर पहुंचेगी। इस प्रकार हम देखते हैं कि इस वर्ष खादीके कामसे लगभग १ लाख ३॥ हजार आदमियोंकी परवशि केवल धुनने, कातने और बुननेके पेशोंसे हुई। किन्तु देशको तथा इस पेशेमें लगे हुए लोगोंको इस प्रकार होनेवाले लाभका पूरा पूरा अन्दाज केवल इन अङ्कोंके द्वारा ही नहीं लगाया जा सकता। इसके लिये हमें देखना यह होगा कि खादीकी उत्पत्तिमें लगी हुई रकमका कितना अंश किसे मिलता है। पिछले वर्ष तिरुचेङ्गोडूके गान्धी आश्रमने अपने खादी केन्द्रोंके सम्बन्धमें जो हिसाब तैयार किया था। वह इस प्रकार है—

५४ प्रति शत	धुनने, कातने और बुननेवालों-की मजदूरीमें
३ ,,	फुटकर खर्च
३७ ,,	कच्चे मालकी खरीदमें
६ ,,	कार्यकर्ताओंके पुरस्कारमें

इस वर्ष २४ लाख रुपयोंसे ऊपरकी खादी तैयार हुई है। ऊपरके पैमानेके मुताबिक केवल २४ लाख रुपयोंका बटवारा इस प्रकार हुआ—

१२९६००० रुपया	धुनने, कातने और बुनने-वालोंको—
८८८००० ,,	कपास पदा करनेवालोंको
१४४००० ,,	कार्यकर्ताओंको
७२००० ,,	फुटकर ख़र्चमें

इस प्रकार हम देखते हैं, कि इन २४ लाख रुपयोंमेंसे २ लाखको छोड़कर शेष सबका सब किसानों और मज़दूरोंको मिला। जो लोग यह कहते हैं, कि मिलोंमें काम करने वाले मज़दूरोंको भी तो मज़दूरी मिलती ही है, फिर खादीका काम करके पैसा कमानेवालोंका ही महत्व क्यो बढ़ाया जाता है, उन्हें देखना चाहिये कि मिलोंमें लगी हुई पूंजीका कितना अंश वहांके मज़दूरोंको मिलता है। इस सम्बन्धमें खादी केन्द्रों और मिलोंकी तुलनासे यह बात स्पष्ट हो जायगी कि मिलोंके द्वारा कुछ व्यक्तियोंको बहुत अधिक धन बटोरनेका मौका अवश्य मिलता है। लेकिन उससे देशकी ग़रीबी घटनेके वजाय बढ़ती ही है। किन्तु खादीके द्वारा जहां तक सम्भव हैं, सम्पत्ति का न्यायानुकूल बटवारा होता है।

कातनेवालोंको जो मज़दूरी मिलती है, उसके खिलाफ कुछ लोगोंकी शिकायत है कि वह बहुत ही कम होती है और उसके ऊपर निर्भर रहते हुए कोई व्यक्ति अपना पेट नहीं भर सकता। लेकिन इस तरहकी शिकायत करनेवालोंको यह बात ध्यानमें रखनी चाहिये, कि कताईका काम देशके सामने केवल एक सहायक पेशेके रूपमें रक्खा गया

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

और वह भी विशेष कर किसानोंके लिये, जिनका वर्ष भरमें लगभग आधा समय बिलकुल बेकार जाता है। ऐसे वक्तको काममें लगाकर वे जो कुछ भी पैदाकर सकें वह बहुत है। किसानोंको उनके ही दरवाजे पर खेतीके सिवाय कोई दूसरा काम देना—यह हिन्दोस्तान ऐसे कृषि प्रधान देशकी एक बड़ी समस्या है। जो खादीसे ही हल हो सकती है—ऐसा खादीका काम करने वालोंका विश्वास है। जिस स्थान पर किसी दूसरे कामके द्वारा कताईकी अपेक्षा अधिक मज़दूरी मिल सके, वहां कताईका काम करानेकी सलाह नहीं दी जाती। एक बात और है, कताईमें मज़दूरी कम मिलती है—ऐसा वे ही लोग कह सकते हैं जिन्हें भारतीय कृषकों की स्थितिका वास्तविक ज्ञान नहीं है। चरखा-संघके केन्द्रोंमें लगे हुए लगभग एकलाख कातने-वाले ही इस बातके प्रमाण हैं, कि उन्हें इस पेशेसे लाभ है और कोई दूसरा पेशा उन्हें इतनी मज़दूरी नहीं दे सकता। तामिलनाडूके कुछ खादी केन्द्रोंमें इस बातका हिसाब लगानेका प्रयत्न किया गया है, कि सहायक पेशेके रूपमें कातनेका काम अख्तियार करनेवालोंको जो मज़दूरी मिलती है, वह उनके मुख्य पेशेकी आमदनीका कौन-सा अंश होता है। नीचेकी तालिकामें यह बात इस प्रकार दिखलाई गई है :—

१ गांवका नाम

२ कितने चरखे चलते हैं ?

३ कताईसे वार्षिक आय

४ मुख्य पेशेसे वार्षिक आय

५ कताईकी आय मुख्य पेशेकी आयका कितने प्रतिशत है।

हम केवल पांच गांवोंके सम्बन्धमें ये अङ्क देते हैं :—

१	२	३	४	५
उप्पुपलायम	२५	४६०	३३६०	१३./°
चिथालन्दूर	२५	३७५	२१५०	१७½./°
कोमारपलायम	६०	१३६८	६००६	१५½./°
वेलमपलायम	२५	४०१	१४००	२८½./°
पापमपलायम	६८	१२०५	५२२०	२३./°

ऊपरके अङ्कोंसे यह बात स्पष्ट है कि कातने वालोंको उनके मुख्य पेशेकी आमदनीका ११ से २८ प्रतिशत तक कताईकी मज़दूरीसे मिल जाता है। लेकिन यह गांव भरका औसत है। यदि व्यक्तियों और परिवारोंका अलग अलग हिसाब लगाया जाय तो मालूम होगा कि उन्हें अपनी मुख्य आमदनीका ५०-६० प्रतिशत तक कताईकी मज़दूरीसे मिला है।

महत्वपूर्ण अंग

यहां तक हमने खादी-कार्यके उस पहलूकी विवेचनाकी है, जो मुख्यतया व्यवपारिक है। किन्तु इस कार्य्यका मुख्य और महत्वपूर्ण अङ्ग यह है, कि गांवोंके रहनेवाले अपने कपड़ोंकी ज़रूरियात के सम्बन्धमें स्वावलम्बी हो जायँ। प्रत्येक परिवारके लोग अपने बचतके वक्तमें इतना सूत कात लिया करें, जिससे उनका कपड़ा बन सके। इसके लिये हर गांवमें या दो चार गांवोंके बीचमें जुलाहोंका होना भी आवश्यक है। यद्यपि खादी कार्यक्रमका यही मुख्य अङ्ग है, किन्तु इसकी उन्नति धीरे-धीरे होना अनिवार्य है। इसके लिये यह आवश्यक है, कि पहले कुछ थोड़ेसे गांवोंमें काम शुरू किया जाय और वहां पूरा सङ्गठन हो

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जानेके बाद दूसरे क्षेत्रमें प्रवेश किया जाय। इस काममें जो रुपया लगेगा, उसका प्रतिफल भी व्यापारिक कार्यों में लगे हुए रुपयेके प्रतिफलके समान दिखाई न देगा। साथ ही इसके लिये बहुत ही धीर और विश्वासी कार्यकर्त्ताओंकी आवश्यकता है। इन सब कठिनाइयोंके होते हुए भी जिन जिन स्थानों पर यह कार्य प्रारम्भ किया गया, वहां अच्छी सफलता मिली है। इनमें राजस्थान अन्तर्गत बिजौलियाका नाम विशेष रूपसे उल्लेखनीय है। यहां १२००० की आबादीमें काम शुरू किया गया था। इस वर्ष ५५०० आदमी स्वयं सूत कातकर अपना कपड़ा बुनवा लेते थे। इनके खर्चके लिये ६६००० वर्गगज कपड़ा बुना गया, जिसका प्रति व्यक्ति १२ वर्गगज कपड़ेका औसत पड़ता है। इसके सिवाय कुछ ऐसे भी लोग थे, जिन्होंने स्वयं न कातकर अपनी आवश्यकता भरके लिये मज़दूरोंसे सूत कतवाया और अपने लिये कपड़े बुनवा लिये। इस प्रकार २०००० वर्ग गज कपड़ा बुना गया। फ़ी आदमी १२ गजके औसतसे यह कपड़ा १६६६ आदमियोंके लिये हुआ। इस प्रकार बिजौलियाके १२००० व्यक्तियोंमेंसे ७१६६ व्यक्ति अपने कपड़े सम्बन्धी ज़रूरियातके सम्बन्धमें स्वतन्त्र हो चुके हैं। आशा की जाती है कि सन् १९२८-२९ के अन्ततक यहांके सभी बाशिन्दे स्वावलम्बी हो जायँगे। बिजौलियाकी सफलताको देखते हुए जयपुर रियासतके रींगस नामक स्थानमें भी काम शुरू किया गया है। गुजरातके बारडोली, महुआ और व्यारा तालुकोंमें पहलेसे ही काम हो रहा है। बाढ़ और सत्याग्रहके कारण उसमें कुछ बाधा पड़ गई थी। इस वर्ष इन तालुकों के ७११ परिवारोंके लोग कपड़ेके सम्बन्धमें स्वावलम्बी थे। दक्षिण भारतमें गुरावरेदीपालायम (गुन्टूर) तिरुपुर (तामिलनाडू) और कासीपालायम (मदुरा) में भी इस प्रकारके कार्य हो रहे हैं। काठियावाड़के अमरेली और पंचतालाव नामक स्थानोंमें भी इस दिशामें काम हो रहा था। लेकिन पिछले दो वर्षोंकी रिपोर्टोंमें इन जगहोंका कोई उल्लेख नहीं पाया जाता। पंजाबके खानेवाल और मांटगुमरी नामक स्थानोंमें ऐसा प्रबन्ध किया गया है, कि गांवोंके लोग कातकर जो सूत लाते हैं, उसके बदले उन्हें बनी बनाई खादी दे दी जाती है। इस वर्ष २०५७२ वर्गगज़ खादी बदली गई। किन्तु सन् १९२६-२७ में यह संख्या ६२११६ वर्गगज़ थी। इसवर्ष उसके घटकर केवल एक तिहाई रह जानेका कोई कारण रिपोर्टमें नहीं बतलाया गया है।

देशी रियासत

देशी रियासतोंमें अभीतक मैसूरका ध्यान चरखेकी उपयोगिताकी ओर विशेषरूपसे आकर्षित हुआ है। वहां बदनवालमें एक खादीकेन्द्र स्थापित किया गया है, जहाँ आजकल प्रति मास दो हजार रुपयेकी खादी तैयार होती है। उसमेंसे आधी सरकारी महकमोंके लिये खरीद ली जाती है। मैसूर सरकार बदनवालकी सफलतासे उत्साहित होकर अन्य स्थानोंपर भी कार्यारम्भ करनेवाली है। बड़ोदा और निजामकी सरकारें भी इस विषयपर विचार कर रही हैं।

उपसंहार

उपरोक्त वर्णनसे यह स्पष्ट है कि यद्यपि कहीं कहीं कुछ ढीलापन दिखाई देता है तो भी खादीने

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

देशमें जड़ पकड़ लिया है। और उसके द्वारा देशकी कपड़े सम्बन्धी जरूरियातको पूरा करनेके अलावा बेकारी और गरीबीकी समस्याको हल करनेका प्रशंसनीय प्रयत्न किया जा रहा है और इस प्रयत्नमें सफलता भी खूब मिल रही है। यदि कहीं कुछ त्रुटि या कमी है तो उसका मुख्य कारण है, धन-जनकी कमी। यह राष्ट्रके आर्थिक पुनर्सङ्गठनका महान् कार्य है। इसके लिये बहुत द्रव्यके अतिरिक्त पर्याप्त समय और कार्यकर्ताओंकी आवश्यकता है। कार्यकी महानता और उसके महत्वका विचार करते हुए जब हम देखते हैं, कि केवल २२ लाख रुपयोंकी पूंजीसे यह काम चल रहा है, तब बरबस यह कहना पड़ता है कि देशको जिस हद्दतक इस महान् कृत्यमें हाथ बटाना चाहिये था, उस हद्दतक वह नहीं बटा रहा है। चरखा-सङ्घके सदस्योंकी संख्या प्रतिवर्ष घटती जा रही है, जैसा कि नीचेकी तालिकासे प्रकट होगा

	'अ' वर्ग	'ब' वर्ग	बालक
१९२५-२६	३४७२	६४२	१६५
१९२६-२७	२१६५	३४०	२६४
१९२७-२८	१५२७	२७६	२०५

यद्यपि चरखा-सङ्घके कार्यको राजनीतिके ज्वार भाटेसे अलग रखनेका प्रयत्न किया जा रहा है, किन्तु उसके सदस्योंकी संख्या राजनैतिक जोशके साथ ही बढ़ती और घटती है। लेकिन राजनैतिक शिथिलता के समय भी जितने लोग इसके महत्वको समझते हुए इस यज्ञमें सम्मिलित रहते हैं उनका योग उनकी संख्यासे कई गुना अधिक है। गुसाईंजीने कहा है—

भक्ति-भाव भादों नदी, सबै चली घहराय
सरिता ताहि सराहिये, जो जेठ मास ठहराय

खादीके क्षेत्रमें काम करनेके लिये जेठ मासमें बहने वाली नदीके समान कार्य कर्ताओंकी आवश्यकता है। और आवश्यकता है इस बात की, कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी सामर्थ्यके अनुसार कुछ आर्थिक सहायता करे।

एक बात हमें चरखा-सङ्घके कार्यक्रमके सम्बन्धमें भी कहनी है। खादीके प्रचारके लिये जहाँ इस बातकी आवश्यकता है कि उत्पत्तिके नये नये केन्द्र खोले जायं, हाथकी कताईके लिये सुविधाएं उपस्थित की जायं और खादीकी बिक्रीका प्रबन्ध किया जाय, वहाँ इस बातकी भी आवश्यकता है कि लोगोंको खादीका आर्थिक महत्व समझाया जाय। चरखा-सङ्घकी सन् १९२४-२५ की रिपोर्टके आरम्भमें ही यह स्वीकार किया गया है कि—

"केवल सङ्गठन ही पर्याप्त नहीं है। खादीके प्रचार के लिये सर्व साधारणकी मनोवृत्तिमें परिवर्तन होनेकी आवश्यकता है। यदि चरखेके उद्योगको प्रत्येक प्रान्तमें सङ्गठित करना है और भविष्यमें उसे देश व्यापी बनानेके उद्देश्यको पूरा करना है, तो ग्राहकोंको मिलके बने हुए सुन्दर और सस्ता दिखाई देने वाले कपड़ेको खरीदनेके लालचसे रोकना ही नहीं होगा, बल्कि लोगोंको यह भी समझना होगा कि सबसे सस्ते बाजारमें माल ख़रीदना हमेशा फायदेमन्द नहीं होता। उन्हें यह भी बताना होगा कि पहले अपने ही प्रान्तका बना हुआ माल ख़रीदना चाहिये और जब वहाँ माल न मिले तब ही बाहर जाना चाहिये।"

किन्तु इस प्रकारके शिक्षा सम्बन्धी प्रचारके लिये अभी तक चरखा-संघकी ओरसे कोई विशेष प्रयत्न नहीं किया गया है। ऐसे प्रचारकी आवश्य-

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कता विशेष कर शिक्षित समाजमें हैं। जिसके मस्तिष्कमें अर्थशास्त्रके अनेक भ्रमात्मक सिद्धान्त भरे हुए हैं। उन्हें यह समझानेकी आवश्यकता है कि अर्थशास्त्रकी दृष्टिसे चरखा भारतीय समाजके आर्थिक पुनर्संगठनके लिये एक उपयुक्त साधन है। अच्छा हो कि चरखा-संघ एक प्रकाशन विभागका सङ्गठन करे, जिसकी ओरसे समय समय पर उपयोगी अङ्क और रिपोर्ट प्रकाशित होनेके अलावा केवल अर्थशास्त्रकी दृष्टिसे चरखेकी उपयोगिताकी विवेचनाकी जाय। यह कार्य ढाई तीन हज़ार रुपये वार्षिक खर्चसे आरम्भ किया जा सकता है। अच्छा हो यदि चरखा-संघ कुछ आर्थिक सहायता देते हुए गुजरात विद्यापीठ अथवा काशी विद्यापीठको यह काम सौंप दे।

अनन्त केकली

(लेखक—"प्रभात")

खोज रहा हूँ तुझे अनवरत प्रियतम ! हृदय लगाने को !
कब पवित्र-परिवर्तन होगा तुझसे मुझे मिलाने को ?

एकबार तुम बन-वसन्त आये मेरे जीवन-वनमें;
विकसित कर यह कली हो गये किन्तु स्वप्न छविमय छनमें।

अब किसके चरणोंपर झुककर दूँ अपने सौरभका दान ?
किसे कराऊँ विधुर-प्रेमके आकुल-मधुका सुख-रस-पान ?

किसे सुनाऊँ मूक-कामनाओंके आग भरे संगीत ?
खोजूँ कहां—कहां पाऊँगा वह अपना अनमोल अतीत ?

कब आवेगा अन्त क्षुब्ध-जीवनकी ज्योति जगानेको ?
कब पवित्र-परिवर्तन होगा, तुझसे मुझे मिलाने को ?

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हम पराधीन क्यों हैं

(ले०—राजाराम पाण्डेय शास्त्री)

हिन्दुस्तान एक बहुत बड़ा देश है। इसकी आबादी संसारकी कुल आबादीकी पञ्चमांश है। सदियों-की गुलामीकी अवस्थामें पड़े रहने पर भी यह गांधी ऐसे महात्मा और रवीन्द्र ऐसे कवि पैदा कर सकता। विदेशी भाषाके माध्यम होने पर भी बुद्धि और विद्यामें सभ्यताकी हामी भरने वाले देशको किसी भी आगे बढ़ने नहीं देता। बुद्धि और विद्या ही नहीं सैनिक-बल प्रयोगमें भी मौका मिलने पर अपनी योग्यताका यह उच्चत्तम प्रमाण दे सकता है। इन सब बातोंके रहते हुए भी क्यों हिन्दु-स्तान गुलाम है, पराधीन है, समझमें ही नहीं आता?

जब हम देखते हैं कि एक मुट्ठीभर अंगरेज हम पर शासन कर रहे हैं, और वह भी हमारे बल और बुद्धिसे, तो हमारे आश्चर्यकी सीमा ही नहीं रहती। सरकारके चाहे जिस महकमेको ही हम ले लें, वहीं पर हम देखेंगे, कि देशकी पराधीनताकी बेड़ी पर हम स्वयं ही कड़ी मोहर लगाये बैठे हैं। सरकारकी चाहे पुलिस हो या पलटन, स्कूल या अस्पताल सब हमारे ही बूते पर चल रहे हैं। यदि हम आज चेत जायँ और केवल अपने सहयोगको ही बन्द कर दें तो सरकार पंगु हो जाती है। इतनी सहज बातके होते हुए भी हम अपने उद्देश्यमें कृत-कार्य्य क्यों नहीं हो रहे हैं, यह एक विचारणीय प्रश्न है?

कुछ लोगोंका ख्याल है कि हिन्दुस्तान बहुत बड़ा देश है और यहां पर बहुत-सी भाषाए हैं, इस कारण यहांके लोगोंका मिल कर रहना या काम करना कठिन है और इसी कारण हम पराधीन हैं। परन्तु थोड़ा-सा भी विचार करनेसे ही इस तर्ककी अप्रमाणिकता साबित हो जाती है। हिन्दुस्तानकी सभी भाषायें और उपभाषायें मिल कर अङ्गरेज लेखकोंके अनुसार ही अधिकसे अधिक २०० हैं, परन्तु अमेरिकामें इसे कहीं अधिक करीब ६०० भाषायें बोली जाती हैं और इनके कारण अमेरिकाको अपनी आजादी हासिल करने या कायम रखनेमें कोई अड़चन नहीं हुई। हिन्दुस्तानमें तो आज कल अङ्गरेजी-भाषाके माध्यम हो जानेसे ही यह अड़चन बहुत कुछ दूर हो गई है। इसके पूर्व भी हमारे पूर्वजोंने इस बाधाको संस्कृतके द्वारा आसानीसे हल कर लिया था। पहले भी दक्षिण और उत्त-रीय भारतके लोगोंके विचारोंमें आदान-प्रदान काफी होता था। आपसकी एकताको कायम रखनेके लिये ही हर एक प्रान्तमें तीर्थोंको बनाकर हमारे पूर्वजोंने अपनी बुद्धिमताका उच्चतम प्रमाण दिया था। अतएव यह दलील दी ही नहीं जा सकती कि हमारी पराधीनताके मार्गमें नाना प्रान्तोंकी नाना प्रकारकी भाषाएं रोड़े अटका रही हैं।

हमारे शुभचिन्तक प्रभुओंका कहना है, कि तुममें आत्म-रक्षाकी कूबत नहीं, इसलिये तुम पराधीन हो? देशकी बढ़ती हुई दरिद्रता और उसके भयङ्कर दुष्परिणामोंके कारण देशके युवकोंकी जो शारीरिक

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

क्षति हुई है, उससे यदि कुछ लोग इसपर विश्वास कर लें तो कोई आश्चर्य नहीं। परन्तु हालके महा-युद्धने यह प्रमाणित कर दिया है, कि हिन्दुस्तानके सैनिक संसारके सर्वोच्च सैनिकोंकी श्रेणीमें हैं। यह हिन्दुस्तानी सेना थी जिसने जर्मनोंकी आगे बढ़ती हुई विजयपताकाके स्रोतको निम्नगामी कर दिया। जर्मनीके भूतपूर्व सम्राट् कैसरने यहाँतक कहा था, कि शत्रुओंकी सेनामें सिक्खोंकी ही एक ऐसी सेना थी, जिसके सामने जाते हुए हमें डर मालूम होता था। अतएव आत्मरक्षा शक्तिका अभाव या नाना प्रकारके वैषम्यकी दलील लचर-सी है और यह किसी भी प्रकारसे हमारे मार्गमें वाधा नहीं डाल सकती। अतएव हमें देखना है कि वे कौन कौन-सी बातें हैं, जो हमको पराधीन रहनेके लिये बाध्य कर रही हैं।

किसी भी देशकी आजादीको प्राप्त करनेके लिये या उसे कायम रखनेके लिये आत्म-विश्वास, दृढ़ निश्चय और एकताकी आवश्यकता है। ये तीनों ऐसे गुण हैं, कि इनके रहने पर बेवकूफसे बेवकूफ और असभ्यसे असभ्य राष्ट्र भी अपनी आजदी कायम रख सकता है। अफगानिस्तान हिन्दुस्तानकी अपेक्षा कहीं छोटा और कहीं कम सभ्य देश था। परन्तु ब्रिटिश गवर्नमेण्टके सतत प्रयोगोंपर भी वह आजाद बना रहा। उसकी तो बात जाने दीजिये, क्योंकि वहाँ पर तो किसी न किसी प्रकारकी राज-व्यवस्था थी और उसकी एक केन्द्रीय सरकार भी थी, परन्तु सीमा प्रान्त पर रहनेवाली कुछ जातियां अभी भी ऐसी हैं, जो हमारी सरकारका माल-अस्बाब तक लूट लेती है और कभी-कभी इनके सैनिकोंको भी मार-पीटकर चली जाती हैं, सरकार उनका दमनकर उनपर शासन करना चाहती है। पर अभीतक सफली-भूत नहीं हुई। क्यों? इसका एक कारण उनका आत्म-विश्वास, दृढ़ निश्चय और स्वतन्त्रताके लिये मर-मिटनेकी पिपासा हैं।

यह पिपासा ही एक मात्र ऐसी चीज है, जो आजादीके वृक्षकी पूरी तरहसे रक्षा करती है। इस पिपासाके मर-मिटनेपर ही आजादी जाती रहती है और देश पराधीनताकी बेड़ियोंमें जकड़ जाता है, फिर इसी पिपासाके उदय होते ही पराधीनताकी बेड़ियाँ खड़खड़ाने लगती हैं, और स्वतंत्रताके बीज अँकुरते दिखाई पड़ते हैं। परन्तु इस समय देशको एक कठिन परीक्षाके अग्निकुण्डसे पार होना पड़ता है। यहां पर यदि दृढ़ निश्चय और आत्म विश्वासने साथ दिया तो आजादीका पौधा खूनकी गरम धारोंके सिञ्चनसे शीघ्र ही बढ़कर अपनी करामात दिखाने लगता है।

आज हिन्दुस्तानके युवकोंमें भी आजादीके लिये मर-मीटनेकी यह पीपासा जागृत हो उठी है, परन्तु उन्हें अपने उद्देश्यमें सफलता नहीं मिलती। क्यों? यह एक बहुत ही गम्भीर प्रश्न हमारे सामने आ जाता है। यदि इस पर विचार कर हम अपने मार्गके रोड़ेको हटा सकें तो निश्चय ही हमें सफलता मिलेगी। इसके लिये हमें अपने प्राचीन इतिहास को ओर दृष्टि डालनी होगी, क्योंकि अपनी जातिगत कमजोरीको जाननेके लिये इसे बढ़कर दूसरा कोई साधन ही नहीं है। हमारा इतिहास हमें बतलाता है कि कोई भी विजेता यहांपर अपनी तलवारके बल पर अपना राजा कायम न कर सका। जब तक हिन्दुस्तानमें एक केन्द्रीय सरकार रही, बड़े-बड़े सिकन्दर और चङ्गेज खां जैसे महारथी विजेताओं-को भी मुंहकी खानी पड़ी और पीछे हटना पड़ा। मध्य ऐशियाकी लड़ाकी कौमोंके कारण मध्य

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सावधान ! सावधान !! सावधान !!!

नक्कालों से होशियार !

असली

भूतनाथ केश तेल

(रजिस्टर्ड नं० ३१३)

देख कर खरीदें

वरना धोखा खायेंगे

मूल्य प्रति शीशी ॥।) डाक महसूल ।=)

फी दर्जन ७॥) डाक महसूल १॥)

मिलनेका पता—

किशोरीलाल चौधरी

१५१, मछुआबाजार स्ट्रीट, कलकत्ता ।

☞ इसके सिवा भारतवर्षके सभी बड़े शहरोंके मनिहारी दूकानदारोंके यहां मिलता है ।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हमारा प्यारा चरखा।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कालीन-युगमें यूरोप तबाह हो गया, पर भारतकी शान्तिमें किसी प्रकारकी विशेष खलबली न मची। परन्तु केन्द्रीय शक्तिके छिन्न-भिन्न होते ही भिन्न-भिन्न जगहोंमें छोटे-छोटे राजपूत राजाओंमें आपसमें कलह और प्रतिद्वन्द्विताकी लहर जोरों पर उमड़ पड़ी और आपसका ऐक्य, अनैक्य, ईर्ष्या और द्वेषके रूपमें बदल गया। इससे राष्ट्रीय भावनाकी कमी हो गई। इसी कारण मुसलमानोंकी विजय हुई। मुसलमानी राज्यके केन्द्रीय शक्तिके टूटते ही, आपसकी फूटके ही कारण हमारे धन और पौरुषसे ही अंग्रेजोंने अपना राज्य कायम किया। यदि हममें ही मीरजाफर, अमीचन्द जैसे देशघातक न होते तो आज हम पराधीनके बदले स्वतन्त्र दिखाई पड़ते। बस केन्द्रीय संगठनके अभाव और कुछ देशघातकोंके छलने ही हमें इतना नीचे गिराया है। यदि अभी भी इस स्वतन्त्राके पौधोंको केन्द्रीय संगठनकी शक्ति द्वारा हम मज़बूत बना दें और देश-द्रोहिताके अङ्कुरको देशसे निकाल फेंके, तो वह दिन दूर नहीं, कि हम स्वतन्त्र होकर अपना मस्तक संसारके उन्नत राष्ट्रोंमें ऊंचा कर सकेंगे।

परन्तु दुःख है कि देशके साथ विश्वासघातका हमारा मर्ज पुराना हो गया है और यह बढ़ता ही जा रहा है। संसारमें शायद ही कोई ऐसा देश हो, जहां पर देशके साथ घात करनेवाले आदमी हम भारतीयों की तरह खुलेआम जनतामें अपना सिर ऊंचा कर घुमनेका साहस करते हों। अन्य देशोंमें ऐसे विश्वास घातकोंको देशकी फैली हुई प्रचण्ड घृणाके वातावरणके कारण रहना कठिन हो जाता है। पाठकोंको शायद मालूम न हो, जिस समय यहां पर अमीचन्द, राजा मानिकचन्द, दुर्लभराम, मीरजाफर इत्यादि अपने विश्वासघात पर फूले न समाते थे, उसी समय चारों ओरसे तिरस्कृत चन्दननगरके फ्रांसीसी किलेदार दितेरानोंको आत्मग्लानिके कारण खुदकशी कर लेनी पड़ी थी। किलेदारने अङ्गरेजोंसे रिश्वत लेकर चन्दन-नगरके फ्रांसीसी किलेके फाटकको खोल दिया था। उसे यह मालूम था, कि देशवासी उसे घृणाकी दृष्टिसे देखेंगे; पर अपने माता-पिताको सुखी बनानेके उद्देश्य से उसने देशके गलेपर छुरी फेर दी। उसे क्या पता था, कि उसका पिता भी उसको ठुकरा देगा। जब उसके पिताको उसके जघन्य कर्मका पता लगा तब उसने तिरस्कारके साथ पुत्रके भेजे हुए रुपयेको लौटा दिया। इससे वह इतनी निराशा और आत्म-ग्लानिमें पड़ा कि उसको अपना क्षोभ मिटानेके लिये खुदकशीके सिवाय और कोई साधन ही प्रतीत नहीं हुआ।

पर यहां क्या? यहां तो ऐसे बेहायोंकी कोई कमी ही नहीं, जो राष्ट्रके साथ विश्वासघात करके भी गर्वके साथ रहते हों। यहां ऐसे आदर्श पिता कहां! जो अपने पुत्रोंके जघन्य कर्मोंके ऐसे निन्दक हों। यहां तो किसी भी दलसे आदमीको रुपयेके बल फोड़कर अपना मतलब गांठ लेना सरकारके बायें हाथका खेल है। यह सब क्यों? केवल इसीलिये, कि हममें राष्ट्रीय भावनाकी इतनी दहकती हुई प्रचण्ड अग्नि नहीं है, जिसकी निकलती हुई गरम आहोंसे इन विश्वासघातियोंका हृदय पसीज सके और देशमें ऐसा वातावरण बन सके, जिससे देश-द्रोहिताका यह अङ्कुर ही जाता रहे। बस यहीं हमारी गुलामी है—यहीं हमारी पराधीनता है!

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पहिचान

(लेखक—चन्द्रगुप्त विद्यालंकार)

(१)

सार्वजनिक कामोंमें दिन-रात लगे रहनेवाले लोग विवाह करके प्रायः एक बड़ी मुसीबत अपने सिरपर डाल लेते हैं। वे स्नेह-प्राप्तिकी अभिलाषासे यह सोचकर विवाह करते हैं, कि जब हम आजीविकाके लिये आवश्यक कार्य करनेके बाद, शेष समयमें जनता और राष्ट्रकी सेवा करके कुछ मिनटोंके लिये अपने घर जायंगे, तो मालकिनके स्नेहपूर्ण व्यवहारसे हमारी दिनभरकी थकावट शान्त हो जाया करेगी। परन्तु दिनभर जी तोड़कर परिश्रम करनेके बाद घर पहुंच कर जब उन्हें घरवाली के व्यंग्यपूर्ण उलाहने मिलते हैं, तब उन्हें अपनी भूल साफ-साफ प्रकट होने लगती हैं। स्नेह किसीके हृदयमें यों ही, मुफ्तमें लुटानेके लिये नहीं भरा होता, वह कुछ प्रतिदान भी चाहता है।

प्रान्तीय-चिकित्सा विभागके उच्च पदाधिकारी डाक्टर रामनाथने भी विवाह करके इसी प्रकारकी भूल की थी। जब शान्ता घरमें आई थी, तब उनका विचार था, कि नगरकी सभाओंमें माथा-पच्ची करके मेरा हृदय जितना खिन्न हो जाता है, उसे शान्त करनेके लिये शान्ता सचमुच अपने नामको चरितार्थ किया करेगी। परन्तु प्रातःकाल ही घरसे विदाई लेकर दिन भर चिकित्सा और समाज-सेवाके कामों-में व्यस्त रहकर, सूर्यास्तके बाद जब डाक्टर साहब अपने घरके आंगनमें पधारते थे, तब शान्ता सिर झुकाकर नाराजगीसे जो दो एक वाक्य कहती थी, उससे ही डाक्टर साहबका वह भ्रम बहुत शीघ्र दूर हो गया। यह बात नई नहीं है। लगातार १८ वर्षों तक इसी प्रकारका स्वागत पाते रहनेसे डाक्टर साहबको अब इसमें कोई असाधारणता प्रतीत नहीं होती। परन्तु इतने दिनोंके बाद, अब जाकर घरमें एक नया प्रश्न खड़ा हो गया है, जिसकी बदौलत डाक्टर साहब घरमें जाने तकसे घबराने लगे हैं। यह प्रश्न है, डाक्टर साहबकी कन्या लीलाके लिये बरकी खोज का। यह आश्चर्य की बात है कि जब-तक डाक्टर साहब घरमें रहते हैं, तबतक तो लीलाके व्याहकी समस्या सौगुना बड़ी होकर उनके मस्तिष्कको चारों ओरसे लपेट लेती है, परन्तु जब वे घरसे बाहर आकर अपने दैनिक कार्यमें संलग्न होते हैं, तब उन्हें लीलाकी याद तक भी नहीं रहती।

गरमीका मौसम था। रात अभी शुरू ही हुई थी। त्रयोदशीका चांद पूर्व दिशामें कुछ ऊपर होकर अन्य मनस्क-सा खड़ा था। गरमीके मारे आस-मानमें धुंध छाई हुई थी। हवा बन्द थी। इसी समय डाक्टर साहबने अपने घरमें प्रवेश किया। आज वह कुछ खिन्नसे प्रतीत होते थे। आज दिन भर वह अपनी दूकान पर भी नहीं जा सके थे। म्युनिसिपैलिटीमें जल-कर-वृद्धिका प्रस्ताव पेश था। डाक्टर साहब वहां प्रजा पक्षके नेता थे। उन्होंने

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इस प्रस्तावके विरोधमें बड़ा जोशीला और युक्तिपूर्ण भाषण दिया था। यद्यपि बहस अगले दिनके लिये मुल्तवी हो गई थी। परन्तु म्युनिसिपैलिटीमें स्वतन्त्र विचारवाले सदस्योंकी कमी थी, अतः एक प्रकारसे निश्चय ही था कि कर-वृद्धिका प्रस्ताव पास हो जायगा। अपना सम्पूर्ण परिश्रम व्यर्थ जाता देखकर डाक्टर साहबका दिल आज उदास हो उठा था, उसपर यह शिद्दतकी गरमी उन्हें और भी अधिक परेशान कर रही थी।

डाक्टर साहब घरमें आकर आंगनमें रक्खी हुई एक आराम कुर्सीपर चुपचाप लेट गये। शान्ता उस समय मकानकी छतपर थी। नौकर बैठकमें कोई चीज ठीक कर रहा था। आंगनमें अकेली लीला ही एक चारपाई पर लेटी हुई थी। चारपाईके निकट रक्खा हुआ बिजलीका पंखा शब्द करके चल रहा था। अपने पिताको आते देखकर लीला उठी। उसने पंखा उठा कर डाक्टर साहबके सन्मुख एक मेज़पर रख दिया। इसी समय मोरके पंखोंका एक छोटा-सा पंखा हाथमें लिये हुए शान्ता आंगनमें पहुंची। डाक्टर साहबको देखते ही उसकी साहित्यिक प्रतिभा जाग उठी। वह उनके निकट आकर बोली—"आज मोरीगेटके सामने कोई मीटिङ्ग न होगी? तुम्हीं जाकर एक लेक्चर दे डालो, तो कैसा हो?"

अप्रत्याशित रूपमें यह उलाहना सुनकर डाक्टर साहब बहुत अधिक दुखी हो उठे। अपने मुँहसे कुछ भी न कह कर वह बड़ी करुण दृष्टिसे 'घर-घर' शब्द करके चलते हुए पंखेकी ओर देखने लगे।

शान्ताने देखा कि डाक्टर साहब आज कुछ विशेष उदास हैं। उसकी इच्छा डाक्टर साहबका जी दुखानेकी कदापि न थी। उनका मुँह देखकर वह अपने कथन पर स्वयं ही लज्जित हो उठी। दो चार क्षणों तक चुप रहनेके उपरान्त उसने प्रसङ्ग बदलकर बड़ी नम्रतासे पूछा—"क्यों, आज म्युनिसिपैलिटीकी बैठकमें क्या निर्णय हुआ?"

सार्वजनिक कार्यके सम्बन्धमें अपनी पत्नीका सहानभूतिपूर्ण प्रश्न सुनकर डाक्टर साहबका हृदय प्रसन्न हो गया। वे बड़े विस्तारसे आजके अधिवेशनकी कार्यवाही शान्ताको सुनाने लगे। बिलकुल इच्छा न होते हुए भी शान्ता बड़े धैर्यसे "हूं हां" करके डाक्टर साहबका लम्बा किस्सा सुनने लगी। मौलवी शराफतुल्लाकी दलीलोंका बेरिस्टर श्रीप्रकाशने किस प्रकार खण्डन किया, ये बातें उसके लिये बहुत अधिक क्लिष्ट और अरुचिकर थीं। और बातें हो ही रही थीं, कि बीचमें ही नौकर भोजन परोस कर ले आया, नहीं तो, न मालूम, बेचारी शान्ताको कितनी देर तक तपस्या करनी पड़ती। मौका पाकर शान्ता वहांसे भाग खड़ी हुई।

रातको सोनेसे पूर्व शान्ताने फिर कहा—"तुम्हें मुल्क भरकी तो फिकर है। कभी किसी मीटिंगमें जाते हो, तो कभी किसी जल्सेमें। कभी किसीका स्वागत करने जाते हो, तो कभी किसीको बिदाई देने। क्या केवल हम घरके लोग ही तुम्हारी इस मेहरबानीसे महरूम रहेंगे! देखो, लीला इतनी बड़ी होने को आई, तुमने अभी तक उसके लिये कोई वर खोजनेका प्रयत्न भी शुरू नहीं किया। रोज शिकायत करती हूं, परन्तु तुम 'हूं, हां' करके टाल देते हो।"

अगर और कोई दिन होता तो शायद डाक्टर साहब सदाकी तरह ही शान्ताको यों ही टरका देते।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

परन्तु आज वह स्वयं ही सार्वजनिक जीवनसे बहुत अधिक खिजे हुए थे। उन्होंने सोचा—"सचमुच शान्ताकी यह शिकायत बेजा नहीं है। मैं घरके मामलोंकी ओर ध्यान देता ही बहुत कम हूं। लीला अब बड़ी हो गई है। मुझे उसके लिये जरा मिहनत से वरकी तलाश करनी चाहिये।"

डाकृर साहबकी विचारधारा और अधिक आगे बढ़ी—"मैं रोज सार्वजनिक कामोंमें सिर खपाता हूं, इससे मुझे लाभ ही क्या है? म्युनिसिपैलिटीके मेम्बर मुझे सीढ़ी समझते हैं। दूसरी ओर अधिकांश जनता समझती है कि मैं महज़ प्रतिष्ठाके लोभसे ही यह काम करता हूं। हम दिन-रात पब्लिकके लिये दौड़ें, लड़ें, झगड़ें, उस पर भी लोग हमें दीवाना ही समझें। क्यों न मैं भी दूसरे मेम्बरोंको तरह महज़ लीडरीका शौक पूरा करनेके लिये म्यूनिसिपैलिटीकी बैठकोंमें हिस्सा लिया करूं।"

डाकृर साहबने निश्चय किया कि कल वे म्यूनिसिपैलिटीकी बैठकमें सम्मिलित न होंगे। ज़िला जेलका स्वास्थ्य-निरीक्षण करके वे शान्ताके लिये वर खोजनेका काम करेंगे।

(२)

दूसरे दिन जब म्यूनिसिपैलिटीमें पानी पर टैक्स बढ़ानेके प्रस्ताव पर विचार प्रारम्भ हुआ। उस समय डाकृर साहब वहां उपस्थित नहीं थे। आजसे पूर्व डाकृर साहब सौ काम छोड़ कर वहां उपस्थित होते रहे थे। आज उन्हें वहां अनुपस्थित देखकर लोगोंने यही अनुमान किया कि सम्भवतः उनके घरमें कोई असाधारण दुर्घटना हो गई है।

जब विरोधी दलका नेता भी अधिवेशनमें उपस्थित नहीं था, तब प्रस्तावके फेल होनेकी आशा ही कहां थी। डाक्टर साहबकी अनुपस्थितिके कारण प्रस्ताव पर अधिक देर तक बहस भी न हुई। थोड़ी ही देरमें बहुसम्मतिसे प्रस्ताव पास हो गया।

प्रातःकाल डाक्टर साहब जेलका निरीक्षण करने चले गये थे, उसके बाद दो एक घण्टा अपनी दूकान पर रहकर लीलाके लिये वरकी तलाश करनेके उद्देश्य से अपने मित्रोंके यहां चक्कर लगाने लगे। सायङ्काल ५ बजेके करीब जब डाक्टर साहब घूमते-फिरते तंग आ गये, तब उन्होंने घरकी तरफ चलनेका निश्चय किया। उन्हें सूझ ही नहीं पड़ता था, कि गरमियोंका यह लम्बा दिन किस तरह काटा जाय।

सूर्यास्तसे बहुत समय पूर्व जब वह अपने घरके निकट जा पहुंचे, तब उन्हें एक तरहकी लज्जा-सी प्रतीत होने लगी। आजसे पूर्व सूर्यास्तके बाद भी बहुत देर करके जब वह घरमें आते थे, तब उनके मस्तिष्कमें नागरिक-सेवाकी बातें चक्कर काटती रहती थीं, आज खाली हृदय घरकी तरफ जाते हुए उन्हें बहुत शर्म अनुभव होने लगी। म्युनिसिपैलिटीमें जल-कर-वृद्धिका प्रस्ताव पास हो गया है—यह बात उन्हें मालूम हो चुकी थी। इस कारण भी वे अपने हृदय पर एक भारी बोझका अनुभव कर रहे थे। अगर वे स्वयं आज म्युनिसिपैलिटीमें गये होते और बावजूद उनके प्रयत्नके जल-कर-वृद्धिका प्रस्ताव स्वीकृत हो जाता, तब भी उन्हें दुःख तो अवश्य होता, परन्तु उस दुख और इस दुखमें एक भारी भेद था—इसमें आत्म-ग्लानिकी तीव्र ज्वाला मिली हुई थी।

डाकृर साहब घरके अन्दर प्रविष्ट न हो सके।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वे धीरे धीरे, आंख बचाते हुए, ठण्ढी सड़ककी ओर सैरके लिये चल दिये।

(३)

सार्वजनिक कार्योंके प्रति डाकृर साहबकी यह उदासीनता बहुत दिनोंतक स्थिर न रह सकी। पब्लिक आन्दोलनोंका वह पुराना महारथी उदासीन होकर न बैठ सका। उसने फिरसे सामाजिक कार्यों में भाग लेना शुरू किया। लीलाके विवाहकी बात वे बीचमें ही भूल गये। म्यूनिसिपैलिटीमें जल-कर-वृद्धिका प्रस्ताव स्वीकृत हो चुका था। शीघ्र ही, नये माससे, यह प्रस्ताव कार्यरूपमें लाया जाने वाला था। लोग इस निर्णयसे अत्यन्त असन्तुष्ट थे। उनका कहना था कि इस जल-कर-वृद्धिके प्रश्नके आधारपर म्यूनिसिपैटीका नया निर्वाचन होना चाहिये।

डाकृर रामनाथने देखा कि अगर जरा-सी मिहनत की जाय, तो प्रायः पब्लिक बड़ी आसानीसे इस प्रस्तावके विरोधमें सब कुछ करनेके लिये तैयार हो सकती है। सूखा फूस ढेरके रूपमें पड़ा हुआ है, सिर्फ चिनगारी लगाने की देर है। दूसरी ओर उन्हें यह विश्वास था, कि म्यूनिसिपलिटीमें वे और हज़ार हाथ पांव मारें—परन्तु वहां कुछ होने का नहीं। इसलिये उन्होंने जनताकी इस मांगको बराबर एक आन्दोलनका रूप देना शुरू किया।

लोग तो पहले हीसे तैयार थे। उन्हें सिर्फ एक नेताकी आवश्यकता थी। शीघ्र ही इस आन्दोलनने एक जबरदस्त रूप धारण कर लिया। शहरमें प्रतिदिन बड़ी बड़ी सभाएँ होने लगीं। जलूस निकलने लगे। अधिकारियों पर गालियोंकी बौछारें की जाने लगीं। शासक लोग भी चौकन्ने हुए।

आन्दोलनका यह उग्ररूप देख कर डाकृर साहब स्वयं भी कुछ घबड़ा गये। उनमें प्रजाहितकी आकांक्षा तो अवश्य थी, परन्तु सरकारको बिलकुल नाराज़ कर देनेकी शक्ति भी उनमें न थी। आख़िर वह स्वयं भी तो एक तरहके सरकारी नौकर ही थे। वह जिला जेलके निरीक्षक थे, इसके लिये उन्हे २००) मासिक वेतन मिलता था। इसके अतिरिक्त जिलेके सम्पूर्ण सरकारी चिकित्सालयोंका निरिक्षण भी उन्हींके सपुर्द था। इस पदसे भी उन्हें २५०) का मासिक वेतन मिलता था। इस आन्दोलनका नेता बनकर उन्हें चिन्ता होने लगी, कि कहीं इन दोनों पदोंसे हाथ न धोना पड़े।

परन्तु जिसे एक बार जनतासे सन्मान प्राप्त करनेका चसका लग जाता है—वह उसे आसानीके साथ नहीं भुला सकता। जनताका सन्मान कमज़ोर और नकली नेताओंको बहादुर और असली बना देता है। इसी कारण डाकृर साहब यथा-सम्भव कभी भविष्य-चिन्ताको अपने पास फटकने तक न देते थे। यदि कभी अन्य सब विचारों पर एक साथ विजय पाकर भविष्य चिन्ता उनके दिमाग़ पर अधिकार कर भी लेती, तो वह अपनी योग्यता और चिकित्सा निपुणताकी बात सोच कर सन्तोष कर लेते। क्या हुआ—अगर सरकारने मुझे बरख़ास्त भी कर दिया। लोगोंमें तो मेरी इज़्ज़त और धाक बढ़ ही जायगी। सरकार लोगोंको मुझसे दवा लेनेसे तो बन्द नहीं कर सकती।

परन्तु घर पहुंचते ही डाकृर साहब बिल्कुल

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अधीर हो उठते थे। शान्ताके तानोंकी मारसे उनका सम्पूर्ण उत्साह न जाने कहां लुप्त हो जाता था। घर पहुंचते ही उन्हें अपने ऊपर एक भारी बोझ पड़ा हुआ प्रतीत होता था। यह बोझ मानो उन्हें बहुत शीघ्र पीस डालेगा।—लोग भड़क रहे हैं, अधिकारी नाराज़ हैं, नौकरी छीननेको हैं, दूकान पर भी जानेकी फुर्सत नहीं मिलती, तिस पर पत्नी नाकमें दम कर देती हैं, बेटीके व्याहकी चिन्ता अलग है।

(४)

क्रमशः जल-कर सम्बन्धी आन्दोलन बहुत उग्र हो उठा। लोग खूब जोशमें आकर जुलूस निकालते थे और वन्देमातरम्‌के नादसे आस्मानको गुञ्जा देते थे। यहां तक कि जनताके नेताओंने मिलकर आगामी शुक्रवारके दिन अपना असन्तोष प्रकट करने के लिये एक नगरव्यापी हड़ताल करनेका निश्चय किया। अभी शुक्रवारको दो दिन शेष थे। सब लोग हड़तालको सफल बनानेके लिये पूर्ण प्रयत्न करने लगे। डाक्टर साहब तो इस कामके लिये कुलियोंकी तरह मेहनत कर रहे थे। कभी वह पैदल ही दूकानदारोंके पास जाते, कभी मज़दूरों और कभी टांगेवालोंके पास।

शान्ताका हाल बुरा था। वह बेचारी बहुत चिन्तित थी। वह जिस दिशासे अपने पतिको बचाना चाहती थी, वही दिशा उसके पतिको चम्बक की तरह अपनी ओर खींच रही थी। कई बार तो वह सोचती—मैं अभागी न जाने किस दीवानेके हाथ पड़ी। दुनियां भर चैन की बंसी बजाती है, आमोद-प्रमोद करती है—यहां अपनी लड़कीके विवाह तककी सुध नहीं ली जाती। जन्म भर तरसते बीत गया, इन्होंने कभी प्यारसे दो चार बातें तक न कीं। अब ये घर बैठे-बिठाये एक और आफत मोल ले रहे हैं। समझाओ, तो उल्टा मुझको ही बनाते हैं। ईश्वर न करे, यदि कहीं कुछ हो जाय—तो मैं अभागी कहींकी न रहूंगी।' यह सोचते-सोचते उसकी आंखोंमें आंसू भर आते थे।

बृहस्पतिवारकी रातके ११ बजे डाक्टर साहब घरमें आये। दिनभर अगले दिनकी हड़तालके लिये दौड़-धूप करते रहनेके कारण वे बिल्कुल बेदम हो गये थे। आते ही पलंग पर पड़ गये। शान्ताने आज दिन भर भोजन नहीं किया था। डाक्टर साहबके आते ही वह फूट-फूट कर रोने लगी। यह देखकर डाक्टर साहबका दिल भी मसोस उठा। उनकी आँखोंमें भी आंसू भर आया। परन्तु बोल वे एक अक्षर भी न सके, केवल आँखोंमें आँसू भर कर बड़ी दयनीय दृष्टिसे वे अपनी धर्मपत्नीकी ओर देखने लगे। मानों वह शान्तासे बड़े दीन भावमें कह रहे थे—"क्षमा करो। मैं बहुत आगे बढ़ गया हूं।"

(५)

आजकी हड़ताल एक अभूतपूर्व हड़ताल थी। शहर भरमें एक भी मोटर या टांगा आज नहीं दिखाई देता था। एक भी दूकान आज नहीं खुली हुई थी। सब जगह सन्नाटा था। एक व्यापक मातम-सा दिखाई देता था। लोग छोटी छोटी टोलियां बनाकर इधरसे उधर चुपचाप घूम-फिर रहे थे।

११ बज गये। सब जगह पूर्ण शान्ति रही। डाक्टर साहबका एक-एक क्षण बड़ी चिन्ताके साथ

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कट रहा था। यदि कहीं दङ्गा हो जाय, तो वह अपने साथ ५, ७ स्वयं सेवकोंको लेकर सब जगह घूम-फिर कर शान्तिरक्षाके लिये प्रयत्न कर रहे थे। ११ बजे डाक्टर साहब बाजारमें रुककर राह चलते लोगोंको कुछ समझा ही रहे थे, कि उन्हें ठण्डी सड़क पर कुछ अशान्ति हो जानेका समाचार मिला। वे बेतहाश उसी ओर भागे। वहां पहुंच कर उन्होंने देखा, कि सैकड़ों आदमी पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्टकी मोटरको घेरकर खड़े हुए हैं। डाक्टर साहबको ज्ञात हुआ कि ८, १० वर्षकी उम्रके दो बालकोंने सुपरिण्टेण्डेण्टकी मोटर पर कुछ कङ्कड़ फेंके थे, इस कारण उसने उन्हें गिरफ्तार कर लिया है, और उन लड़कोंके रिश्तेदार उन बच्चोंको छोड़ देनेके लिये जिद्द कर रहे हैं। इसी सिलसिलेमें यह भारी भीड़ जमा हो गई है।

डाक्टर साहब शीघ्रतासे अपने साथके एक छोटे मोटे ताजे स्वयंसेवकके कन्धों पर चढ़ कर खड़े हो गये। उन्होंने जनताको बिखर जाने और शान्त रहनेका उपदेश देना शुरू किया। लोगों पर इसका जादूके समान असर हुआ, और वे अपने घरोंकी तरफ़ चलनेकी तैयारी करने लगे। इसी समय पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्टने मोटरसे नीचे उतर कर डाक्टर साहबको मजिस्ट्रेटका वारण्ट दिखाकर उन्हें अपने साथ मोटर पर बैठनेका हुक्म दिया। डाक्टर साहबने स्वयंसेवकके कन्धे पर ही वह वारण्ट पढ़ा, और जनताको सम्बोधन करके कहा—घबराने की कोई बात नहीं है। केवल शान्तिभङ्ग न होने पावे।" डाक्टर साहब मोटर पर सवार हो गये।

लोग यह समझ गये कि डाक्टर साहब गिरफ्तार हो गये हैं। मोटर चल दी, परन्तु सब लोग बुतोंकी तरह शान्त भावसे खड़े रहे।

वायु-वेगसे डाक्टर साहबकी गिरफ्तारीकी खबर शहर भरमें फैल गई। परन्तु कहीं कोई उपद्रव नहीं हुआ, केवल लोगोंमें हड़तालके लिये उत्साह और भी अधिक बढ़ गया। डाक्टर साहब कसौटी पर खरा सोना उतरे, अतः जनता भी अब उन्हें अपना पूजनीय नेता मानने लगी।

शान्ताने जब यह हाल सुना तो उसके तलवोंके नीचेसे ज़मीन निकल गई। जो आशंका उसे इतने दिनोंसे कंपा रही थी, आखिर वह सत्य ही सिद्ध हुई। वह चिल्ला-चिल्ला कर जमीन-आस्मान एक करने लगी। वह देवी-देवताओंकी मिन्नत मनाने लगी, अपने पतिके मित्रोंका नाम ले लेकर उनसे सहायताकी प्रार्थना करने लगी। लीलाको भी असह्य कष्ट हो रहा था, परन्तु वह अपनी माताकी तरहसे चिल्ला-चिल्ला कर रोती नहीं थी। माता और बहिनको इस तरह रोते देख कर छोटा बालक बीरेन्द्र भी रोने लगा। घरमें पूरी तरहसे मातम छा गया। डाक्टर साहबके अनन्य मित्र श्रीयुत रामनारायण वकील उनके घर आकर शान्ताको आश्वासन देने लगे, परन्तु उसका कोई फल न हुआ।

(६)

सायंकालका समय था। आज आसमानमें थोड़े-थोड़े बादल छाये हुए थे, अतः उतनी गरमी न थी। शान्ता और लीला अपनी ऊपरकी बैठकमें एक दरी पर लेट कर चुपचाप आंसू बहा रही थीं। आज घरमें चूल्हा न जला था। दोनोंने प्रातःकालसे एक चिल्लु भर पानी भी न पिया था। छोटे बालकको

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वकील साहब फुसला कर अपने घर ले गये थे। आज शहरमें हड़ताल थी, अतः चारों ओर अभूत-पूर्व सन्नाटा छाया हुआ था। सारे शहरमें मातम-सा छाया हुआ प्रतीत होता था।

सहसा पासकी सड़क परसे अंग्रेजी बेण्ड और बांसुरियोंकी मधुर आवाज सुनाई पड़ने लगी। लीला उठकर बैठ गई। उसे कौतूहल हुआ कि आज इस मातमके दिन यह क्या होने लगा। उसने अपने मकानकी खिड़कीसे अपना मुंह बाहर निकाला। दूर पर दिखाई दिया कि बर्दीवाले बैण्ड बाजेके साथ एक बड़ा भारी जुलूस उसी तरफ चला आ रहा है। लीलाका आश्चर्य और भी अधिक बढ़ गया। यह कैसा जुलूस है! उसने और अधिक ध्यानसे इस जुलूसकी तरफ देखा। लीलाको जो कुछ दिखाई दिया, उसपर उसकी आंखें सहसा विश्वास न कर सकीं। उसने देखा—जुलूसके आगे-आगे लोगोंके हाथमें एक भारी फोटो है। यह फोटो डाक्टर रामनाथका है। वह चारों ओरसे मालाओंसे घिरा हुआ है। लोग रह-रहकर इस फोटो पर फूलोंकी वर्षा कर रहे हैं। लीलाने उत्तेजित स्वरमें पुकारा—"मां, मां, जरा बाहर देखो!"

लीलाकी आवाज सुनकर शान्ता चौंक कर उठ खड़ी हुई। बड़े अनमने भावसे उसने खिड़कीसे अपना सिर बाहर निकाला। इसी समय हजारों गलोंसे एक साथ निकले हुए इन जय-जयकारोंने आसमानको कंपा दिया—

"बन्दे मातरम्!"

"महात्मा गांधीकी जय!"

"डाक्टर रामनाथकी जय!"

शान्ताका उदास चेहरा तत्क्षण आत्माभिमानसे खिल उठा। वह निर्निमेश नेत्रोंसे अपने पतिके चित्र-की तरफ देखने लगी। उसका सम्पूर्ण शोक काफूर हो गया, आत्म-गौरवकी एक सुन्दर मुस्कान उसके होठों और गालोंपर छा गई। झुका हुआ सिर गर्वसे तन गया। उसने सोचा—"आहा, यही महात्मा मेरे पति हैं।"

इस समय तक जुलूस डाक्टर साहबके मकानके नीचे तक पहुंच चुका था। नगरके हजारों लोगोंने शान्ताकी तरफ देखकर एक साथ श्रद्धासे सिर झुका दिया। शान्ता हाथ जोड़कर जनताके इस हार्दिक अभिनन्दनका उत्तर देने लगी। इस समय वह ऐसा अनुभव कर रही थी कि मानों वह इस सम्पूर्ण जनताकी माता हैं। शान्ताको अपने पतिके चित्रके सम्मुख सिर झुकाता देखकर उत्साही जनताने जय-जयकारोंसे आसमान एकबार पुनः सिहरा गया—

"बन्दे मातरम्!"

"डाक्टर रामनाथकी जय!"

"माता शान्ताकी जय!"

शान्ताने अनुभव किया इस मर्त्यलोकमें तो इससे बड़े सुखकी कल्पना भी नहीं हो सकती।

\+ × + +

अगले दिन प्रातःकाल डाक्टर साहब जमानत पर छोड़ दिये गये! लोगोंने फिरसे उनका जुलूस निकाला। यह जुलूस जब उनके घरके सामने आकर समाप्त हुआ, तब घरके अन्दर प्रविष्ट होते हुए डाक्टर साहबका प्रसन्न चेहरा थोड़ी देरके लिये मुर्झा-सा गया। उन्होंने सोचा, इतने सम्मानके बाद अब शान्ताकी झाड़ सुननी पड़ेगी।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इसी समय शान्ताने दौड़कर डाकृर साहबके चरणोंपर अपना सिर रख दिया। उसके चेहरे पर इस समय आत्माभिमान और लज्जाके भावका विचित्र सम्मिश्रण छाया हुआ था। डाकृर साहब यह देख अचरजमें आ गए। इसी समय शान्ताने आवेशसे कांपते हुए स्वरमें कहा—नाथ! क्षमा करो।"

डाकृर साहबकी आंखोंमें आनन्दके आंसू छलक आये। उन्होंने शान्ताको उठा कर छातीसे लगा लिया और कहा—शान्ता नौकरी छीन गई!"

शान्ताने लजाकर कहा—"नाथ! इतने दिनोंके बाद अब जाकर तुम्हें पहिचान पाई।"

तू

(लेखक—ला० भगवानदीन 'दीन')

बुद्धिमानोंके विमल मनकी सफ़ाई है तू।
प्रेम-पथ गामियों की मोद मिठाई है तू ॥१॥
काव्य कर्तारों की कल कीर्ति कमाई है तू।
स्निग्ध चित्तोंकी सुधासिक्त सचाई है तू ॥२॥
कह सके कौन सुकवि ऐसी बड़ाई है तू।
देखने वाले एकाई तो दहाई है तू ॥३॥
मान मद मातोंके हित आम्र-खटाई है तू।
कल्पना कुंज पै ऋतुपतिकी चढ़ाई है तू ॥४॥
प्रेम श्रीकृष्ण को वृषभानु की जाई है तू।
भय भगानेको भी नरसिंह दोहाई है तू ॥५॥
रोष महिषेशके हित चण्डिका माई है तू।
गान विद्या की मृदुल मीठी अथाई है तू ॥६॥
बीणा विद्या की मधुर मीड़ सोहाई है तू।
काव्य बल्लीके सुमन-चयकी सोंधाई है तू ॥७॥
कन्यका कुल की अभय शील भोराई है तू।
कामिनी कुलकी मनोहारि लोनाई है तू ॥८॥
पुष्टकर प्रेम पयोदधि की मलाई है तू।
दुष्ट दंभीश दलन हेत दिनाई है तू ॥९॥
कष्ट कर्तन में भी कैंची से सवाई है तू।
सभ्यता युक्त समाजोंकी सगाई है तू ॥१०॥
ज्ञानदृग हेत सुधाँजनकी सलाई है तू।
मान-मर्याद रखानेकी तो खाई है तू ॥११॥
साधु-सन्तोंकी परमपूज्य सुधाई है तू।
दो सुहृदयोंकी परम मान्य मिताई है तू ॥१२॥
ब्रह्मवेत्ताकी विरति बुद्धिकी ताई है तू।
शुद्ध आचारके सौंदर्यकी धाई है तू ॥१३॥
मन-मलीनोंके लिये प्रेत मिठाई है तू।
शुद्ध चित्तोंके लिये मोदकी माई है तू ॥१४॥
शुद्ध सिंगारकी आनन्द बधाई है तू।
मुग्धकर हास्य सुरस हेत अताई है तू ॥१५॥
अद्भुतारण्य, करुण-कूट उँचाई है तू।
शान्त हित शुद्ध उषाकाल—ललाई है तू ॥१६॥
बीर रस हेत मदनबान निकाई है तू।
रौद्र हित अञ्जनीनन्दनकी लड़ाई है तू ॥१७॥
भयके भैंसेके लिये क्रूर कसाई है तू।
जल जुगुप्साके लिये बाण हवाई है तू ॥१८॥
भव्य भगवानके वैभवकी भलाई है तू।
कीर्तिकर माईके लालोंकी ललाई है तू ॥१९॥
रामकी दिव्य दयाजात निकाई है तू।
दुखियोंके दीन दुःखी दिलकी दवाई है तू ॥२०॥

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

लतखोरीलाल

(लेखक—श्रीयुत जी० पी० श्रीवास्तव बी० ए० एल० एल० बी०)

(गवनेका छीछालेदर)

(१)

को-न ऐसा उल्लू मर्द होगा जो अपनी जोरूकी नाराज़गी चुपचाप सह लेना गवारा कर सकता हो ? इस लिये उनका ऐंठना मुझे क्यों न बुरा लगे ? ख़ासकर ऐसी हालतमें कि जब बिगड़ना मुझे चाहिये। मगर उलटे अकड़ गई वह। आखिर वह औरत ही तो ठहरी। और औरतोंकी औंधी खोपड़ी मशहूर ही है। बस यही समझ कर तो मैं अपना गुस्सा पीकर रह गया। करता क्या ? यही मुनासिब भी था। क्योंकि वह थी अपने मैकेमें। और अभी तक कम्बख़्त पण्डितोंके लगन और साइतके झगड़ोंके मारे मेरा गवना भी नहीं हुआ था। शादीमें इन्हीं पाखण्डियोंने ऐसा अड़ंगा लगाया था, कि मुझे उनसे दो एक बातें तक करनेका मौक़ा भी न मिला। तभी तो वह बेधड़क हो कर मज़ेमें वहीं बैठी बैठी अपना मुंह फुला बैठी। और उसकी उड़ती हुई ख़बर भी मेरे पास भिजवा दी। ख़तसे नहीं ज़बानी। पाजीपना पर यह बदमाशी तो देखिये। जानती थी न, कि इस वक्त मैं उसका कुछ कर नहीं सकता। मगर मैं ऐसा बेवक़ूफ़ नहीं हूं। झट इस बातको मैंने अपनी डायरीमें मोटे-मोटे हर्फ़ोंमें लिख लिया है। ताकि मैं इसे कभी भूलने न पाऊँ। और जब कभी उनसे मुठभेड़ हो तो तुरन्त अपना गुस्सा भड़काकर अपनी कसर पहिले ही निकाल लूं। इसमें ज़रा भी मुरव्वत करना ठीक नहीं। वरना इसी तरह लोग बादको जोरूके टट्टू हो जाते हैं। क्योंकि जहां कोई शुरूमें दबा कि वह हमेशाके लिये दब्बू हुआ। न एतबार हो आज़मा कर देख लीजिये।

यह तो मुझे पूरा इतमीनान है, कि मौक़ा मिलने पर मैं अपना गुस्सा उनपर ख़ूब कसके दिखा सकता हूं। क्योंकि उनके साथ शादी हो जानेसे मेरा उनपर थोड़ा ही बहुत अख़्तियार नहीं, बल्कि सोलहो आने मैं ही उनका क़ानूनी मालिक हूं। और मिलकियत पाकर अपनी हक़ीयतमें कुछ कोताही करना बेवक़ूफ़ोंका काम है। तब मैं बिना अपना ताव दिखाए कैसे रह सकता हूं ? मुझे चैन ही नहीं आ सकता। क्योंकि जबसे उनकी नाराज़गी की ख़बर मिली है, तभीसे दिमाग़ ऐसा गर्म हो रहा है कि सूट-बूट, किताब-कापी, रोटी-दाल सब हराम है।

मगर क्या बताऊं, जरा मैं अपने इस पाजी दिलसे हैरान हूं। क्योंकि मैं चलता हूं उत्तर तो यह कम्बख़्त जाता है दखिन और तारीफ़ यह है कि मौक़े पर मुझे भी अपने साथ घसीट ले जाता है। गोकि यह मेरे बदनका है। इसलिये इसे मुझीको अपना मालिक समझना चाहिये। मगर यह बेवकूफ मुझे नहीं उन्हें अपना सगा

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मालिक जानता है। न जाने किस कायदा और किस कानून से। बस यही तो मुसकिल है। वह भी आजसे नहीं बल्कि शादीके बहुत पहिलेसे, जब हमारी वह—समझे आप ? श्रीमतीजी—सिर्फ़ साढ़े-चार फिट पौने ढाई इञ्चकी थीं। निहायत हल्की, फुल्की, नन्ही-नन्ही, भोली-भोली, हाय! हाय! कुछ न पूछिये। बस अब ज्यादा याद न दिलाइए। नहीं गुस्सा गया भाड़में ढांढ़े मार कर रोने लगूंगा। क्योंकि इतने ही में अभीसे उफ़! बापरे बाप !! पूरे डेढ़सौ डिगरीका टीस मारने लगा।

जब वह अपने बाप यानि सबजज साहबके, साथ आकर मेरे यहां ठहरी थी और पिताजीने भी सबजज साहबकी, कुछ उनकी पुरानी दोस्तीके ख्यालसे उतना नहीं, जितना अपनी वकालतको और चमकानेकी ख़ातिर, अपने मकानमें दो महीने तक बिना किरायेके रहने दिया था, तब वह ऐसी ही सुबुक-सुबुक, ठुमुक-ठुमुक क्या बिल्कुल "Made in England" और ऐसी लाजवाब कि देखते ही छाती फाड़के रुलाई आने लगे। तभी तो उनकी विलायती काट छांट और 'फ़ैनसी शेप' देखकर मुझसे न रहा गया। धमसे आशिक़ ही हो गया। और बड़े ज़ोरोंके साथ। क्योंकि तब मुझे क्या मालूम था कि इन्हींके साथ बादको मेरी शादी होगी ? वरना ऐसी गलती कभी मैं जान बूझकर कर सकता था ? लाहौल विलाक़ुवत ! हर्गिज नहीं।

मुझे आशिक़ ही होना था तो किसी और पर आशिक़ होता। इनपर आशिक़ होकर अपने ही पैरमें भला मैं कैसे कुल्हाड़ी चलाता ? क्योंकि आप भी जानते होंगे कि प्रेमीका होती है मिठाई और पत्नी होती है दाल-भात। मिठाई हमेशा मिठाई ही रहेगी, दाल भात नहीं बन सकती। इसी तरह प्रेमी होना और चीज़ है और पति होना और चीज़। एक होता है गुलाम तो दूसरा होता है मालिक। तब यह दोनों ओहदे एकमें कैसे मिलाये जा सकते हैं ? तभी तो मुझसे और मेरे दिलसे नहीं पटती। क्योंकि उनके प्रेममें पड़ जाने से यह चाहता है, कि मैं उनके चरणों पर लोटता और उनके नख़रे उठाता रहूं और मैं अपनी पतिगीरी की हैसियतसे कहता हूं, कि मिज़ाज़ बनानेका मेरा काम है ताकि वह मेरे पैरों पर गिरें।

मगर क्या करूं अपनी इस कम्बख़्त तक़दीरको कि इसने मुझे दाल-भातकी जगह पर हमेशा पेट भरनेके लिये मिठाई दे रखी है। जिसके ख्यालसे यहां दिमाग़में बदहज़मी हो रही है, क्यों न हो ? लोग शादी करते हैं, इसीलिये न कि उनकी स्त्रियां उनकी सेवा करें। जब बेचारे थके-मांदे और गर्माए हुए बाहरसे आएं तो झट पंखा लेकर उन्हें ठंढा करें। जूता उतार कर सामने खड़ाऊं और लोटेमें पानी रख दें। उम्दा-उम्दा खाना पका कर खिलाएं। रातको सरमें तेल लगाकर इनके पैर दबाएं। जब मियां ज़रा ऐंठ जाएं तो घण्टों हाथ जोड़ कर इन्हें मनावें। मगर हाय ! अफसोस ! मुझे यह सब सुख कहां नसीब ? क्योंकि अगर श्रीमतीजी मेरी कुछ सेवा करना भी चाहें, तो यह कम्बख़्त दिल उन्हें कहीं करने दे सकता है ? जहां वह पंखा लेकर सामने आयेंगी, तहां तो मैं ही पंखा उनके हाथसे छीनकर खुद उन्हींको झलने लगूंगा। उन्हें चौकेमें जाते देख दौड़कर मैं खुद ही चूल्हा फूकूंगा। तबियत ही नहीं मानेगी। यही तो रोना है। यह

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सारी गड़बड़ी बस मेरी ज़रा सी चूकसे हो गई है। क्योंकि उनपर आशिक़ होते वक्त मुझे सपनेमें भी ख्याल न था, कि मेरी शादी इन्हींसे होगी!

(२)

ग़ल्ती जो होनी थी वह तो इस पाजी दिलकी बदमाशीकी वजहसे हो गई। मगर उसीके साथ ग़नीमत यह हुई, कि मैंने बड़ी अक़्लमन्दी भी की। वह यह कि उस वक्त उनसे साल दो साल तक साहब सलामत थी, जानपहचान थी, मेलजोल था और मेरा प्रेम इस बीचमें औंधे फोड़ेकी तरह बराबर पकता भी रहा, मगर क्या मजाल कि कभी भी मैंने उसे फूटकर जाहिर होने दिया हो। यही तो तारीफ़ है। यहां तक कि जब सबजज साहब बदल कर दूसरी जगह जाने लगे तब भी मैंने अपनी "उन" से नहीं कहा—न ज़बानसे, न खतसे और न इशारोंसे—कि श्रीमतीजी मैं आपपर चपरगट्टू हूं। हालांकि उनकी शादीकी उस वक्ततक कुछ भी चर्चा न थी। क्योंकि मुझे बराबर यही धड़का रहा कि अगर कोई भी प्रेमकी बात उनसे कहूंगा, तहां वह धड़से मुझे मार न बैठें या अपने बाप या मेरे बापसे कह कर मुझे पिटवा न दें। और क्या? औरतोंके मिज़ाजका कौन ठीक? घड़ीमें बिल्ली और घड़ीमें बन्दरिया। अपनी गरज पर मेंऊं मेंऊं मगर दूसरेके गरज पर खोंय खोंय। यह धांधली इन लोगोंकी बाबा आदमके वक्तसे चली आती है। मगर अफ़सोस! अब तक किसी भी रिफारमरने इसको सुधारनेकी फिक्र नहीं की। यह लोग बस पुनगी ही सींचना जानते हैं, जड़ नहीं। तभी तो औलादके अड़ियल और गड़बड़ होनेसे देश और चौपट होता जाता है।

दिल तो मेरा उनसे अपना प्रेम उगल देनेके लिये मुझे बहुत हुरपेट रहा था। मगर मैं ऐसा उल्लू न था; कि इस बेवक़ूफ़के चक्कमेमें आकर अपनी खोपड़ी तुड़वाता। यह मैं उसी वक्त समझ गया था, कि इसमें मेरी कुछ न कुछ ज़रूर अक़्लमन्दी होगी तभी मेरा प्रेम गुपचुप रह गया। वह अक़्लमन्दी आख़ीर अब जाकर साबित हुई। क्योंकि अगर मैं उनसे कहीं कहे होता, कि आपका प्रेमी हूं तो इस वक्त उनका मिज़ाज उछल कर सातवें आसमान पर ही रहता है, जिसके नीचे मेरी पतिगीरीकी सारी हक़ीयत भुसमें मिल जाती। और वह अब जरासा फूलनेके बदले इतना फूलतीं कि कभी पिचक ही नहीं सकती थीं। तब वह यह कह कर थोड़े रह जातीं कि "मैं इसका (यानी मेरा) जिन्दगी भर मुंह न देखूंगी।" बल्कि कहतीं कि "इसका कलेजा काट कर लाओ और उसपर जब नहाऊंगी तब मुझे चैन आयेगा।" और मुझे उन्हें चैन देनेकी फिक्र करनी ही पड़ती। राजा दशरथको देख लीजिये। कैकेईने उनके साथ इसीलिये तो इतना जान मारू नखरा-तिल्ला फैलाया था, कि वह उनकी नामको स्त्री मगर असलियतमें प्रेमिका थी। इसीलिये भाई कानोंपर हाथ धरके खरी खरी कहता हूं, चाहे मानों या न मानो कि अपनी स्त्रीसे चाहे उससे शादी हो चुकी हो या होनेवाली हो भूल कर भी न प्रेम करना। वरना पतिगीरी गई तो चूल्हेमें, जन्म भर उसके तलवों पर नाक रगड़ते-रगड़ते नाक ही साफ़ हो जायेगी। यही गत मेरी भी होती मगर ख़ैरियत इतनी ही है, कि उन्हें मेरी अक़्लमन्दीकी वजहसे ख़बर ही नहीं, कि मैं उनका नया या पुराना किसी तरहका भी प्रेमी हूं। इसीसे

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मुझे पक्की उमीद है, कि मैं उनपर अपनी पतिगीरीका पूरा हक़ जमा लेजाऊँगा। और पहिली ही मुलाकातमें मए सूदके अपना गुस्सा दिखाकर उनसे अपना दाव लेलूंगा, तब आगे कोई बात-चीत होगी बशर्तेकि वक्त पर मेरी डायरी मिल जाये जिससे मैं अपने गुस्सेका हिसाब किताब ठीक-ठीक मालूम कर सकूं।

अपने दिलको तो मैंने खूब ठोक पीट कर समझा दिया है, कि बचा मेरे और श्रीमतीजीके मामलेमें तुम ज़रा भी चीं-चपड़ मत करना। वरना बात बनेगी नहीं। भलमनसाहत इसीमें है, कि न तुम्हारे काममें मैं दखल दूं और न तुम मेरे काममें अपनी टांग अड़ाओ। तुम्हें उनसे मुहब्बत करना है, करो, खूब जी भरके करो। मैं इस समझौतेकी वजहसे कुछ न बोलूंगा। इसी तरह तुम भी मेरे हक़ीयतके झगड़ेमें न पड़ो। और मुझे उनपर अपनी पतिगीरीकी शान और हुकूमत बेधड़क होकर वर्तने दो। इतना डांट देनेसे दिल साहबका तो मिजाज ठंढा पड़ गया और अब मुझे विश्वास है कि श्रीमतीजी पर मुझे अपने मालिकपनका रोब जमाते वक्त इनकी नानी मरें जो कुछ चूं करें। लीजिये इस शैतानको तो मैंने यों ज़ेर कर लिया। मगर अपने पुरोहितजीको किस तरह राहपर लाऊँ, कुछ समझमें नहीं आता। न जाने हम इनके बाप मारे हैं, कि इनके पत्रेमें मेरे गवनेकी साइत ही नहीं बनती, जिसकी वजहसे मेरे मनसूबोंका सारा ताव ठंढा पड़ा जा रहा है। क्योंकि जब श्रीमतीजीसे मिलनेकी नौवत आवे तब तो मैं ऐंठ दिखाऊं। वरना जंगलमें मोर नाचा किसने देखा?

(३)

वाह! वाह!! जरा पत्रा बनाने वालोंकी अक्ल तो देखिये। जब आसमान पर बिजली तड़पती है, और काली घटा गड़गड़ाती है तब मारे डरके इतना हवास गुम हो जाता है, कि यही जी चाहता है, कि किसीकी गोदमें चिमट कर मुंह छिपा लें। मगर बादल रोते-रोते मर मिटे, और इन लगनके ठेकेदारों को मेरे गवनेकी फिक्र न हुई। अब यही लोग बतावें, कि ऐसी गड़गड़ाहटकी घबराहटमें किससे चिमटा जाय? चारपाईकी पट्टीमें इतनी सख्ती है कि नाक ही थकुच जाती है।

जब हवा कोड़ेकी तरह शपाशप बदनको काटने दौड़ती है और कड़ाकेकी सर्दी पड़ती है, आदमीका साढ़े पांच फिटका ढांचा सिकुड़ कर सिर्फ साढ़े डेढ़ फिटका रह जाता है। उस वक्त विस्तरे पर इतनी खाली जगह महज इसी लिये बचकर चिल्लाती है, कि अब यहां अकेले काम नहीं चल सकता इसलिये जल्दी एक-एकके दो-दो हो जाओ। उसपर आदमी क्या गदहा भी जानता है कि 'जाड़ा जाए रूईसे या फिर दूईसे।' रूईका भाव इस देशमें सब चीजोंकी तरह दिनों दिन इतना मंहगा होता जाता है, कि कुछ दिनोंमें इसका फाहा भी मिलना मुशकिल हो जायेगा। ऐसी हालतमें सहारा ख़ाहमख़ाह जाकर दूई पर अटकता है। फिर भी इन हत्यारोंको मेरे गवनेकी न सूझी। यह खबर नहीं, कि यहां मारे सर्दीके दांत किटकिटाते-किटकिटाते कहीं दांत न टूट जायँ। बदन अकड़ते अकड़ते गठिया हो जाय। कलेजा दलदलाते-दलदलाते निमोनिया जकड़ ले। मगर इन्हें किसीके मरने और जीनेसे क्या मतलब?

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इन अक्कके दुशमनोंको शादी-व्याह, गवना-धवना की साइत बनानेको सूझी भी तो कब ; जब लाहौल-विलाक़ूबत ! कुत्ता भी कम्बख्त डेढ़ हाथकी ज़बान लटकाये और दुम दबाये अपनी जान चुरानेके लिये भागा-भागा फिरता है। जब बदन पर एक कुर्ता भी रखना तो दूर रहा, मारे पसीनेके खुद अपना ही लोथ भारू हो जाता है। ऐसी आफतके दिनोंमें भला किसीके पास उठना बैठना ही नहीं, बल्कि उसके साथ रात-रात भर एक कोठरीमें बन्द रहना भाई कच्ची फांसीकी सांसत नहीं तो और क्या है ? मगर इन लगन बनाने वालोंकी औंधी समझमें जोड़ा मिलानेके लिये यही जानमारू मौसिम पसन्द आया। जब ससुरालके दरवाजे तक पहुंचते-पहुंचते मारे धूपके खोपड़ी चिटख़ जाये, लूह लग जाय या दावत खानेके पहिले ही हैज़ा हो जाय। खैर ! यही बड़ी बात हुई, किसी तरह गौनेकी नौबत तो आई। चलो भागे भूतकी लंगोटी भली।

सोचे हुए था, कि ससुरजीके घर पहुंचते ही श्रीमतीजीसे "गुड मानिंङ्ग" होगा। मगर जैसे ही उनके आंगनमें क़दम रखा वैसे ही मेरे होश गुम हो गये। क्योंकि जिधर आंखे फाड़कर देखता था, उधर ही दो पांवकी दर्जन भर हथनियां दिखाई पड़ती थीं। झूठ नहीं बिलकुल सच। वहां किसी भी औरतका घूंघट किसी हथिनीके सूंढ़से छोटा न था। शादीमें इन लोगोंकी इतनी भरमार न थी। मगर इस दफे ससुरजीने इतनी हथिनीनुमा औरतें कहांसे और क्यों पकड़ मंगवाई, मुझे आजतक समझ हीमें नहीं आया। इन्हीं झुण्डोंमें कहीं न कहीं श्रीमतीजी भी रही होंगी ज़रूर। मगर शायद उन पर भी यही झूल पड़ा था। इसीसे वह मुझे दिखाई नहीं पड़ीं। जी तो बहुत चाहा कि घूंघट उलट-पलट कर उन्हें ढूंढ़ निकालूं। मगर कहां तक उलटता मुझे तो सभी सूंढ़की आड़में वही जान पड़ती थीं।

खैर ! राम राम टें टें करके वह भी वक्त आया, जब हम और वह एकमें नत्थी करके भीतरसे बाहर ढकेले जाने लगे। उस वक्त औरतोंने और खासकर श्रीमतीजीने चिल्ला-चिल्ला कर रोनेका वह कोहराम मचाया ; कि यह मेरे कानोंकी बेहयाई थी, कि उनके पर्दे फटते-फटते बाल-बाल बच गए। मैं फौरन समझ गया, कि इन लोगोंने जरूर कोई आपसमें बाजी लगाई है कि कौन सबसे ऊंचा सुर निकाल सकता है, वरना इतना गला फाड़नेकी क्या जरूरत थी ? मैंने बहुत कुछ समझा कर इन लोगोंसे कहा, कि अब बस करो मामला फैसला हो गया। श्रीमतीजी बाजी मार ले गईं। रोनेमें "फर्स्ट प्राइज़" उनका हो चुका। अब तुम लोग नाहक कोशिश करती हो।" मगर नक्कारखानेमें तूती की आवाज़ किसे सुनाई पड़ती। उल्टे समझाते समझाते मैं रो पड़ा। क्या करता ? रुलाई और हंसी ख़रबूज़ेकी तरह रङ्ग पकड़ती है। फिर तो मेरी आंखों से आंसू निकलते ही मुझपर भी बाज़ी मार ले जानेका जोश सवार हो गया, उसपर ठहरा मेरा मर्दाना गला। बस यह कारखानेके भोंपूकी तरह चिंग्घार कर सारे चिलपोंको छाप बैठा। मगर अफ़सोस ! किसी कम्बख़्तने इसपर मुझे न तो कुछ इनाम दिया और न मुंहसे इतना ही कहा कि—"शाबाश ! तुम अउवल हुए।" हर जगह पक्षपात और क्या कहूं।

(४)

पालकी पर बैठते ही श्रीमतीजीका घुंघट देख

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कर मैं भड़का। जिनको मैं पहले हीसे जानता था, जो मुझसे बराबर तपाकसे मिलती थीं, हँसती और बोलती थीं, वह अब भला अकेलेमें मुझसे किस तरह पर्दा कर सकती थीं? ससुरालके आंगन की बात और थी। जहां सभोंके मूंढ़ लटक रहे थे, वहां यही बेचारी आदमीकी सूरतमें फुट्‌बॉल कैसे रह सकती थी, मगर यहां हमारे साथ वह भी पालकीके अन्दर इस फैशन की जरूरत मुझे कुछ समझमें नहीं आया। मैं कोई बायली आदमी तो था नहीं। पराया मर्द भी न था। खास उन्हींका सगा, निजी, अपना व्याहा और कानूनी मर्द था। उस पर उनका खूब जाना-पहचाना हुआ भी था। जब उनसे सिर्फ जान-पहचानका नाता था, तब तो मेरे सामने उनके सरके बाल तक अकसर खुले रहते थे और जब वह नाता उचक कर एक दम मियां-बीवीके गुटरगूं पर पहुंच गया, तो ऐसी कायापलट? ग़ज़ब खुदाका! यह अन्धेर नहीं तो और क्या था? तभी तो मुझे शक हुआ कि यह श्रीमतीजी नहीं हो सकतीं, बल्कि उनकी जगह पर कोई दूसरी औरत मेरे साथ नत्थी करके पारसल कर दी गई है।

मगर इस बातका इतमीनान किस तरह होता? किसी बेगानी औरतसे बोलना भी तो भाई 'कारेदारद' है। वह होतीं तो अब तक आप ही टुइयां-सी चहकने लगतीं और तब मैं अपनी डायरी चुपकेसे निकाल उसे पढ़-पढ़ कर अपना गुस्सा भड़काता जाता और उनके लाख पूछने पर भी मैं मारे अकड़के चुप रहता। और यों वहींसे अपनी ऐंठ दिखाकर उनपर रोब जमाना शुरू कर देता। इसी लिये डायरी साथ लाया था। मगर अब तो खेल ही पलट गया। झख मारकर मुझे बोलनेकी जरूरत पड़ी। उसपर मुसीबत यह कि अनजानी औरतसे। अगर कभी किसीसे छेड़छाड़की नौबत आई होती तो इस वक्त जबान भी खुल सकती थी। मगर इस मुल्कमें अजब उल्लू रस्म है, कि नरका गोल अलग और मादाका अलग। खिचड़ी सोसाइटी होती ही नहीं। इसीसे यहां मर्दों और औरतोंको कभी आपस में मिलने-जुलने और बात-चीत करनेके तौर-तरीके मालूम ही नहीं हो सकते। इसलिये अगर उस वक्त कोई बात मेरे मुंहसे नहीं निकली तो उसका जिम्मेदार मैं नहीं हो सकता।

जब बोलनेमें मुझे इतनी हिचकिचाहट हो रही थी तो घुंघट उलट कर उनका मुंह देखना तो मेरे लिये और पहाड़ ढाहना था। फिर भी मुझे उसी वक्त अपना इतमीनान कर लेना भी निहायत जरूरी था। क्योंकि अब भी सबेरा था। ससुराली घरसे बरामद हुए अभी सिर्फ सौ ही क़दम हुए थे। आखिर मेरी अक्ल आड़े वक्त काम आ ही गई। और बिना कुछ बोले-चाले और बिना उनका घुंघट उठाए मुझे उनकी सूरत देख लेनेकी तरकीब सूझ गई। फिर क्या था? झट उचक कर मैं घूम गया और श्रीमतीजीकी तरफ पीठ करके बैठा। पालकी बड़े जोरसे डगमगा उठी और बाहर कहार हाय तोबा मचाने लगे। मगर मुझे तो उनकी शकल देखनेकी पड़ी थी। इन बातोंके ख्याल करनेकी कब फुरसत थी? इसलिये इस तरह बैठते ही मैं उनसे चित लेट गया इस हिसाबसे ताकि मेरा मुंह ठीक श्रीमतीजीके घूंघटके नीचे पड़ जाये और यों मैं उनका चेहरा देख लूं। मगर कम्बख्त कहारोंको बदमाशीसे मेरा निशाना गड़बड़ा गया और मैं उन्हें देख न सका। क्योंकि उन बदमाशोंने ऐन वक्त पर

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पालकीको अपने कन्धोंपरसे पठक दिया और सब मिलकर चिल्ला उठे—"हाय! बापरे बाप! मर गएन बाबूजी! अब्बेसे मूड़ेपर अस अन्धेर मचावे लाग्यो? राम! राम! हमहू पञ्चन केर प्रान ले लियो अउर पलकियो चिथड़ा कै दियो! हाय! दादा!"

अब आप ही इन्साफ़ कीजिये कि अन्धेर मैंने किया या इन पाजियोंने, जिनकी बदौलत पालकीकी पालकी टूटी और श्रीमतीजीके कड़े छड़ेपर गिरकर मेरी खोपड़ी फूटी अलग। ज़मीनके धमाकेसे मेरी पीठके जो अञ्जर-पञ्जर ढीले हो गये, उनका तो कुछ कहना ही नहीं, उसपर कम्बख्ती यह हुई कि मैं उसी वक्त पालकीमेंसे निकाल बाहर कर दिया गया। इसका मुझे अलबत्ता बहुत अफ़सोस हुआ। क्योंकि यह चोट सभोंसे बढ़कर थी।

(५)

घरपर जब मुझे बच्चोंसे पता लगाने पर मालूम हुआ कि श्रीमतीजी असलियतमें वही हैं जो थीं, यानि जिनके साथ मेरी सचमुच शादी हुई थी, तब तो मेरे सरसे पांव तक आग ही लग गई। क्योंकि तब पालकीके भीतर घूंघट काढ़ कर मुझे धोखेमें डाल रखनेकी उनको क्या जरूरत थी? मुफ्त ही तो मेरा इतने दिनोंका भड़का हुआ ताव खराब गया। उसपर कम्बख्त कहारोंने सभी लोगोंके सामने मुझे जैसा ज़लील किया, वह मेरी पीठ और खोपड़ी ही जानती हैं। रेलमें भी उन्होंने मेरी कुछ नहीं मदद की। दूसरोंको चाहे उन्होंने बार-बार मुंह खोलकर घूरा हो, मगर मेरी तरफ़ एक दफ़ा भी घूंघट उठा कर नहीं देखा। हालां कि मैं बार-बार उचक-उचक कर ताक-झांक करता रहा। यहां तक कि मेरी नई टोपी रेलकी खिड़कीके बाहर गिर गई और इसके लिये मैं खूब कसके डांटा भी गया। तभी तो मैंने उसी वक्त कसम खाली, कि अब कभी बुजुर्गोंकी मौजूदगीमें श्रीमतीजीके साथ सफर न करूंगा। चाहे कुछ हो। मगर नतीजा क्या हुआ? वही "कुत्तेकी दुम टेढ़ीकी टेढ़ी।" और "बदल गये नैना चीन्हत नाही।"

एक तो करैला वैसे ही तीता उसपर नीम चढ़ा। उसी तरह एक गुस्सेसे मैं उबल ही रहा था उसपर यह ताज़ा गुस्सा और चढ़ बैठा। यह तो कहिये खैरियत हो गई कि मैंने इसे भी अपनी डायरीमें लिख मारा। लाल रोशनाईसे। और क्या? तब जाकर दिमागमें ज़रा ठण्ढक पहुंची। वरना न जाने मेरा क्या हाल होता?

वही नहीं बदलीं। बल्कि उन्हींके साथ मेरा सारा घर भी बदल गया। क्योंकि जिस घरमें मैं हवाकी तरह आज़ादीसे घूमता-फिरता था, अब उसी में जानेके लिये तरसने लगा। जहां जहां इस नीयत से कदम उठाया वहां ही दरवाजे पर फौरन रोक दिया गया। क्योंकि भीतर पर्देवालियोंका पर्दा बिगड़ जाता। न जाने उस दिन श्रीमतीजीके सरपर सींग या मुंह पर मूछें निकल आई थीं या उनकी सूरतमें कोई अजीब बात हो गई थी कि सारे शहरकी पर्देवालियां उनका घूंघट उलट उलट कर उन्हें खूब गौरसे देखनेके लिये फट पड़ी थीं।

मगर श्रीमतीजी थीं बड़ी चलती पुर्जी। उन्होंने यह तमाशा गर्म होते देख मालूम होता है, अपनी शकल पर टिकट लगा दिया था। तभी तो उनके आगे खनाखन रुपये बरस रहे थे। जिनकी झनकार बाहर मेरे कानोंमें भी पहुंच रही थी। वाह! यह

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

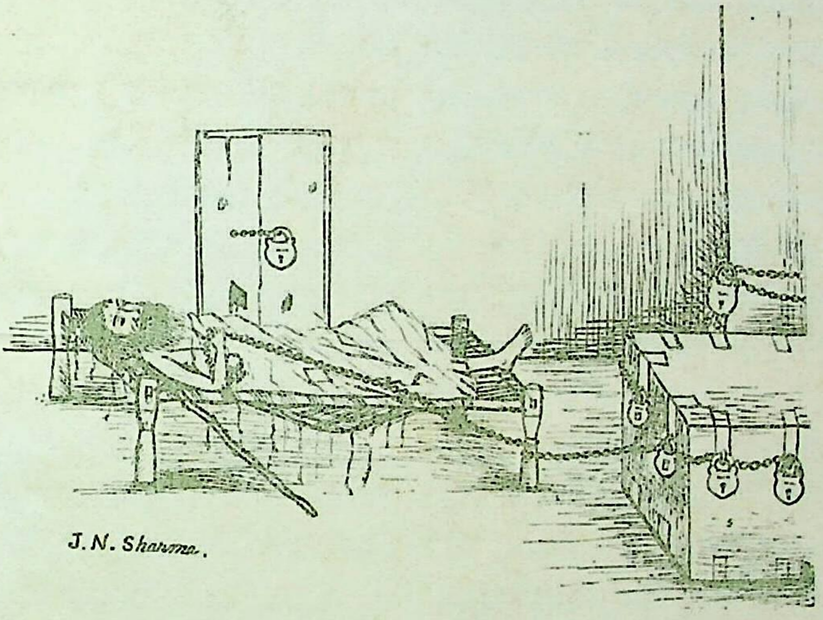

J. N. Sharma.

"सूम-सम्राट"

कुलुफ-शृङ्खला कर गहें, पौढ़े टुटी खाट ;
अधमूंदे-दृग दिवस निशि, जगत 'सूम-सम्राट' ।

——पं रामनारायण शर्मा

छतरपुर—

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भूखी शेरिनी

बालीगंज लेक (कलकत्ता) का एक दृश्य

CC0- In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तो उन्होंने आमदनीकी अच्छी सूरत निकाली। क्यों न हो ? बड़े भाग्यसे किसीको कमाऊ जोरू मिलती है। उनकी इस योग्यता पर मुझे बहुत खुश होना चाहिये था। और मैं अपना सारा गुस्सा भूल कर खुश होनेके लिये तैयार भी था, बशर्ते कि वह मेरे पास एक Free pass यानी मुफ्त टिकट भेज देतीं। मगर हाय! अफ़सोस! उस बेमुरव्वतने मेरे लिये इतनी भी रियायत न की।

जब सुना कि जितनी औरतें आई हैं, अभी वापस नहीं जायंगी बल्कि रात भर यहीं रहकर रत-जग्गा करेंगी तब तो जलभुनके कलेजा और कबाब हो गया। क्योंकि दिन तो किसी न किसी तरह रो-पीट कर कटा, मगर इस सड़ी गर्मीमें रात किस तरह कटेगी, समझमें नहीं आया। खास कर:जब पंखा झलनेवाली घरमें आ गई हो, फिर भी मुझे पंखा न झला जाय तब जोरू रखनेसे फायदा ?

अन्दरका वह हाल और बाहरका यह हाल कि जिसे देखिये वहीं श्रीमतीजीका देवर बना मुझसे मिठाई मांग मांग कर मेरे नाकमें दम करने लगा। यह मुझे मालूम ही न था कि नई दूल्हिन सभी मुहल्ले वालोंकी भाभी होती है। भाड़में. गई ऐसी रिश्तेदारी। उन कम्बख्तोंको उनसे रिश्ता ही जोड़ना था यह खुली बदमाशी वाला और ऊपर से मिठाई मांगने चले वह भो मुझीसे। मिठाईके बदले मैं एक एकको दस दस जूते खिलाता। मगर राममोहन और श्याम मनोहरके मारे मेरा कुछ बस न चला।

यह दोनों मेरे सहपाठी थे, और मेरी ही तरह गर्मियोंकी छुट्टीमें कालिजसे मकान आये हुए थे। जोरूवाले थे। इसी लिये मैंने इन्हें ख़ासतौरसे आज बुलाया था, कि इनसे पतिगीरीका कर्तव्य और जोरुओं के बारेमें कुछ जानकारी हासिल कर लूं। क्योंकि श्रीमतीजी लाख मेरी जानी पहचानी हुई थीं, मगर गवना होते ही उन्होंने ऐसा केचुल बदल दिया था, कि मेरे लिये फिर नईकी नई हो गईं। अगर ऐसी न भी हो जातीं तो भी तो तबमें और अबमें उनमें जमीन आसमानका फर्क हो ही चुका था। क्योंकि तब थीं वह सब जज साहबकी खाली लड़की और अब हैं वह मेरी खास ब्याही हुई बीबी। उस वक्त उनसे बातें होती थीं इस तरह—"नमस्ते।"...... "कहिये मिज़ाज अच्छे हैं।"......"क्या खाना पीना हो गया ?"......(इसके बाद घण्टा भर तक बिल्कुल सन्नाटा)......"अच्छा अब जाता हूं"......कभी-कभी आजाया कीजिये"...(फुलिस्टाप और क्विक मार्च) अब अगर वही बातें फिर हों तब तो पति-गिरी और पत्नीगिरी दोनों ही को अपने कर्मों पर रोकर 'क्विक मार्च' करना पड़े। अब तो मियां बीबीकी तरह आपसमें गूटरगूं करनेकी जरूरत थी, जिसकी भाषा बिना पहिले ही से सीखे और पढ़े मेरे लिये अपनी श्रीमतीजीके सामने जाना अपनेको अनाड़ी साबित करके अपनी भद्द कराना था। क्योंकि भई असलियत तो यह है कि किसी भी मामलेमें आदमीकी धाक जभी जम सकती है, जब उसमें उसे पहिले ही से काफी पैठ और निपुणता हो। सरकार भी किसी को पोस्ट तब देती है, जब उसे छः महीने तक उम्मीदवार रखकर काममें होशि-यार कर लेती है। फ़ौजमें भी रङ्गरूटोंको मुद्दतों क़वायद सिखाया जाता है, तब वे लड़ाईके मैदानमें भेजे जाते हैं। यहां तक कि लड़के घरपर सबक याद कर लेते हैं, तब स्कूलमें उसे सुनाते हैं। मगर

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अफ़सोस ! पतिगीरीकी शिक्षा देनेके लिये मुल्कमें किसीको भी फ़िक्र नहीं। इसीलिये तो यहां घर-घर आफ़त मची रहती है। क्यों न मचे जब बीबी पहिले ही दिन समझ जाती हैं, कि मियां निरे उल्लू हैं तो वह भला बादको कब उनसे दब सकती हैं ? सुधारकोंको चाहिये कि इस ऐबको मिटानेके लिये फ़ौरन ऐसे कालिजोंकी स्थापना करें जिनमें तजुर-बेकार जोरुओंको प्रोफ़ेसर रखकर रङ्गरूट पतियोंको पतिगीरीकी शिक्षा दी जाये। और कौंसिलसे यह कानून पास करावें कि बिना इसका इम्तहान पास किये किसीको भी अपनी स्त्रीके पास जानेका अधि-कार नहीं मिल सकता। मगर भई हमारे सुधारक देशके सच्चे हितैषी हों तब तो इन बातोंकी तरफ ध्यान दें। वरना इन बातोंकी जानकारीके लिये आज मुझे जोरूवाले दोस्तोंकी खुशामद क्यों करनी पड़ती ? उसपर श्रीमतीजीके नकली देवरोंसे मुझे छुट्टी मिलती तब तो इन लोगोंसे इस विषय पर कुछ पूछ-ताछ करता। आखिर कब तक इन मिठाई मांगने वालोंसे छुटकारा पानेका इन्तजार करता ? इसलिये मैंने डण्डा लेके इन मुफ्तखोरोंको भगाना चाहा। उस वक्त भी राममोहन और श्याम मनोहरने बाधा डाली। अफ़सोस !

राममोहन—"भई, तुम अजीब आदमी हो। हंसी मज़ाकमें तुम तो काटनेको दौड़ते हो। ऐसा ही मिज़ाज रखोगे तो तुम्हारी बीबी भी कहेगी, कि किस बेहूदेके पाले पड़े ?"

श्याम मनोहर—"हां और क्या ? अब लौण्डेपन की बातें छोड़ो। घर गृहस्थीवाले हुए, अदब और तमीज़ सीखो ?"

"तो मैं बदतमीज़ हूं जी ?" पिनपिना कर पूछा।

श्याम मनोहर—"यह मैं नहीं कहता। फिर भी तमीज़ बड़ी चीज़ है। इसके बिना आदमी लाख खूबसूरत और काबिल होने पर भी बन्दर समझा जाता है। तभी तो पहिले जमानेमें अमीरोंके लड़के तमीज़ सीखने रंडियोंके घर भेजे जाते थे।"

(६)

मैं दस बजे रातको ताड़वाली वेश्याके दरवाजे पर बांसकी तरह खड़ा था। क्योंकि ईश्वर सला-मत रखे श्याम मनोहरको, जिसकी जबानसे 'रंडियों का जिक्र सुनते ही मुझे यकायक ख्याल पैदा हुआ कि स्त्रीसे छेड़-छाड़ करने, उसकी सोसाइटीमें हंसने, बोलने, उठने, बैठनेके तौर व तरीकेको जाननेके लिये बेचारे समाजने इन लोगोंके द्वार खोल ही रखे हैं। मैं नाहक ही इसके लिये इधर उधर वक्त ख़राब कर रहा हूं। गो यह लोग ज़रा नीची नज़रोंसे देखी जाती हैं। वह तो बदमाशोंकी संगतकी वजहसे। वैसे तो सारंगी भी बुरी समझी जाती है। मगर सारंगीसे बढ़कर दुनियामें भला कोई बाजा है ? वैसे ही यह लोग कितनी ही खराब क्यों न मानी जाएं फिर भी भावी और रंगरूट पतियोंके लिये बड़े कामकी चीज़ हैं। बशर्ते कि वे इनको वेश्या समझ कर नहीं बल्कि मेरी तरह पतिगीरीकी शिक्षा पानेके लिये इन्हें गुरूवानी जानकर इनके यहां जाएं। इसलिये मुझे विश्वास है, कि मेरा इस नियतसे यहां पर आना कभी भी बुरा नहीं समझा जा सकता। क्योंकि इसके साथ शिक्षाकी दुम जो लगी हुई है। अगर कोई बुरा कहे तो आकर मुझसे बहस कर ले। मैं कुछ अपने शौकके मारे तो यहां आया नहीं बल्कि खास श्रीमतीजीकी

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ख़ातिर तमीज़ सीखनेके लिये। क्योंकि अगर उनके सामने बिना हंसने बोलनेका ढंग जाने हुए जाता तो ज़रूर कोई न कोई ग़ल्ती, बेवक़ूफ़ी या बदतमीज़ी हो जाती। तब उनकी नज़रोंसे सदाके लिये गिर कर जिन्दगी मेरी ख़राब जाती। बुरा कहनेवालोंका क्या बिगड़ता?

यह ताड़वाली रंडी बड़ी अच्छी थी। कमसे कम देखनेमें। नाम इसका नसीवन, करीमन, जहूरन ऐसा ही कुछ था, मगर कहलाती थी ताड़वाली, क्योंकि उसके आंगनमें एक बड़ा ही लम्बा ताड़का पेड़ था। रहती थी मेरे मकानके पिछवाड़े चार पांच घरके बाद। मगर उसके यहां जानेका रास्ता मील भरका चक्कर लगाके चौकसे घूमा हुआ था। इसलिये वह हमारे मकानसे नज़दीक भी थी और दूर भी। अकसर जब कभी मैं अपने तिमञ्जले पर चढ़ता था और वह शामको अपनी छत पर होती थी तो मुझे दूर हीसे सलाम करती थी और मैं भी तब इसका जवाब देता था, जैसे कोई अपने नाक परसे मक्खी उड़ाता है। इसलिये इस दूर ही दूरकी थोड़ी सी जान-पहचान होनेके कारण मैंने इसीके यहां जानेका इरादा किया।

मगर यहां आकर बड़े संकटमें पड़ गया। इसके दरवाज़े पर आते आते न जाने क्यों मेरा दिल बड़े ज़ोरोंसे घबड़ा उठा। ऐसा जान पड़ा कि सब लोग मुझीको घूर रहे हैं। और मैं बदहवासीमें ऊंटकी तरह गर्दन उठाए आगे बढ़ता ही चला गया। दम लेनेके लिये ज़रा रुका तो जाना कि उसका मकान मैं मील भर पीछे छोड़ आया। वहां से पलटा तो फिर उसका मकान रास्तेमें छूट गया और मैं पौन मील आगे जाकर रुका। आठ बजेसे दस बजे तक यही कारवाई जारी रही। लाख दिल को मजबूत करके उसके दरवाजे पर आकर रुकना चाहूं, मगर मुझसे रुकाही नहीं जाता था। ऐसा मालूम होता था, कि पीछेसे मुझे कोई खदेड़ रहा है। बस मैं दुल्की-कदम और पोई-सरपट सब एकही चालमें दिखाने लगता था।

आख़िर जब गलीमें लोगोंका आना जाना बिल्कुल बन्द हो गया तब मैं चोरकी तरह पञ्जोंके बल धीरे धीरे रेंगता और अपनी चारों तरफ चौंक-चौंक कर देखता हुआ उसके दरवाजेके सामने ठिठक गया। उसका मकान एक मञ्जला था और छतकी चारो ओर छोटी छोटी मुंडेरे थीं। आदमीकी बोल चाल वहींसे सुनाई दे रही थी। आनेवालोंके लिये दरवाजा एक दम खुला था और उनकी अगुवानीके लिये दहलीज़में एक दिया टिमटिमा रहा था।

मैं जहांका तहां खड़ा ही रह गया। न जाने क्यों पैर एकाएक सौ-सौ मनके हो गये। भीतर जानेके लिये न उठे। तालू सूख गया। मुंह पर हवाईयाँ उड़ने लगीं। पुकारना चाहा बोल न सका। खखारनेके लिये मुंह खोला आवाज़ न निकली। या ईश्वर यह मुझे क्या हो गया? अब किस तरह भीतर जाऊं और वहां जाकर क्या कहूं, कुछ समझमें नहीं आया। श्रीमतीजीसे मिलनेके लिये तो तमीज सीखने वेश्यासे चला, मगर वेश्यासे मिलनेकी तरकीब जानने अब कहां जाऊं? क्योंकि यहां आकर जाना कि, इसके लिये भी कोई उस्ताद चाहिये। बिना सबक़ पढ़े यहां भी अनाड़ियोंकी मिट्टी पलीद है। मैं इसी अड़चनमें उलझा बौखलाया हुआ ऊपरकी तरफ़ मुंह बाए ताक रहा था कि इतनेमें कोठे परसे कुछ छपाकसे पड़ा। O! My God

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सर मुंड़ाते ही ओले पड़े ! धत तेरे की ! सारा चेहरा बिगड़ गया। ईश्वर जाने पानी था या पानकी पीक ! लाहौल विलाक़ूवत ! अगर जानता कि रण्डियोंके यहां आनेवालोंका ऐसा ही स्वागत होता है, तो पहले हीसे आख़ थू ! आख़ थू !! करता न आता ? तब बादको थू ! थू ! करनेकी क्यों जरूरत पड़ती ! ख़ैर ! अब सही ! इस स्वागत पर बड़े जोरोंके साथ आख थू !!!

(७)

"ज़हे किस्मत जो हुजूरने आज खबर तो ली। बन्दी न जाने कितने दिनोंसे दीदारकी मुश्ताक़ थी। आज अल्लाहने सुन लिया।......अरे छेदी मियां जरा पान तो मँगवाना।" ताड़वालीने सर नीचा किये डली काटते काटते बड़े नाज़ो-अन्दाज़से मुस्कुरा कर कहा।

छत पर बैठनेके लिये फर्शी इन्तजाम था। उसी पर मैं गुमसुम बैठा हुआ आंखे फाड़-फाड़कर चारो तरफ देख रहा था। किस तरह यहां तक पहुंचा मुझे खुद ही खबर नहीं। बस इतना जानता हूं, कि किसीने बाहर आकर मेरा हाथ पकड़ा था। उसके बाद मेरा दिमाग़ चकरा गया। प्राण ऊपरको ऊबने-डूबने लगे। सांस उल्टी चढ़ने लगी और आंखें एक दम बन्द हो गई थीं। अब भी हालत क़रीब क़रीब वही थी। सिर्फ आंखोंमें देखनेकी शक्ति लौट आई थी। मगर उसीके साथ बदनसे ताबड़तोड़ पसीना छूटने लगा था। रुमाल मुंह पोछनेमें पहले ही ख़राब हो चुका था। इसलिये बार-बार कोटके आस्तीनसे पेशानीका पसीना पोंछ रहा था।

बेगम फिर बोलीं—"अरी अम्मां ताक क्या रही हो ? ज़रा मेरा रेशमी रूमाल झटपट निकाल कर आपको दो।"

मैंने बौखला कर कहा—"नहीं, नहीं सब ठीक है।"

बुढ़ियाने शायद रूमालकी बात सुनी ही नहीं। इसलिये इधर उधर ताककर बोली—"अरे, आज इतना धूआं कहां हो रहा है ?"

मेरी सारी अक़्ल न जाने कहां चरने चली गई थी, कि मेरे समझ हीमें कुछ नहीं आता था कि यहां पर क्या कहूं क्या न कहूं। कैसी बात-चीत करूं और कैसा जवाब दूं। स्कूल और कालिजमें बड़ी मोटी-मोटी किताबें पढ़ चुका था। मगर अफ़सोस ! सारी पढ़ाई चौपट हो गई, जो मैंने सब पढ़ कर भी वेश्याओंसे मिलने जुलनेका शास्त्र नहीं पढ़ा। वरना यहां पर मेरी भला यह हालत होती कि दो शब्द भी ठीक ठीक कहनेके लिये तरसता ?

इतनेमें बुढ़ियाने पान चबला चबला कर बड़बड़ाना शुरू कर दिया—"हां तो सरकार हुक्म हो तो साज़िन्दे भी बुलवा लिये जायं। कुछ गाना वाना हो। अल्लाह सलामत रखे हुजूरको इस छोकड़ीने गला पाया है, कि क़ुर्बान जाऊं पत्थरका कलेजा भी पानी पानी हो जाता है। पारसाल ही तो यह एक शादीमें दिल्ली गई थी। वहांके नवाब साहब अपने महलमें लेटे हुए थे। इसकी अलाप जो उनके कानोंमें पड़ी, बस बिस्तरे पर मछलीकी तरह तड़प उठे। और वहांसे नंगे सिर और नंगे पांव भागते हुए आए। क़सम खुदा की। बेअख्तियार आकर इसके क़दमों पर गिर पड़े। और रो-रोकर कहने लगे कि मुझसे निकाह पढ़ा लो। मगर

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS
Jangamwadi Math, VARANASI, Acc. No. ....

इसने नहीं मंजूर किया। चलते वक्त बेचारेने दो हज़ार रुपये नक़द और शाही खजानेका नौलखा हार भी इसे दिया। और क्या ? मैनेजर साहब बार-बार पैग़ाम भेजते हैं। पानसौ रुपये माहवार देनेको तैयार हैं। सूबेदार साहब तो रोज़ ही आकर नाक रगड़ते हैं। मगर यह किसीकी बात सुनती ही नहीं। हुजूरको अल्लाह सलामत रखे कि न जाने हुजूरने कौन-सा जादू पढ़ दिया है, कि बरसोंसे हुजूर हीके ख्यालमें घुली जा रही है। देखिये कैसी दुबली हो गई है। कई दफ़े तो हुजूरको बुलानेके लिये मुझसे कह भी चुकी। यह इसीके इश्क़की कशिश है कि हुजूरने आज क़दमरञ्जा फ़रमाया। अल्लाह जानता है........"

बेटी साहबा पहिले मुस्कुराईं फिर शर्माईं उसके बाद तिनक कर बोलीं—"क्यों अस्मां न चुप रहोगी ? क्या मैं उठके चली ही जाऊं ?......आग लगे ऐसे पान्दानमें, न पान न इलायची न जाफरान।" झनसे पान्दान खिसका कर मुंह फेरके बैठीं और झुंझला-हटकी खासी तस्वीर बन गईं।

बुढ़िया लपक कर उसकी बलाएं लेती हुई फिर अपनी जबानका चरखा चलाने लगी—"ऐ ! है ! सदके जाऊं बेटी ! कुर्बान जाऊं ख़फ़ा न हो। सब्र करो। हुजूरको अल्लाह सलामत रखे, पान इलायची क्या चीज़ है अशर्फियोंके लुकमे खाओगी। आय ! हाय ! पान बिना कैसा मुंह सूख गया है। झाडू मारूँ उस निगोड़े सुबेदार को। मुआ आकर सारा पान्दान ही साफ कर गया। ऐसे मुफ्तखोरों पर अल्लाहकी मार ! हरामी आ आकर ढोलीका ढोली पान चबा जाते हैं और तुम ताकती रह जाती हो। इसीसे तो कहती हूं बेटी सबके साथ मुरव्वत न किया करो। भले बुरेको पहचाना करो। जो बेचारा भलामानुस होता है वह आते ही पानके लिये रुपया खनसे फेकता है।"

मैं एकही रुपया घरसे लेकर चला था। वह भी बुढ़ियाने पान पत्तेके लिये मुझसे ऐंठ ही लिया। कैसे न देता ? जिसने मेरे लिये नवाब साहब तकका ख्याल नहीं किया। मैनेजर साहब और सुबेदार साहब ऐसे भारी भारी आदमियोंकी बातें नहीं सुनी उसका पान बिना कुम्हलाया हुआ चेहरा कैसे देख सकता था ?

मगर ग़ज़ब हो गया। रुपया निकल जानेसे अब और हौलदिली समा गई। पहिले तो बात न कर सकनेकी घबड़ाहट थी। और अब तो उलझन इस फिक्रसे और बढ़ गई कि पानकी तरह फिर न किसी चीज़की जरूरत पड़ जाए तब दूंगा क्या ? उस वक्त कैसी किरकिरी होगी, खास कर उसके सामने जो बेचारी मेरी खाली इज़्ज़त ही नहीं करती बल्कि मुझे इतना प्यार करती है कि दुबली भी हो गई है। यह ज़िल्लत मुझे किसी तरहसे भी गवारा नहीं हो सकती थी। इसलिये पतिगीरीकी शिक्षा का ख्याल तो गया चुल्हेमें यहां अपनी आबरू बचाने की पड़ गई। उस पर दिलकी घबड़ाहट और नोचे खा रही थी। यही जी चाहता था कि किसी तरह सर पर पांव रखके यहांसे जल्दी भागो।"

बुढ़ियाको अब धूंआ बहुत लगने लगा। वह अपना पंखा लेकर नीचे खिसक गई। उसके जाने से बेगमकी बेबाकी कुछ खुली और वह ज़रा सरक कर मेरे पास आ गईं। सरकनेमें उनके सरसे ओढ़नी भी सरकी और उनकी नागिन सी चोटी पीठ पर लहरा उठी। उन्होंने अपनी टेढ़ी गर्दन

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

करके मुझे कनखियोंसे देखा और फिर जरा मुस्कुरा कर शर्माती हुई धीरेसे बोलीं—"अम्मां अब न आयेंगी।"

मैंने भी कुछ कहनेके लिये मुंह खोला। मगर उसमेंसे सिर्फ इतनी आवाज़ निकली—"हाँ।"

"उफ़! बड़ी गर्मी है।" यह कह कर वह अपना नन्हा पंखा लेकर झलने लगीं। उसके बाद एक हाथसे मेरा हाथ थामकर अपनी तरफ़ ज़रा हल्केसे खींचती हुई बोलीं—"ज़रा इतमीनानसे नज़दीक आकर बैठिये हवा तो लगे। यह निगोड़ा धूआं तो और नाकमें दम किये है। कौन मुई अपने घर ऐसी गीली लकड़ी जलाए है।"

मगर मुझे इतमीनान कहां था? मेरा तो दम घुट रहा था। ईश्वर जाने धूंएकी वजहसे या अपनी घबड़ाहटके मारे या रुपयेकी सारी गर्मी यकायक ठंढी पड़ जानेसे या वेश्याओंसे हंसने बोलनेका ढंग न जाने हुए होनेसे कि मैं अपनी जगह पर उल्लूकी तरह गुमसुम बैठा ही रहा। वहांसे तिल भर न टसका। इतनेमें मालूम हुआ कि जिस तरह डगनमें छोटी मछली हिलगती है उसी तरहसे कोई कम्बख्त किसी छुछूंदर या मेडकको तागेमें बान्ध कर एक डण्डेसे लटकाए मेरी नाकके पास हिला रहा है। मैं बाप! बाप! करके चिल्ला उठा। और चौंक कर पीछा उचका तो मेरी खोपड़ी ओगलदान पर तड़ाकसे बोली और मेरी पीठ नोचे ही नीचे तरबतर हो गई।

बादको पता चला कि वह कोई काटू जानवर न था। बल्कि पत्तेमें लपेटा हुआ पान था जिसको छेदी मियां तम्बोलीके यहाँसे मेरा हिन्दूधर्म बचाने के लिये इस तरह लटकाए हुए लाकर मुझे दे रहे थे। धत तेरे की! मुझे क्या मालूम था कि रंडियोंके यहां हिन्दुओंको पान दिया जाता है।

बेगम और छेदी मियां कालीन पर लोट रहे थे हंसीके मारे और मैं ज़मीन पर लोट रहा था इसलिये कि मेरी पीठके दाग़ दिखाई न पड़ें। इसके सिवाय उन्हें छिपाता तो किस तरह छिपाता? कोई बड़ा अक्लमन्द हो तो बतावे न? अभी यह लोट पोट जारी ही थी कि नीचे कोहराम मचा कि "भागो भागो घरमें आग लगी है।"

(८)

सब तो मकानके बाहर हो गये और मैं हर तरफ दौड़-दौड़कर टटोलता ही रहा मगर बाहर निकलनेका दरवाज़ा न मिला। उसपर अब धूएंके मारे मैं ऐसा अन्धा हो रहा था कि आंख ही नहीं काम देती थी। जिधर भागता था, उसी तरफ़ टकरा कर रह जाता था। एक दफा इसी तरह अन्धेके हाथ बटेर लग गई थी और मैं दरवाजेके पास बिल्कुल पहुंच भी गया था। मगर हाय! कब? जब बाहर आदमियोंका जमौड़ा जुट चुका था। उनकी आवाज़ सुनते ही मैं फिर भाग कर आंगनमें हो रहा। क्योंकि इतने आदमियोंके सामने कोई कैसे किसी वेश्याके घरसे निकल सकता था! चाहे वह बेचारी कितनी अच्छी और भलेमानुस क्यों न होती और निकलनेवाला उसके पास मेरी तरह शिक्षा ही लेने क्यों न गया होता? मगर देखने वाले तो यह नहीं समझते। आते वक्त जब ऊपरकी सांस ऊपर और नीचेकी नीचे अटक गई थी, वह भी सुनसान अन्धियालीमें जब दूसरा हाथ पकड़ कर लाया था तब। तो वैसा ही सन्नाटेमें

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जब यहांसे कोई मुझे ढकेल कर निकालता तभी तो निकलता। उफ़! ओ! अब मालूम हुआ कि वेश्याओंसे खाली हँसना, बोलना, मिलना, जुलना ही नहीं मुशकिल है बल्कि इनके यहां आना जाना तक भी लोहेका चना हैं। इसके आगे जहन्नुममें भी जाकर निकल आना कहीं आसान है। बाप रे बाप! इसके रास्तेमें तो शर्म, डर, झिझक, घबड़ाहट, बौखलाहट, सिटपिटाहट और लड़खड़ाहट वगैरह की ऐसी ऐसी बेढब और गहरी खाइयां हैं, कि मैं क्या बड़े बड़े हिम्मतवरोंकी नानी मर जाती है। ख्याल आते ही मेरे बदनसे तरातर पसीना अब भी छूटने लगता है। श्रीमतीजीके सामने तो शायद तमीज और हिचकिचाहटकी छोटी-छोटी टट्टियां ही फांदनी थीं जिनको बेलाग उचक जानेके लिये यहां शिक्षा लेने आया था। मगर अफसोस! उलटे लेनेके देने पड़ गये। क्योंकि यह मैं नहीं जानता था, कि यहां तो बाबा हिमालय पहाड़ लांघना पड़ता है। कैसी बेवकूफ़ी हुई कि फरी-गदका चलानेका अभ्यास तलवारसे करने चला था और उसीमें हाय! जूझ मरा। बलासे श्रीमतीजी मुझे अनाड़ी बदतमीज़ या गंवार समझतीं। बलासे मेरी पतिगीरीकी धाक उनपर न जमती और मैं हमेशा ही उनके आगे दुम हिलाया करता। फिर भी जान तो सलामत रहती। तब इस तरह आज कबाबकी तरह तो न भूना जाता।

आंगन खूब लम्बा चौड़ा था। और सामने ही पानीसे भरे दो घड़े और बालटी रखी थी। मैंने चट इनको अपने ऊपर उड़ेल कर अपने और अपने कपड़ोंको खूब तर-बतर कर लिया। इसीसे मैं अब तक एकदम जल-भुनकर राख नहीं हो सका, मगर इतनी देरमें आगने मकानको चारो ओरसे पकड़ लिया। और उसकी गर्मी अब मेरे कपड़ोंकी तरावट नहीं बरदाश्त कर सकी। किसी तरफ़ भी भाग कर चैन नहीं मिलता था। इस छटपटाहटमें इस वक्त दरवाजेसे सभोंके सामने भी निकल जाना ग़नीमत समझता। मगर हाय! वह भी तो धांय धांय करके जल रहा था। ऊपर आगकी लपट तो कम हो चुकी थी। क्योंकि छतकी वजहसे आंच थोड़ी ही बहुत निकल पाती थी। मगर नीचे आगकी धमक तन्दूरके तावकी तरह सारे आंगनमें छा गई और उसीमें मैं डबल रोटीकी तरह पकने लगा।

आखिर मरता क्या न करता? जूता खोलकर फेंक दिया। अपने पतलून परकी किरमिचकी पेटी खोलकर निकाली। उसमें बकलस लगाकर पेटीके गोल फन्देको पैरोंमें डाला और पासीकी तरह मैं चढ़ने लगा। गो कि मैं ताड़पर कभी चढ़ा न था। मगर जब जानोंपर आ बनती है तो आदमी अपने प्राण बचानेकी खातिर सब कुछ कर सकता है। इसलिये मैं बन्दरकी तरह सर-सर ऊपर चढ़ता गया। यहां तक कि मैं उतनी ऊंचाई पर पहुंच गया जहां आंचकी लपटके साथ कुछ ठण्ढी हवा भी मिलने लगी। तब जाकर दममें दम आया और मैंने दम लिया। वैसे ही नीचे इतने जोरोंसे शोर हुआ कि सारा आसमान गूंज उठा।

मैंने नीचे देखा कि मकानके बाहर सौ-पचास आदमी जमा हैं। और मेरी तरफ उङ्गली उठा उठा कर चिल्ला रहे हैं। सब एक ज़बानसे यही कह रहे थे कि—"अरे! अरे! वह देखो! वह देखो!"

इस चिल्लाहट पर सारे मुहल्ले वाले दौड़े। चारो तरफ आदमियोंका तांता लग गया और आनन-

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

फानन तमाम शहर वहीं फट पड़ा। आस-पासके कोठोंपर भी आदमी औरत बच्चे ठसाठस भर गये। सब तरफसे मुझपर बिजलीके मशाल (Torch) की रोशनी फेंकी जा रही थी। हालां कि आगमें अभी योंही काफी रोशनी थी। यकायक नीचेके झुण्डसे एक गूञ्जती हुई बड़े जोरोंकी आवाज उठी कि—"अरे! यह तो सार लतखोरी ललवा है। यह सरौका देखो रण्डीवाजी करे गये रहा। भल भवा।"

लाहौल विलाकूवत! यह बेहूदापन बिजलीकी तरह सारे शहरमें फैल गया। न मेरे बापका रखा हुआ मेरा हिन्दुस्तानी नाम "बाबू श्यामलाल सकसेना", और न मेरा खुद रखा हुआ अपना विलायती नाम "मिस्टर सामुएल सैक्सन" बल्कि हर तरफ़ कम्बख्त एक जबानसे बदमाशोंका रखा हुआ मेरा वह मनहूस और पुराना नाम "लतखोरी ललवा" "लतखोरी ललवा" कहकर चिल्लाने लगे जिससे मैं चिढ़ता था। इस आफ़तमें यह मुसीबत? मैं वहीं दांत किटकिटाकर रह गया। इस ज़िल्लतसे मर जाना लाख गुना अच्छा था। उस पर लोगोंकी हंसी सुनकर जब अपने ऊपर गौर किया तब मैं और कट मरा। क्योंकि अब जाना कि मेरा पतलून बेलाग हो जानेसे खिसककर पैरोंके पास सिमट गया है और उसको हाय! हाय! मैं किसी तरह भी सम्भाल नहीं सकता था।

× × × ×

नीचे आकर सुना कि पिताजी मेरा बन्दूकसे निशाना बनानेवाले थे। क्यों न बनाते? ऐसा उम्दा मौका उन्हें शिकार खेलनेको और कहां मिलता? और यह भी सुना कि ताड़वाली रण्डी अपनी मांके साथ हाथ मटका मटका मुझे कोस रही थी कि—"आज इसी मूएकी वजहसे मेरा घर जला। या अल्लाह! यह मूएडीकटा वहींसे गिरकर जहन्नम चला जाए।" वाह! वाह! इसके इश्कने तो अच्छा रङ्ग दिखाया। क्यों न हो आखिर रण्डी हीका इश्क तो। तभी लोग कहते हैं कि आंच लगते ही इसकी कलई खुलती है।

इस बातको इन दोनों मां बेटीने मेरे नीचे उतरते ही मुझे सभोंके सामने जूतियोंसे तड़-तड़-तड़-तड़ पीटकर खूब समझा भी दिया, ताकि जन्म भर याद रहे। मगर अफसोस इसकी खबर मेरे घर पहुंचनेके पहिले ही श्रीमतीजीके पास पहुंच गई। यहीं तक नहीं बल्कि यह भी पता चला कि रतजग्गा करने वाली औरतोंके साथ तिमञ्जले पर चढ़ कर उन्होंने खुद अपनी आंखोंसे यहांका रत्ती रत्ती हाल देखा है। बस मैं कलेजा थाम कर रह गया। अब कौन-सा मुंह लेकर उनके सामने जानेकी हिम्मत करता? हाय! हाय! सब चौपटानाथ हो गया। डायरी भी तो अब मेरी कुछ मदद नहीं कर सकती थी। वह पहिले ही पतलूनकी जेबसे गिरकर जल चुकी थी। इसलिये मैं बाहर ही बाहर चुपकेसे स्टेशन भागा और अंगूठी बेचकर अपने होस्टेल पहुंचा। हालांकि अभी कालिज खुलनेमें बहुत दिन थे। मगर क्या करता? कहां जाकर मुंह छिपाता? कहां वह जिन्दगी भर मेरा मुंह देखना नहीं चाहती थीं और कहां अब मुझीको जिन्दगी भर उनसे मुंह चुरानेकी फिक्र हो गई। हाय रे तक़दीर! गवना होकर भी उनसे मुलाकात न हो!!!

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

क्या हम सज्ञान प्राणी हैं ?

(लेखक—श्री राधामोहन गोकुल जी)

मालूम होता है मौलाना हालीने यह बात हिन्दुओं पर ही ढालकर कही थी कि—

अब दिल हुआ होशसे
सर अक़्लसे खाली।
बाक़ी न रही बात वह
मज़मून सुझाने वाली।

क्योंकि हम देखते हैं, जब कोई किसीसे कहता है ; इस मौसिममें करेला न खाना चाहिये तो वह प्रश्न कर उठता है, कि 'यह कहां लिखा है ?' जब कोई कहता है कि बाल-विधवाओंके विवाहका विधान मनुस्मृतिमें है, तो लोग कान खड़े करके पूछते हैं, 'क्या सचमुच मनु बाबाने ऐसा लिखा है ?' यहां तक कि जन्म भरमें प्रभातसे लेकर सांयकाल तक हममेंसे प्रत्येक आदमी जो कुछ काम करता है, सबका समर्थन किसी न किसी बाबा आदमके समयकी पुरानी पुस्तकमें खोजना चाहता है ! हमारे दिलमें कुछ नहीं, दिमाग़में कुछ नहीं, सारी बुद्धि और विद्या पुस्तकोंमें बन्द है। जैसे ज़रूरतके समय हम सन्दूकमेंसे रखी हुई वस्तु खोजके निकाल लेते हैं, और न मिलने पर पछताते हैं, उसी प्रकार आवश्यकता पड़नेपर हम किसी कामको करने या न करनेके लिए पुस्तकोंमें प्रमाण ढूंढने लगते हैं। यदि कहीं कोई प्रमाण मिल गया तो फिर उसके आगे संसारके सारे विद्वान मूर्ख, सारी वैज्ञानिक प्रयोग-शालाएं रद्दी, सारा तर्कशास्त्र बेहूदगीका भण्डार नज़र आने लगता है। क्या मजाल हम आंखोंसे काम लें। हमारी आखें भूल करती ही रहती हैं, हमारी ज्ञानेन्द्रियां क्या भूलोंसे कभी बच सकती हैं, लेकिन दक़यानूसी पोथीमें भूल नहीं हो सकती, क्योंकि उसपर अल्लाह मियांकी छाप है, ईश्वरकी मुहर है, और प्राचीन कालके लोगोंकी गवाही है। यह वे गवाह और लेखक हैं, जिनके नाम माता प्रकृति और बाबा पुरुषने दुनिया भरकी विद्वत्ताका विक्रय-पत्र लिख दिया है।

यदि कहीं पोथीमें हमारी वाञ्छित बातके उत्तर का पता न लगा तो हम ऐसे बेचैन होते हैं ; जैसे मछली पानीसे अलग होकर। हमारी नाव पुलिनहीन महासागरकी तरल तरंगों पर ऐसी नाचने लगती है, जैसे कोई अरब हंसानेवाली घास (भंग) का गहरा प्याला पीकर नाचता हो। हमें अपने कर्तव्याकर्तव्य-विचारके लिये गृह सूत्रों, धर्म्म सूत्रों और स्मृतियोंका मत पाये बिना चैन नहीं पड़ता। जैसे कोई कट्टर शीया मुसलमान बिना इस्तख़ारेकी इजाज़तके किसी कामको नहीं करता, वैसे ही हमारे पोथीदास, रूढ़िचन्द, प्राचीनानन्द और सनातन सिंह भी बिना पोथीके कुछ नहीं कर सकते, घबरा कर आंख बन्द कर लेते हैं, सिर झुका कर बैठ जाते हैं—'किश्ती खुदा पै छोड़ दो, लंगड़को तोड़ कर !'

सज्ञान और तर्कशील, आंख खोल कर चलनेवाला विदेशी जब हमें देखता है, तो समझ लेता है कि यह लोग अज्ञानी दूसरेकी लकड़ी हांके जानेवाले

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पशु हैं। इनके लिये प्रकृतिका निरीक्षण तो असम्भव ही है, यह अपनी आँखोंके सामनेकी घटनाओंको भी यथावत् देख और समझ नहीं सकते। यह गणित सिद्ध बातों तकको समझनेसे इनकार कर देते हैं। इसी कारण तो ये विदेशी हमें गुलामीके पाशमें जल्दी फांस लेते हैं।

आज जब कि संसार विज्ञानके प्रकाशसे प्रकाशित हो रहा है, तो भी हममें वही अन्धकार छाया हुआ है। हम इतना भी नहीं समझ सकते; कि जिन पुस्तकों पर हम आँख बन्द करके प्राण देते हैं, वे भी मनुष्योंकी ही कृतियां हैं, उन्हें उसी दशामें ठीक समझना चाहिये, जब उनकी बातोंकी विज्ञान पुष्टि करता हो और तर्क साक्षी देता हो। उनका अनुकरण हमारे लिए तभी लाभ दायक हो सकता है जब वे हमारी वर्तमान परिस्थितिके अनुकूल हों। हम उन्हें केवल ऐतिहासिक जानकारीके लिए भी तभी ठीक मानकर अपना सकते हैं, जब वे ऐतिहासिक प्रमाणोंकी कसौटी पर ठीक उतरें।

हमारे पूर्व पुरुष पत्थर पर लोहेकी चोट लगाकर या लकड़ीके दो खण्डोंको परस्पर रगड़ कर आग निकालते थे। यह उस समयके लिए बड़ा भारी वैज्ञानिक अविष्कार था, परन्तु आज हम धेलेकी दियासलाईसे पचासों बार आग बना सकते हैं, इसलिए हमारा ज्ञान पूर्वजोंसे कहीं अधिक बढ़ाचढ़ा है। इसलिये हमें दियासलाई छोड़कर चकमकसे आग निकालना आज हास्यास्पद बनानेवाली बात होगी। विधवाओंको जबदस्ती पकड़ कर मृत पतियोंके साथ जला देना कभी बहादुरीकी बात समझी जाती होगी, परन्तु आज यह काम घृणित और वर्बरताका समझा जाता है। छोटी छोटी दुधमुंही लड़कियोंको मार डालना कभी बहादुरी रही होगी, राजपूती शान रही होगी, परन्तु आज तो यह काम कायरतापूर्ण और अमानुषिक माना जाता है।

आज हमारे सामने जब प्राचीन पोथियोंके आदेश और उपदेश आते हैं, तो हम सबसे पहले यह देखते हैं कि यह काम मनुष्योंके करने योग्य है या नहीं। अगर है तो वर्तमान युगमें हमारे लिये यह हितकर है या नहीं। आज जब हम तारसे एक क्षणमें सहस्रों कोस खबर भेज सकते हैं, हमें प्राचीन कालका नगाड़े सहित कोस भरमें आठ मीनारोंकी स्थापना करना मूर्खता जान पड़ता है। पिछले समयमें एक एक पुरुष मनमाने १०-२०-५० व्याह कर लेते थे, राजाओं और नवाबोंके घर रानियों या बेगमोंसे भरे रहते थे, लेकिन आज ऐसा करने वाला पागलखानेके ही उपयुक्त सज्जन समझा जाता है।

आज हम यह माननेको तैयार नहीं हो सकते कि मूसाकी लड़कीने फरयूनके सांपोंको निगल डाला और किसी टापूके पहाड़ परसे सूर्य निकलता है और दलदलमें छिप जाता है। यह बात आज पागलोंका प्रलाप है, कि पृथ्वी गोल चाक-सी है, उसकी चारो ओर गोल पानीकी परिखा है और उसके परे फिर पृथ्वीकी रेखा है इस तरह सात रेखाएं जलकी और सात थलकी हैं।

वीर लोग लड़ाईमें पहाड़ और पेड़ उखाड़-उखाड़कर एक दूसरेके ऊपर फेंक कर मारते थे, इसे हमारा प्राकृत ज्ञान, प्रत्यक्ष मिथ्या कह कर रद्दीकी टोकरीमें फेंक देता है। आज ऐतिहासिक सत्यकी खोजमें बालकी खाल निकाली जाती है। जब हम किसी ऐतिहासिक बातको सुनते हैं, तो हमारे हृदयमें इस प्रकारके प्रश्न उत्पन्न होते हैं, यथा—

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

१—लेखक कौन है, उसकी विश्वास-पात्रता कहां तक है, उसने क्या लिखा और इस लेखमें उसका कोई स्वार्थ तो न था ?

२—जो लेखकने लिखा है, वह अप्राकृत और अनहोनी तो नहीं है ?

३—लेखकके पास क्या ऐसी योग्यता थी, कि वह इसकी सचाईका निर्णय करता और उसके पास सत्यासत्यके खोजके साधन क्या थे ?

४—क्यों हमारी आजकी खोज उसे सत्य सिद्ध करती है ? यदि नहीं तो क्यों इस युगमें 'काता और चल गुदड़ीमें" का सिद्धान्त काम नहीं देता ? आज न जादूके जोरसे कोई आकाशमें सूर्य बना कर दिखानेका ढकोसला कर सकता है, न डायन राह चलतोंका कलेजा खा सकती है। पत्थरों का रोटी खाना, दूध पीना, जङ्गलियोंकी मूर्खतापूर्ण सरल विश्वासकी कहानी निकम्मा समय काटनेमें परियोंकी कथाकी तरह मनोरञ्जक हो सकती है, लेकिन 'जीयस' की खोपड़ी फाड़ने पर 'मिनर्वा' नामकी सुन्दरीका निकलना हम तीन कालमें भी सत्य माननेको तय्यार नहीं।

किसी समय स्वार्थी पुरुषोंने स्त्रियोंको बाढ़पर चढ़ाकर यह सिखलाया था कि कामी, क्रोधी, लोभी, लम्पट, कोढ़ी, दरिद्र भी पति क्यों न हो, उसकी सेवा ही करनी चाहिये। इसी प्रकार और भी अनेक चालें स्त्रियोंके साथ चली गईं। परन्तु आज स्त्रियां पुरुषोंकी बदमाशी और स्वार्थपरताको जान चुकी हैं, लोहेके हाथोंसे अपना अधिकार वापस लेनेका प्रयत्न आरम्भ कर चुकी हैं और जल्द स्वतन्त्र होना चाहती हैं। वे समझने लगी हैं, कि पुरुष उन्हें भोगकी सामग्री और कठपुतली समझते हैं। वे अपनी मातृशक्तिका स्थान लेनेको व्यग्र हो उठी हैं।

स्त्रियोंको जब पीहरमें या ससुरालमें किसी प्रकार की सम्पत्ति पानेका अधिकार नहीं है, तब इनका साफ यह काम हो जाता है कि यह खूब रुपया-पैसा खर्च कर डालें, चोरों, डाकुओं, उठाईगीरोंसे सम्पत्तिकी रक्षाके लिये तनिक भी झगड़ा न करें। जिस चीजमें हमारा हक नहीं, जो चीज हमारी हो ही नहीं सकती, उसके लिये हम जान क्यों दें; हम शर्म क्यों करें ? यह बात सदा नहीं चल सकती कि 'माल मारे धुनिया और जूझे पठान।' पातिव्रतके मिथ्या उपदेशोंसे स्त्रियां घबरा गई हैं, वे पत्नीव्रतका आदर्श देखकर उसपर पातिव्रतकी परिभाषा बनाना पसन्द करती हैं।

इस जमानेमें लाटोंका प्रथम रात्रिका अधिकार स्त्रियां स्वीकार नहीं कर सकतीं और न गुसाईं जी, महन्तजी या अन्य पण्डे-पुजारी देवी-देवताओंको तन, मन, धन समर्पण करना सभ्यता युक्त और समीचीन समझती हैं।

हमारा दिल इस बातको माननेके लिये तैय्यार नहीं कि हरामखोर भिखमंगे सबसे उच्च हैं, डाकू लुटेरे माननीय, लेकिन दूकानदारी करनेवाले नीच और मेहनती अति नीच तथा शूद्र हैं। यह हमारी सारी की सारी सामाजिक व्यवस्था छल, कपट, चालबाजी स्वार्थ परायणता और छीन खसोट पर आधार रखती है, इसलिए हमें एक बार समाजको उलटकर रखना पड़ेगा, तब आसानीके साथ नीचेसे ऊपर तक सुधार हो सकेगा। जिस तरह सहस्रों वर्षके जीर्ण-शीर्ण घरको एक बार खोदकर फेंक देनेसे ही नई

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नींव भरकर अच्छा मकान बना सकता है, उसी तरह हमें वर्तमान समाजको एकदम आपाद-शीश बदलना पड़ेगा।

यदि हिन्दू दुनियामें रहना चाहते हैं, और हिन्दुओंकी अच्छी बातोंको जीवित रखना चाहते हैं, तो उन्हें अपनी सामाजिक नीतिको सचाई, ईमानदारी, दृढ़ता और त्यागके साथ या आदान-प्रदानके आधार पर बदलना पड़ेगा। किसी पोथी या पण्डे पुजारीके वाक्याको प्रमाण न मानकर अपने विवेक और बुद्धिसे काम लेना होगा।

हमें नये पुरानेका भेद भूलकर सत्य और असत्य के भेदको प्रधानता देनी चाहिये। नई हो या पुरानी, सच्ची बात या पुस्तकको शिरोधार्य करो, झूठको सरे बाजार कील ठोंककर छोड़ दो, जिससे लोग खरे खोटेको समझ सकें। लोगोंको बता दो कि 'सत्यम् जयति नानृतम्' केवल तोतेकी तरह पढ़नेकी चीज़ नहीं है, बल्कि कर दिखलानेके लिये है।

हिन्दी वन्दना

(रचयिता—"अरबिन्द")

जय-जय जय-जय जयति-जयति जननी जय हिन्दी !
जय जगके शिरमौर भव्य भाषाकी बिन्दी !!
जय वैदिक-भाषा-सुचिन्ह, संस्कृत की पुत्री !
जय मागधि वर रूप-भिन्न, मंगल शुभ कर्त्री !!

जय तीस कोटि सन्तान की
भाषा परम उजागरी !
नख-सिख-सज्जित मुकुटधर
जय नागरि, गुण-आगरी !!

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ग्रामोफ़ोन

(लेखक—श्री सुमंगल प्रकाश)

(१)

गांवमें बाजेका आना शहरमें बाजीगरके आनेसे किसी प्रकार कम नहीं। बाजीगरके आनेसे नागरिक बालक समुदायमें जिस प्रकार भारी हलचल, रेल-पेल और धक्कम-धक्केका बाज़ार गर्म होता है—बाजेके आनेसे ग्राम्य बालकोंके गुट्टमें भी उसी प्रकार गुल खिलते हैं।

शिवपुरके पटवारीके सुपुत्र मोहन और मुरारी की धाक गांवके बालकोंमें वैसे ही अधिक थी पर आज तो उनकी निराली ही शान है। जिधर निकल पड़ते हैं, उधर सहवर्गियोंमें आतंक-सा छा जाता है।

मोहन और मुरारी अकड़ते हुए गांवके इस छोर से उस छोर तक दौरा कर आये। गांवभरके बालकों में सनसनी फैल गई। बड़े लाटकी सवारीसे राजे-महाराजोंमें भी इतना आतंक न फैलता होगा।

मुरारी छोटा और मोहन बड़ा था। मुरारी टके वसूल करता था और मोहन सलामी। बिना छोटे दरबारमें गये बड़ेमें गुज़र न थी। बिना नज़र दिये बड़ेसे बड़े और पुरानेसे पुराने मित्र भी हाथ मलते रह जाते। यदि कभी कोई आफ़तका मारा ढीठ बालक छोटे दरबारसे परवानगी पाए बिना ही अपनी भारी मित्रताका दम भरता हुआ बड़े सरकारके पास पहुंचनेकी कोशिश करता तो उनके गुप्त संकेत पर करदाता राजाओंकी अनुगत सेना उस 'बड़े मित्र' पर टूट पड़ती। किन्तु तब भी अगर वह कर देनेको राज़ी न होता तो उसके सामने सहस्र मुखोंसे शाही फ़रमान सुना दिया जाता—"तुम्हें बाजा नहीं सुनने दिया जायगा"। यह कठोर दण्डाज्ञा सुनकर अन्यान्य विरोधी राजाओंके हौसले पस्त हो जाते और एक एक करके सभी छोटे दरबारमें रीत-रस्म अदा करके बड़े सरकारमें सलामी पहुंचाने लगते और मेलेके अवसर पर मातासे मिले हुए पैसोंके इस सदुव्यवहार पर मन ही मन प्रसन्न होते। इसी प्रकार सारे गांवमें अपनी विजय-दुंदुभी बजाते हुए मोहन और मुरारी घर लौट आए। सारा द्रव्य कोषमें इकट्ठा कर दिया गया।

मोहन और मुरारीके मामा अपनी सेकण्ड ईयरकी परीक्षा देकर छुट्टियोंमें बहिनके पास कुछ दिन ग्राम्य-जीवनके मज़े लेनेके लिये कल ही यहां आए हैं। अपना ग्रामोंफ़ोन भी लेते आए हैं।

विजय-यात्रासे लौटकर मोहनने मुरारीको मामाके पास सन्ध्याको बाजा बजानेकी प्रार्थना करनेके लिये भेजा। परन्तु मोहन इस कामके लिये अपनेको अनुपयुक्त समझता था। स्वयं जानेसे उसे निराश होनेकी ही अधिक सम्भवना थी।

(२)

सन्ध्या हो चुकी है। किसान अपने कन्धों पर हल रखे हुए बैलोंको हांकते चले आ रहे हैं।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

गांव भरमें एक विचित्र कलरव सुनाई पड़ रहा है। पटवारी साहबकी चौपालमें आबालवृद्धवनिताओंकी भीड़ पहलेसे ही डटी हुई है। ग्रामोफ़ोन बाजा इस गांवमें पहले ही पहल आया है।

थोड़ी देरमें बाजा बजना शुरू हो गया। सारा कोलाहल रुक गया। सर्वत्र शान्तिका राज्य स्थापित हो गया। ग्राम्य प्रकृति मौन होकर वह अश्रुतपूर्व निनाद सुनने लगी।

किन्तु ऐसे समय भी मोहन और मुरारीको अवकाश नहीं—एक जगह बैठ कर बाजा सुननेकी फ़ुरसत नहीं। हाथोंमें बाँसकी खपच्ची लिये वे दोनों चौपालसे नीचे टहल रहे हैं। बड़े बूढ़ों या जवानोंसे तो बोलनेकी हिम्मत नहीं पड़ती, परन्तु बालक-समुदाय पर बड़ी धाक जमी है। जो बालक सुबह टैक्स दे चुके हैं उनको वे आदरके साथ ले जाकर एक ओर बिठा देते हैं। आगन्तुक बालकको अपने स्वागत किये जानेका अपूर्व अवसर हाथ आता और मोहन मुरारीको घरके मालिक बननेका असामान्य सौभाग्य। जो ढीठ और चतुर बालक कर न देने पर भी अपने माता-पिता या अन्य किसी बड़े बूढ़ेके साथ पहिले ही आकर बैठ गए थे, उनपर ये शुक्र शनीचर दाँत पीसकर ही रह जाते, पर मनमें दृढ़ संकल्प कर लेते कि "अच्छा! कभी तो मिलोगे अकेले। देख लेंगे।" किन्तु जिन बालकोंने न तो टैक्स ही दिया था और न इस समय किसीका सहारा ही लिया था उनकी शामत आ गई। उन्हें चौपालके नीचेसे ही उन दोनों दानवोंकी भर्त्सनाओं और ताड़नाओंका शिकार बनकर उलटे पैर वापस होना पड़ता।

पटवारी साहबके घरके पास ही एक कच्चा पर दोतल्ला मकान था, जहां एक आठ वर्षका बालक खोंचेवालेसे लेकर मिठाई खा रहा था। उसने ज्योंही ग्रामोफ़ोनकी आवाज़ सुनी जल्दी जल्दी दोनेको खतम कर चौपालकी ओर दौड़ा। पर सीढ़ी पर पैर रखते ही मोहनने उसे पकड़ कर खींच लिया। बालक चन्दरको बड़ा गुस्सा आया। पर अकेला और छोटा होनेके कारण क्रोध दबा कर बोला—"हम बाजा सुनेंगे, हमें जाने दो।" मोहनने ताना मारते हुए कहा, "लाज नहीं लगती दूसरोंके घर बाजा सुननेमें। वैसे तो बड़ी बाबूपनकी पेंठ रहती है। अब कहां गई बापके अमीरीकी शान?" मुरारीने भी भाईके सुरमें सुर मिलाते हुए कहा—"बड़े बापके बेटे ह तो एक बाजा मँगा क्यों नहीं लेते।"

अपने पिताके लाड़ले बेटे चन्दरको ऐसे व्यंग्य वचनोंके सुननेका अभ्यास न था। तुरन्त ऐंठ कर बोला—"अच्छा देख लेना, अपना बाजा मँगवा लेते हैं कि नहीं।" और अकड़ कर घरकी ओर चल दिया।

चन्दरके पिता बाबू राधिकारमण इसी गांवके एक साधारण गृहस्थ थे। पिताने बड़े पुत्रको घरके धन्धेमें लगाकर छोटे राधिकारमणको पढ़ा लिखा कर बी० ए० पास करा दिया था। इसके अनन्तर जब पिताकी मृत्यु हो गई और बड़े भाईके रोज़गारमें एक साल टोटा आ गया तो जीविकाका कोई सहारा न रहा। इसलिये राधिकारमणने पछाँहके एक शहरमें नौकरी कर ली थी और अपने सौ रुपये मासिक वेतनमेंसे वे अपने खर्चके लिये कुछ रखकर बाक़ी बड़े भाईके पास भेज दिया करते थे।

बाबू राधिकारमणके इस समय एक ग्यारह वर्षकी कन्या थी और एक आठ वर्षका पुत्र। अधिक

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

लाड़-चावके कारण चन्द्र बड़ा ज़िद्दी हो गया था। पिता माता उसकी सभी माँगें आनन्दपूर्वक पूरी करते रहते थे। किन्तु दुर्भाग्यवश एक वर्ष हुआ बाबू राधिकारमणकी नौकरी छूट जानेसे उन्हें अपने गाँवमें बड़े भाईका आश्रय लेना पड़ा।

दालानमें पहुंचते ही चन्द्रने पुकारा—"बाबूजी! हमें एक ग्रामोफ़ोन लिवा दीजिये।"

बाबू राधिकारमण हाथमें एक तारका काग़ज़ लिये चिन्ताकी मुद्रा किये दालानमें टहल रहे थे। अस्थिर मस्तिष्क शरीरको भी चञ्चल कर देता है। आजकल वे नौकरीकी घोर चिन्तामें रहते थे। नौकरी छोड़ते समय उनके हाथमें केवल दो सौ रुपयेकी पूंजी थी। साठ रुपयेके लगभग गांव तक आते आते समाप्त हो गए। सौ रुपये इस सालमें खाने पीनेमें भाईकी सहायताको दे चुके थे। इस समय केवल ४०) रु० हाथमें थे। कितनी ही अर्ज़ियाँ नौकरीके लिये भेज चुके थे पर अब तक किसीका उत्तर नहीं आया था।

किन्तु ईश्वरकी कृपासे आज अभी कलकत्तेकी एक कम्पनीका तार आया था। मैनेजरीके लिये बाबू राधिकारमणने वहाँ जो अर्ज़ी भेजी थी उसीका जबाब था। प्रोप्राइटरने एक बार मुलाकातके लिये बुलाया था। कलकत्ते आने जानेके लिये ही तीस रुपयेका ख़र्च ज़रूरी था। किन्तु वे अपने शेष चालीस रुपयोंको इस प्रकार भाग्यदेवीकी क्रूर परीक्षामें नहीं डालना चाहते थे। उनकी इस समयकी घोर चिन्ताका यही कारण था। उन्होंने अपने विचारोंमें मग्न होनेके कारण चन्द्रकी बात नहीं सुनी। चन्द्रने फिर कहा—"बाबूजी! हमें एक ग्रामोफ़ोन मँगा दीजिये।"

बाबूजी चौंक पड़े, झुंझलाकर बोले—"क्या…?" चन्द्र फिर बोला—"हमें एक ग्रामोफ़ोन मँगा दीजिये।" बाबू राधिकारमण डपट कर बोले—"दूर हो पाजी! कान खाए जाता है।"

चन्द्र धीरे धीरे वहांसे लौट पड़ा और एक अंधेरी कोठरीमें घुसकर चुपचाप आंसू बहाने लगा। वह आज तक कभी इस प्रकार पितासे तिरस्कृत नहीं हुआ था। धीरे-धीरे उसके हृदयका आवेग बढ़ने लगा। सिसकियाँ आने लगीं। उसकी बहिन मालतीने आड़मेंसे चन्द्र और पिताकी बात-चीत सुनी थी। वह उसे ढूंढ़ते ढूंढ़ते वहां आ पहुंची और चन्द्रको गोदमें लेकर पुचकारने लगी। बड़ी कठिनतासे उसे शान्त करके कहा—"देखो भैया! आज कल बाबूजी के पास पैसा नहीं है। तुम तो जानते हो हो उनकी नौकरी छूट गई है। जब तुम उनसे कोई ऐसी चीज मांग बैठोगे जिसके लिये उनके पास काफ़ी दाम नहीं है तो उन्हें दुःख होगा कि नहीं? दुःख होने पर आदमी जरा-जरा-सी बात पर नाराज हो जाता है। इसलिये बताओ बाबूजी का क्या दोष है?" सिसकते सिसकते चन्द्र बोला—"तो क्या बाबूजीके पास अब रुपये नहीं रहे जीजी!" मालती—"नहीं भैया! जब नौकरी ही छूट गई तो रुपये कहांसे आयेंगे?" चन्द्र—"तो नौकरी क्यों नहीं कर लेते?" मालती—"नौकरी खोज तो रहे हैं अब मिलनेको ही है। ज्योंही मिल जायेगी तो देख लेना सबसे पहिले तुम्हें बाजा मंगा देंगे।" चन्द्र—"तब तो जीजी! जब तक बाबूजीकी नौकरी न लग जाये हमें कुछ नहीं माँगना चाहिये।" मालतीने चन्द्रका मुख चूम लिया और बोली—"हमारा भैया

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कैसा समझदार है हमें........." बीच हीमें चन्दर मगन होकर वहांसे भाग गया।

(३)

"कहिये बाबू साहब ! आपका ग्रामोफोन कब आयेगा ?"

"अभी हमें जरूरत नहीं है, जब चाहेंगे मगा लेंगे।" मोहन और मुरारी दोनों हँस पड़े। मोहन बोला—"सीधे यही क्यों नहीं कह देते कि बाबूजी अब एक एक पैसेको मुहताज हो रहे हैं। अब दिखाने की शान बाकी है।" चन्दरको आंखोंमें आंसू भर आये। कुछ देर चुप रहकर सहसा भर्राई हुई आवाज में बोल उठा—"अच्छा मोहन ! तुम्हारे बापके पास रुपये न रहें तो क्या तब भी तुम उनसे कोई चीज मांग बैठोगे ?" इतना कह कर उसने अपनी आँखें पोंछ लीं और चल दिया। चन्दरकी माँ वहांसे अपने मकानके ऊपरसे सारा दृश्य देख रही थी। बालककी भावभङ्गी देखकर माताकी छातीमें घूंसा-सा लगा। रातको पतिदेवसे सारा समाचार ज्योंका त्यों कह सुनाया। उनके भी हृदयमें बाण-सा बिंध गया। उनका छोटा-सा नासमझ बच्चा उनकी निर्धनताको इतना महसूस करता है और उन्हें दुखी देखकर उनपर तरस खाता है ! बाबू राधिकारमणके आत्म-सम्मानको बड़ा धक्का लगा। वे दूसरे ही दिन कलकत्ता जानेको तैयार बैठे थे। ग्रामोफोनके लिये रुपये कहांसे लायें ?

रात भर उन्हें नींद न आई। दूसरे दिन कलकत्ताके लिये प्रस्थान करते समय जब अन्दर बिदा लेने गये तब गृहिणीने मुस्कुराते हुए अपना सोनेका कण्ठहार धीरेसे उनके हाथमें रख दिया। पतिदेव भौंचकसे होकर पत्नीके मुखकी ओर प्रश्न सूचक दृष्टिसे ताकने लगे। गृहिणीने बहुत संक्षेपमें उत्तर दिया, "ग्रामोफोन !" पतिदेवका चेहरा सहसा चमक उठा पर धीरे-धीरे उनकी आंखोंमें आँसू छलक आए। उस कण्ठहारको जेबमें डालकर वह चुप-चाप बाहर चले गये।

(४)

बाबू राधिकारमणको कलकत्ता गये दो दिन हो गये। चन्दर बिछौने पर पड़ा हुआ करवटें बदल रहा है। निर्दय ज्वरकी बेचैनी छोटेसे बच्चेको भी कल नहीं देती। बार-बार क्षीण ध्वनिसे अपने सिरहाने बैठी हुई बहिनसे पूछ उठता है—"जीजी ! बाबूजी नहीं आये ?"

बालकोंको ज्वर आ जाना एक साधारण-सी बात है। जरा बदपरहेजी की, कि बुखार आया। किन्तु चन्दरका आजका यह ज्वर उसकी माता और बहिनको विशेष चिन्तित किये हुए था। इसमें उन्हें एक विशेषता दिखाई देती थी। यह साधारण ज्वर न था। ग्रामोफोनकी लगन थी। इसकी जड़ कोई बदपरहेजी न थी, बल्कि इसके मूलमें निर्धनताका बीज छिपा हुआ था। चन्दरकी माता और बहिन अपनी इस शक्ति-हीनता पर अत्यन्त चिन्तित थे।

जिस समय बाबू राधिकारमण कलकत्ताके लिये घरसे बिदा हुए थे। उस समय बालक चन्दर कहीं साथियोंके साथ खेल रहा था। पिता कुछ देर तो उसकी प्रतीक्षामें बैठे रहे पर उसका कहीं पता न देख रेलकी पाबन्दीका ख्याल कर घरसे चल दिये। किन्तु चलते समय चन्दरसे न मिलनेका दुःख उनके हृदय पर बादलकी भांति मँडराता रहा। चन्दर

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नन्दन कानन कहां है ?

अगर

जानना चाहते हैं

तो

सिर्फ १ शीशी

ओटो गुलबहार

की

फौरन मंगा कर देखें

मूल्य भी ज्यादा नहीं ।

छोटी शीशी सिर्फ ।।) मझोली १) बड़ी २) डाक महसूल अलग

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

झूलन ।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भी जब घर आया और पिताका उससे बिना मिले कलकत्ते जानेका समाचार सुना तो उसकी आंखोंसे आंसुओंकी झड़ी लग गई। माताने बहुत समझाया पर उसका रोना बन्द न हुआ। आख़िर और कोई उपाय न देख माता बोली—"चन्दर! बाबूजी तेरे लिये ग्रामोफोन लेने गये हैं।" माताको विश्वास था कि इस शुभ समाचारको सुनकर चन्दर अवश्य ही उछल पड़ेगा किन्तु जब यह सुनकर चन्दर और भी तीव्र स्वरसे रोने लगा, तो वे क्रुद्ध होकर उसे वहीं छोड़ चली गई। किन्तु बहिनने उसे गोदीमें बिठाल कर उसके आंसू पोंछते पोंछते कहा—"क्यों चन्दर! अब क्यों रोते हो?" चन्दरने सिसकते सिसकते कहा—"अम्मा मुझे चिढ़ाती······" उसका गला भर आया, आगे और कुछ न कह सका। बहिनने उसका मस्तक चूमकर कहा—"नहीं भैया! कहीं अम्मा तुम्हें चिढ़ा सकती हैं? सचमुच बाबूजी तुम्हारे लिये ग्रामोफोन लेने गए हैं।" चन्दर उत्सुकताके साथ बोला—"तो क्या बाबूजीकी नौकरी फ़िर लग गई जीजी!" बहिन उसकी स्मरण शक्ति को मन ही मन सराहती हुई बोली—"हाँ भैया! अब तुम्हारा ग्रामोफोन बहुत जल्दी आ जायगा।"

चन्दर इतना प्रसन्न हुआ कि बिना आँसू पोंछे ही वहांसे भागा भागा अपनी मित्र-मण्डलीमें पहुंचा और सबको यह शुभ समाचार सुनाने लगा। विधिवत् सबको निमन्त्रण दे आया। दिन भर वह सारे गांवमें घूमता रहा। साँझको बहुत थका हुआ घर आया। चेहरे पर प्रसन्नता झलक रही थी पर शरीर बहुत थका हुआ था। जेठके दोपहरकी धूप सहनेकी शक्ति बड़े बड़े कसरती पहलवानोंमें भी नहीं होती फिर वह तो नन्हाँ-सा बच्चा था। ज्वर चढ़ आया। रात भर करवटें बदलता रहा। दूसरे दिन भी ज्वर न उतरा। किन्तु ज्वरकी अवस्था में भी वह बार बार अपनी बहिनसे पूछ उठता—"अभी बाबूजी नहीं आए जीजी!" बहिनके पास "अभी नहीं आए भैया!" के अतिरिक्त और क्या उत्तर हो सकता था?

इस बार जब फिर बहिनने चन्दरके मुखसे वही प्रश्न सुना तो व्याकुल होकर बोली—"बाबूजीको ग्रामोफोन खरीदनेमें देर हो गई है चन्दर! उसे लेकर ही आयेंगे।

चन्दर—"ग्रामोफोन खरीदनेमें क्यों देर हो गई जीजी?" बहिनने उसका मन बहलानेके लिये अपने मनसे गढ़कर कहा—"दूकान पर न जाने कितने लोग ग्रामोफोन खरीदने जाते होंगे। जब बाबूजी गये होंगे तब दूकान पर ग्रामोफोन खतम हो गये होंगे।"

चन्दर—"खतम हो जायेंगे तो फिर कैसे आयेंगे?"

मालती—"क्यों? दूकानदार और बनाएगा जो।"

चन्दर—"तो वह जल्दीसे क्यों नहीं बना लेता?"

मालती—"उसे अपने भी तो घरके काम होंगे चन्दर! वह क्या जाने कि तुम्हें इतनी जल्दी पड़ी है।"

रोगी बालकका मुख म्लान हो गया।

इसी समय भीतरसे माताकी पुकार सुनकर मालती चली गई। चन्दर बड़ी देर तक अकेला मन-ही-मन न जाने क्या बड़बड़ाता रहा। कुछ देरमें जब मालती उसके पास आई तो चन्दर बोल उठा—"क्यों जीजी! दूकानदारको क्या मुझपर तनिक भी दया नही आती। मैं इतना······" बहिन बीच हीमें बोल उठी—"दूकानदारको तुम्हारा क्या

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पता चन्दर !" चन्दर 'हूं' करके चुप हो गया। थोड़ी देरमें फिर बोला—"जीजी! एक कागज दो।" बहिन उसकी ओर प्रश्न सूचक दृष्टिसे ताकने लगी। वह फिर बोला—"एक कागज दे दो जीजी! मैं चिट्ठी लिखूंगा।" बहिन प्रसन्न होकर उठी और एक कागज तथा दावात कलम लाकर भाईके पास रखकर सिरहाने खड़ी हो गई। वह समझ गई कि चन्दर अपने टेढ़े-मेढ़े अक्षरोंमें पिताको पत्र लिखेगा।

(५)

कलकत्ताकी एक सौदागरी कोठीके एक छोटेसे कमरेमें एक तख्तके ऊपर बैठे हुए बाबू राधिकारमण एक पत्र पढ़ रहे हैं। इसी कोठीमें उनकी नौकरी पक्की हो गई है। वे चन्दरके ग्रामोफोनके लिये अपनी पत्नीका कण्ठहार नहीं बेचना चाहते थे। इसलिये उन्होंने अभी एक मास काम करके वेतनके रुपयेसे ग्रामोफोन लेकर तब घर जानेका विचार किया था। पर इस पत्रने उनका निश्चय बदल दिया। उनको कन्याके पत्रके साथ हीटे ढ़े-मेढ़े भद्दे अक्षरोंमें लिखा हुआ और भी एक पत्र मिला था, जिसे पढ़कर उन्हें आनन्द और दुःख दोनों ही हो रहे थे। एक बार पढ़ कर बन्द किये हुए पत्रको फिरसे खोल कर उन्होंने चन्दरका पत्र जैसा लिखा था उसी भांति हँसते हँसते पढ़ना आरम्भ किया :—

"भाइ दुकनदर जि रम राम। हम बिमार हे। हम गिरमफोनको बहूत चहते हे। हमरे लीये बहूत जलदि भेज दो। देर करगे तो हम अछे नहि होगे। बाबु चन्दरलालने लिखा।"

पत्र मोड़ कर जेबमें रखते हुए राधिकारमणजी कोठीसे बाहर निकल आये और एक सुनारकी दूकान पर जा पहुंचे। कण्डहार गिरवी रखकर सौ रुपयेका एक नोट मिला उसे उन्होंने चन्दरकी चिट्ठीमें मोड़कर रख लिया।

वहांसे वे ग्रामोफोनकी एक बड़ी दूकान पर गये और ६५) रुपयेका एक ग्रामोफोन पसन्द किया।

किन्तु नोट निकालनेके लिये जेबमें पड़े हुए कागज़ोंको बाहर निकलने पर चन्दरके पत्र और साथ ही साथ उस नोटका कहीं पता न लगा। उनके पैरों तलेसे मिट्टी खिसक गई। आकाश धूम्रमय जान पड़ने लगा और पृथ्वी चक्कर खाने लगी !!!

(६)

सन्निपातमें बकते बकते चन्दरने रात काट दी। "वह देखो······बाबूजी आगए······कैसी मीठी आवाज़ है······लाओ मुझे दो मैं बजाऊंगा······" इन्हीं बातोंकी रट लगी हुई थी। ग्रामोफोन भूत की तरह सिर पर सवार था। मुँहमें ग्रामोफोनकी ही बातें थीं—हाथोंकी अंगुलियाँ ग्रामोफ़ोनके प्लेट की नकल करती चक्कर लगा रही थीं।

इसी समय बाबू राधिकारमण हाथमें हैण्डबेग लिये हुए चुपके चुपके चोरकी भांति घरमें घुसे। मालती उन्हें देखते ही चिल्ला उठी—"बाबूजी आ गए! बाबूजी आगए !!" सन्निपातकी दशामें भी चन्दर चौंक कर उठ बैठा। उसके सूखे गालोंपर एक हल्की लालिमा दौड़ गई। वह बड़े ज़ोरसे बोल उठा—"बाबूजी !······ग्रामोफ़ोन !!···" पुत्रका उन्माद देख कर बाबुजी के सिर पर वज्र टूट पड़ा! वे जहांके तहां खड़े रह कर उसकी ओर व्यथित दृष्टिसे ताकने लगे। उस दृष्टिमें कितना दुःख था, कितनी करुणा थी। चन्दरका नन्हा-सा हृदय उस दृष्टिका मर्म समझ गया। वह धीरेसे आँखें बन्द करके शय्या पर लेट गया। सन्निपातका फिरसे दौरा

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हुआ। अब उसको माता, पिता और बहिन किसीकी पहचान न रही। पर उसके वर्रानेका ढर्रा बिलकुल बदल गया। मालूम होता था ग्रामोफ़ोनका उसने कभी नाम भी नहीं सुना होगा। कुछ देर बर्रा कर वह मौन हो गया। माता और बहिनने समझा कि 'बच्चा बापको पाकर प्रसन्न हो गया। ग्रामोफ़ोनको भी भूल गया।' किन्तु चन्दरके पिता इस भुलावेमें नहीं आए। वे दिन भर चुपचाप चन्दरके पास बैठे रहे। न चन्दर ही कुछ बोलता था न चन्दरके पिता ही। कन्या आई—"बाबूजी! नहा लीजिये।" वे बोले—"आज नहीं नहाऊंगा।" गृहिणीने आकर खानेके लिये हठ किया। वे टस से मस भी न हुए। सारे घरमें एक भयानक सन्नाटा छा रहा था। इस समय चन्दर और चन्दरके पिता एक दूसरेके प्रति-बिम्बसे जान पड़ते थे। दोनोंके मुखों पर एक ही पीलापन था। दोनों ही मौन थे।

धीरे धीरे दिन ढलने लगा। साथ ही साथ चन्दरकी नन्ही सी आयु भी········। माता उसके मुँहके पास दवाईकी चम्मच लेकर गई पर चन्दरने उसे दूर फेंक दिया। बहिनने झट दूसरे चम्मचमें दवा तय्यार की किन्तु सहसा पिताकी ओर देखते ही रुक गई। उनकी आँखें लाल थीं। घण्टों मौन रहनेके बाद वे इस समय धीरेसे बोले—"रहने दो!"

इसी समय बाहरसे पोष्टमैनकी पुकार सुनकर मालती दौड़ी गई और हाथमें एक पोष्टकार्ड लेकर लौट आई। उसके पीछे पीछे उसके चचा एक बड़ा पार्सल लिये आ रहे थे। सरसरी निगाहसे चिट्ठी पढ़ते ही बाबू राधिकारमणका चेहरा सहसा विकसित हो गया—चन्दरकी चिट्ठीके साथ सौ रुपयेका नोट ग्रामोफ़ोनकी दूकानमें पड़ा पाया गया था। लिफ़ाफ़ेका पता देख कर दूकानके मालिकने उक्त सौदागरी कोठीमें पूंछतांछ करके तुरत्त ही ग्रामोफ़ोन पार्सलसे यहां रवाना कर दिया।

माता पिता और बहिनके अनेक हाथोंने बहुत जल्दी पार्सल खोल डाली और ग्रामोफ़ोन पर प्लेट चढ़ा दिया। सारा घर उसकी आवाजसे गूंज उठा। पर······

पर जिसके लिये यह सब हो रहा था उसे इसका कुछ पता नहीं था। वह अपनी शय्याके एक किनारे अचेत पड़ा था।

× + + ×

धीरे धीरे रात हो गई। बाजेके बजनेका रोगी पर कोई प्रभाव पड़ता न देख प्लेट उतार दिया गया। सहसा चन्दर चिल्ला उठा—"वाह!···कैसी मीठी आवाज़ है······बाबूजी सुनिये।···अच्छा अभी आया···यह तो बड़ा अच्छा बाजा है······आओ मोहन, तुम क्यों दूर बैठे हो—तुम भी सुनो। शरमाओ मत मुरारी। हः हः हः हः हः······"

(७)

चन्दरकी मृत्यु हुए तीन दिन हो गए हैं पर बाबू राधिकारमणका कहीं पता नहीं है। वे कलकत्ता जाते समय अपने पुत्रसे न मिल सके थे; पीछे लौट कर भी वह उससे बातें न कर सके। इसी व्यथासे उनका हृदय टूट गया।

जिस समय बाबू राधिकारमण अपने पुत्रको चितामें भस्म करके घर आये, उस समय उन्होंने सबसे पहले मोहन और मुरारीको बुलाकर चन्दरका ग्रामोफ़ोन देते हुए कहा था—"लो बेटा! यह तुम्हारा चन्दर तुम्हारे लिये छोड़ गया है······"

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कवि और कविता

(लेखक—श्री रत्नचन्द्र दन्तपति बी० ए० (आनर्स) विशारद)

कवि और कविताका सम्बन्ध बड़ा सूक्ष्म एवं बड़ा मधुर है। अपनी अलौकिक प्रतिभाके द्वारा कवि कभी संजीवन-सन्देश फूंकता है, कभी प्रकृतिके कण-कणमें अपनी हृदयस्थ मादकता भर देता है। कविता कविकी प्रवृत्तियोंका चित्र है, उस चित्र पट पर कवि अपनी शक्तियोंके सामयिक विकाससे शब्द-जाल रचता है। प्रत्येक कविके दो रूप होते हैं। वाह्य और अभ्यन्तरिक। The men in shelley और The poet in shelley, ये दोनों कविके अन्तर्जगतके दो पट हैं। इस छोटेसे लेखमें हमें यह देखना है कि कविके इन दो भिन्न रूपोंके साथ परस्पर कैसा सम्बन्ध है।

कविका हृदय उसके कवित्वका स्रोत है; उसी स्थानसे कविताकी अनन्त सूक्ष्म भावनाओंका जन्म होता है। हृदयकी छाया—स्पष्ट छाया—कवितामें अनायास आ जाती है। कविको इस कार्यके लिये प्रयत्न करनेकी आवश्यकता नहीं होती। कविका हार्दिक उच्छ्वास, उसकी ठण्ढी, ठण्ढी, साँसें, उसकी सिसकियां, सभी कविताके चित्रपट पर समान भावसे व्यक्त होती रहती हैं। जिस समय हम पढ़ते हैं कि वसन्त ऋतुके आगमन समय प्रकृतिके कण-कणमें जीवन आ जाता है; हमारे शुष्क हृदयमें समयानुकूल हर्ष वा विदग्धताकी लहरें हिलोरें मारने लगती हैं। किन्तु वे ही भाव, जब एक कविकी लेखनीसे निकलते हैं, हृदयमें उथल पुथल मचा देते हैं। ज्ञात होता है, कवि अपनी सारी शक्ति लेकर सृष्टिके सारे जीवोंको सम्बोधन कर कहता है:—

खिलो कुसुम-कुल, थिरको जल कण, छेड़ो कोयल, मंजुल तान।
उपर लुटाओ स्वर्ण, निर्झरो झरने दो गिरिवर से गान॥
मलयानिल मचलो मधुवन में, हिला पल्लवोंकी मृदु डाल।
हरियालीकी साड़ी ओढ़े बन देवी! गूंथो बनमाल॥

× × × ×

फूलो, फलो, जगतके कण कण मंगल मय हो तुम्हें वसन्त।
पर क्यों छेड़ जगाते हो. इस उरके तप्त उसास अनन्त॥
रहें सुखी जो सुखिया हों पर करें न दुखियाका उपहास।
व्यथित हृदयकी करुण सिसक पर हँसे न जगका विभव विलास॥

(जगन्नाथ प्रसाद मिलिन्द)

इन पंक्तियोंमें कितना हृदयस्पर्शी चीत्कार है। इसे सुन कर कौन ऐसा व्यक्ति है, जो यह कहनेका साहस करेगा कि इस चीत्कारमें प्रथम श्रेणीका कवित्व नहीं है। कविकी हार्दिक व्यथा शब्द शब्दमें छलक रही है। 'व्यथित हृदयकी करुण सिसक' पर कौन ऐसा वैभवशाली है जो बिना दो बूंद आँसू गिराये हुए चला जाय? यह कविके दुःखपूर्ण जीवनका चित्र है।

कविकी मनोवृत्तियां भी भिन्न भिन्न हुआ करती हैं। उनमें सादृश्य एक तो होता ही नहीं और यदि होता भी है तो बहुत क्षणिक एवं अस्थायी। कवि कीट्स की गणना अंग्रेजी साहित्यके प्रथम श्रेणीके कवियोंमें है। उसने स्वयं एक बार कहा था,—

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

Of ! for a life of sensations, rather
than of thought.

कवि जीवनमें उथल-पुथल चाहता है, भावुकता चाहता है और चाहता है एक अनन्त जीवनका निस्पृह चित्र। इन्हीं भावनाओंके विकासके साथ साथ उसके कवित्वका विकास होता है। वह वर्षाकालमें बादलोंको देखकर मयूरकी भांति उन्मत्त हो उठता है, चकोरकी भाँति अतृप्त नेत्रोंसे चन्द्रमा की सुधाका पान करता रहता है और कभी नहीं अघाता। उसके ज्ञान-भाण्डारसे इतिहास, धर्म, साहित्य, एवं वैज्ञानिक सत्यका अनित्य स्रोत सदैव प्रवाहित होता रहता है। श्री सुमित्रानन्दन पन्तके "सुरपतिके हम ही हैं अनुचर" नामक पदमें इसी स्रोत की स्थितिका प्रमाण है। "मेघदूतकी सजल कल्पना" में इसी भावकी अभिव्यक्ति है। श्री मोहनलाल महतो 'वियोगी' की 'रजकण' नामक कवितामें भिन्न भिन्न रूपसे इसी भावकी आवृत्तिकी गई है, और कविको उस कवितामें आशातीत सफलता हुई है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि कवि अपनी कविता में अपना असाधारण व्यक्तित्व फूंक देता है। कौन नहीं जानता कि भक्त तुलसी दासकी कविता, भक्ति से, एवं सरस और प्रज्ञाचक्षु सूरदासकी कविता, रससे, ओतप्रोत है। मीराबाईकी कविताओंमें उसी हृदयस्पर्शी रोदनकी ध्वनि है, जिसने एक दिन अपनी शक्तिसे सुदृढ़ चित्तौड़के राजमहलमें प्रवेश किया था। "जाके सिर मोर मुकुट मेरो पति सोई।" इस पंक्तिमें संसारकी सबसे सूक्ष्म और सबसे उच्च कविताकी भावना व्याप्त है। चौबीस घण्टों तक नायक नायिकाके नख-सिख वर्णनमें पड़े रहने वाले, 'फुलेलका आचमन कर उसे मीठा कहने वाले' व्यक्ति भले ही इसे कुछ नहीं समझें किन्तु विदग्ध पुरुषों और ईश्वरके पदमें लवलीन भक्तोंके लिये इस पंक्तिमें साहित्यका निष्कलङ्क सन्दर्भ है।

संसारके सारे व्यक्ति भाषासे केवल एक ही काम लेते हैं और ले सकते हैं—अपने हृदयके भावोंको प्रगट करना। भावुक कवियोंके हृदयमें भाव धीरे धीरे उठ कर महा बवंडर Tornado का रूप धारण कर लेते हैं। उस समय कवि उन्हीं Creat ideas को सुन्दर एवं समयानुकूल भाषामें व्याप्त कर देता है, और फिर उन्हें शब्दोंका रूप देता है। यह व्याप्त शब्द जान बूझ कर लिखा गया है। आशय यह है कि कवि पहले अपने हृदयंगत भावोंको ढूंढता है, फिर उन्हें हृदयकी भाषामें व्याप्त कर लेनेके बाद दूसरे शब्दोंमें व्यक्त करता है। इसी अभिव्यक्तिका अन्तिम रूप कविता है। दूसरे शब्दोंमें कविता उस रचनाको कहते हैं जिसमें कवि अपने भावोंको सुन्दर एवं स्पष्ट भाषामें मधुरताके साथ व्यक्त करता है।

भिन्न भिन्न कविताओंमें भिन्न भिन्न अवस्थाओं का चित्र होता है। जितनी ऊँची और हृदयभेदी भावना होती है, उतनी ही प्रबल और स्थायी शक्ति कविके शब्दोंमें फूटी पड़ती है। फ़ारसी साहित्याकाशके महान प्रतिभाशाली नक्षत्र कवि उमरखय्यामकी कविताओं—सूक्तियों—में स्त्री, मदिरा और प्रेमकी जैसी तन्मयता है, वैसी संसारके साहित्यमें अन्यत्र मिलनी दुर्लभ है। कितनी भावपूर्ण उक्ति है!

मिट्टीके नीचे जाऊंगा, तेरा अमिट प्रेम लेकर।
और उठूंगा फिर मिट्टीसे, लेकर अमिट प्रेम तेरा॥

('सेहर')

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कितनी दुर्लभ तन्मयता है! कैसी हृदयभेदी भावना है!!! उमर ख़य्यामकी रचनाओंका पूर्व्व और पश्चिममें समान आदर है। अङ्गरेजी भाषामें तो लगभग १५० वर्ष पहिले उनकी रुबाइयोंका अनुवाद हो चुका है और उनकी बड़ी प्रतिष्ठा है। स्त्री, मदिरा, और प्रेमकी अभूत पूर्व्व तन्मयता एक साथ ही एक सूक्तिमें व्यक्त हुई है। वह सूक्ति अनुरक्तिका चित्र है, अभावका अनुभव है और है सन्तोषी हृदयका शान्त सङ्गीत।

इस तरु तले कहीं खानेको रोटीका टुकड़ा हो एक।
पीनेको मधुपात्र पूर्ण हो, करने को हो काव्य विवेक॥
तिस पर इस सन्नाटेमें तुम बैठ बगलमें गाती हो।
तो मेरे हित सुनो सुन्दरी, स्वर्ग राज्यका हो अभिषेक॥

अपने ढंगकी वे सबसे सुन्दर कविता हैं। वे साहित्यमें सबसे अधिक Personal हैं—और इसी-लिये उनकी इतनी अधिक प्रतिष्ठा है।

प्रेमकी यह तन्मयता हिन्दी कवियोंमें केवल मोहनलाल महतोकी रचनाओंमें है। वे अपने शब्दोंसे तन्मयताका चित्र खींच देते हैं। वर्तमान कवियोंमें उनका स्थान बहुत ऊंचा होना चाहिये। उनकी "असमंजस," "प्रियतमसे," "अद्भुत प्यार," आदि कविताओंमें प्रकाश्य रूपसे वियोगीकी अमर आत्माका संदेश छिपा है। वे चार पंक्तियां, यदि मुक्ताओंसे सुवर्ण पर भी जड़ दी जायँ, तो भी उनका मूल्य नहीं चुक सकेगा।

× × × ×

जिन चरणोंसे ठोकर मार हटाया प्रेम भरा प्याला।
जिन चरणोंसे तूने मेरा आशा कुसुम कुचल डाला॥

और फिर, आँखोंमें आँसू ले आनेवाले कोमल शब्द।

इच्छा होती है उन चरणोंको मैं प्यार करूं जी भर।
पूजा करूं, लगा लूं उनकी धूलि हृदय पर आँखों पर॥

(एक तारा)

कवि होनेके लिये प्रेम करनेकी आवश्यकता है। प्रेमका विश्लेषण, हृदयका चित्रण करनेके लिये 'अति छीन मृनाल के तार हूं ते तेहि ऊपर पैर दै धावना होगा। जो व्यक्ति यह समझते हैं कि प्रेमका अध्ययन पुस्तकों, उपन्यासों और कविताओंको पढ़-कर किया जा सकता है वे भूल करते हैं। जिसकी कविताओंमें प्रेमका—हृदयका, जितना अधिक विश्ले-षण होगा, समझ जाइये, उसका हृदय उतना ही अधिक प्रेमपूर्ण, उतना ही गम्भीर है।

वेदना एवं व्यथाका जितना सुन्दर चित्र कवि खींच सकते हैं वैसा दूसरे नहीं कर सकते। कविके विशाल हृदयमें आनन्दकी हिलोरें और वेदनाकी करुण सिसक उठा करती हैं। कवि उन्हें बड़ी सफलता पूर्वक चित्रित कर सकता है। श्रीरत्न शुक्ल एम० ए० की इस कवितामें दुःखका कितना गवेषणा-पूर्ण वर्णन है।

कवि! किससे सीखे हैं तुमने करुणाके ये मधुमय गान।
रोते ही बीता है जगको छेड़ी जबसे तुमने तान॥
सागर है सन्तप्त शोकसे, व्याकुल हैं वसुधाके प्राण।
कहाँ हँसी केवल विषादकी प्रकृति जानती है मुसकान॥

(कविसे)

कवि प्रार्थना करता है कि 'कवि! प्रतिभाशाली हो गादो आशाके कुछ गीत पुनीत।' इसके बाद तुरत उस कविताके प्रभावका वर्णन है जो "आशाके कुछ गीत" गानेसे मानव समाजमें एवं सृष्टिके कण-कणमें प्रगट होगा:—

सागर, वसुधा और प्रकृतिके आँसूमें छलके उल्लास।

"आँसूमें छलके उल्लास" इस भावको महाकवि

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

Sheleey को छोड़कर और कोई दूसरा कवि नहीं व्यक्त कर सका।

Our sincerest laughter with some pain is frought, our sweetest songs are those that tell of saddest thought.

इसी 'करुण सिसक' की अस्पष्ट भावना Shakespeare की इस पंक्तिमें छिपी है।

A beautys tears are lovelier than her smiles.

साहित्यकी महान व्यथाका अनुभव भुक्तभोगी ही कर सकते हैं। ग्राम्य-गीतकी इन पंक्तियोंमें कितनी वास्तविकता और कितनी दारुण पुकार है।

'जो मैं होतिउँ वनकी कोइलिया,
कुहुक रहतिउँ राजा तोरे बंगलेमें।
'जो मैं होतिउँ जूही की कलियाँ,
चहक रहतिउँ राजा तोरी बगियामें।

या ससुराल जाते समय नववधूकी अवस्था।

केकराके रोअल गँगाजल उमड़ल, केकराके रोअल समुन्द्र हे।
कौन दुलरुआ मँदिर पैठि रोवे, केकरा के जियरा कठोर हे।
बाबुके रोअल गँगाजल उमड़ल, मैया के रोअल समुन्द्र हे।
भैया दुलरुआ मँदिर पैठि रोवे, भौजी के जियरा कठोर हे।

इन पंक्तियोंमें प्रथम श्रेणीका रोदन है। वह असभ्य नहीं है। सभ्यता उसे पा नहीं सकती। वह अनिर्वचनीय है।

कविके जीवनका प्रत्येक रूप उसकी कवितामें प्रगट होता है। भिन्न भिन्न कवियोंकी रचना भिन्न-भिन्न रूपसे हृदयपर प्रभाव डालती हैं। क्रान्ति और विद्रोहकी भावना कविके शब्द शब्दमें विद्यमान रहती है। शर्त केवल यह है कि कविको क्रान्तिकारी और विद्रोही होना चाहिये। फिर तो उसके शब्द-आगकी लपटें होंगे। उसकी कण्ठ-वीणासे कोकिलके पंचम स्वरके बदले, तलवारकी झनकार और बिजलीकी कड़क सुनाई पड़ेगी। उसके शब्दोंमें जीवन-ज्योति जागृति होगी। जीवन भी कैसा? ज्वालासे ओत-प्रोत, कम्पनसे विदग्ध, भुजाओंमें अटूट बल एवं हृदयमें अटूट हास।

इस वीर रसपूर्ण कविताके लिये आधुनिक कवियोंमें दो सम्मानित नाम सम्मुख आते हैं। "गुलाब" की कुरुक्षेत्र नामक रचना वीर-रसकी स्थायी पुस्तक होगी। किन्तु फिर भी "प्रभात" की रचनाओंमें जीवन-मरण, सुख-दुःख, उत्थान-पतनका जो चित्रण होता है, वह साधारणतया दुर्लभ है। कवि कहता है :—

खींचूंगा ललाट पर तेरे मैय्या रक्त तिलक मैं आज।

इस पंक्तिमें एक स्थान पर वीरता, भक्ति और आदरके जो भाव मिश्रित हैं उनका समिश्रण साधारणतया कवितामें बड़ा दुर्लभ है। वे ही उच्छृङ्खल भाव आज 'प्रभात' की सारी कविताओंमें दीख पड़ते हैं। 'प्रभात' की रणचण्डी सदैव ताण्डव नृत्य करती रही है—और करती रहेगी। 'प्रभात' की आरम्भिक कविताओंमें 'वसन्तकी मादकता' है,'मदभरी पूर्णिमा' है और प्रथम चुम्बन है। उनकी पिछली कविताओंमें 'विजयोल्लास' है, 'रणचण्डीका ताण्डव' है और हैं वे स्थिर प्रतिज्ञायें, जो हम मुर्दे और बुज़दिल मनुष्योंमें भी संजीवन संदेश फूंकती है :—

(१) स्वर्ण कलमसे विहँस लिखूँगा मैं स्वतन्त्रताका इतिहास,
(२) मेरी ज्वाला सह न सकेगा यह पापी कायर संसार।

विद्रोहकी प्रबल भावना 'प्रभात' के रग-रगमें व्याप्त है। वह एक निकट भविष्यकी प्रतीक्षा कर रही है, जब उसकी प्रबल शक्तियां एक भीषण उथल-पुथल के साथ वर्तमान सृष्टिका अस्तित्व मिटा देंगी। एक

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नवीन क्रमसे नयी सृजना होगी। ओह! वह कितना महान दिन होगा। ओह—रोकनेपर भी ये पंक्तियां रुकतीं नहीं। कौन भाग्यशाली कवि यह स्वप्न देखता है! हाय, इस समय उसका नाम भी याद नहीं है।

इलाही वह भी दिन होगा जब अपना राज देखेंगे।
जब अपनी ही ज़मीं होगी औ अपना आस्मां होगा॥
शहीदों की चिताओं पर जुड़ेंगे हर बरस मेले।
वतन पर मिटने वालोंका यही बाक़ी निशां होगा॥
(काकोरीके शहीद)

असहयोगके कालमें प्रकाशित बनावटी देशभक्ति की झूठी कविताओंसे यह कविता कितनी श्रेष्ठ है, इसे भावुक तुरत समझ जायंगे।

श्री सुमित्रानन्दन पन्तकी कविताओंके मूल एवं सूक्ष्म भाव दो हैं। व्यथा और हास। यह बड़ी ही Refined वेदना है और बड़ा ही स्वाभाविक हास। ये दोनों भाव कविके चरित्रमें मूल रूपसे विद्यमान हैं। पल्लवकी भूमिकामें ही (जो गद्यमें है और जिसे साधारणतया अधिक Personal समझा जाता हैं) ये दोनों भाव मिलते हैं और उनकी कविताओंमें तो ये समष्टि रूपसे सर्वत्र विद्यमान हैं।

एक युवती स्त्री, जो अपने बचपनके दिनोंको याद कर आज रो पड़ती है, कविसे कहती है—

"चित्रकार! क्या करुणाकर मेरा चंचल भोलापन
मेरे यौवनके अंचलमें चित्रित कर दोगे पावन?
आज परीक्षा तो लो अपनी, कुशल लेखनीकी ब्रह्मन्
देखो याद उसे आता है अपने उरका भाव रतन?

* * * *

धूल भरे घुंघराले, काले, भैय्याको प्रिय मेरे बाल
माताके चिर-चुम्बित मेरे गोरे गोरे सस्मित गाल।
(पल्लव)

इसमें जो स्मृति है वह एक बालिकासे युवती तककी भिन्न-भिन्न अवस्थाओंकी है। अन्तमें जब कहती है:—

इस यौवनके प्यालेमें मेरा बालापन भर दो।

तो हम सोचने लग जाते हैं कि सचमुच ही इस रमणीको क्या दुःख है। यह कितनी Refined व्यथा हैं, कैसी हृदय-स्पर्शी वेदना है, कैसा सजीव चित्र है।

अब 'पन्त' का हास देखिये। एक बालिका है। उम्र तो दी हुई नहीं है किन्तु अन्दाजसे पांच या छ वर्षोंकी होगी। वह बड़ी ही भोली और Inquisitive है। वह अपनी मांसे पूछती हैं।

"मां! अल्मोड़ेमें आये थे, जब राजर्षि विवेकानन्द तब उनके लिये इतने दीप जलाये क्यों मां?" क्या उनकी दृष्टि कुछ मन्द है? उनके लिये पाँवड़े क्यों बिछाये, क्या वे बिना पांवड़ेके नहीं चल सकते हैं?"

भोली भाली लड़की! तू क्या जानती है, वे राजर्षि हैं, वे अनन्त-चक्षु हैं। इस चित्रणमें कितनी स्वाभाविकता है! कैसा हास है। मेरे एक मित्रको तो इसे पढ़ कर आनन्दके अश्रु आ गये। Aftar Blenheim नामकी अंग्रेजी कविता जिन्होंने पढ़ी है, वे निस्सन्देह पन्तकी इस कविताको प्रथम श्रेणीकी मानेंगे। वही स्वाभाविकता है, वही Inquisitive ness है।

पन्तकी सारी कवितायें मुख्यतया इन्हीं वेदना और हासके भावोंसे ओत-प्रोत हैं। सूक्ष्म रूपसे वह उनकी प्रत्येक कवितामें वर्तमान है। पन्तके जीवनमें भी इन्हीं दो भावोंकी प्रधानता है। उनके चित्रमें भी मुख मण्डल पर एक अस्पष्ट वेदना और स्वाभाविक हासकी छाप रहती है।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्री सूर्यकान्त त्रिपाठी और श्रीजयशंकर प्रसादकी कविताओंमें चरित्र-वैषम्य है। वे the man in the poet नहीं प्रकट करतीं, उनके भाव उनके व्यक्तिगत विचार नहीं माने जा सकते। उनकी कविताओंमें धुंधले सत्यका आभास है। इस चरित्र-वैषम्यके कई कारण हैं। 'निराला'ने कभी उन्मुख होकर कविता लिखनेका प्रयत्न ही नहीं किया। उनका सङ्गीत कोकिलाकी तरह स्वभाविक तो अवश्य है, किन्तु अभी तक उसमें श्रृङ्खला का अभाव है। वह सुसंगठित नहीं है। उसमें careful Carelessness है। Sweet disorder है। और यही कारण है कि उनकी कवितायें काफी सुन्दर हैं। फिर भी वे personal नहीं हैं, कविके व्यक्तित्वका उनकी कविताओंमें अभाव सा है। कभी कभी जब यह व्यक्तित्व उनकी किसी कवितामें फूट पड़ा है, कविता देखने लायक हो गई है।

मैं तुङ्ग हिमालय शृङ्ग और तुम चंचल गति सुर-सरिता।
मैं विमल हृदय उच्छ्वास और तुम कान्त कामिनी कविता॥

या उनकी 'जूहीकी कली' में भी उनका अस्फुट सौन्दर्य फूटा पड़ता है। उनकी सर्वश्रेष्ठ रचना 'बादल राग' में भी वही असाधारण व्यक्तित्वका आन्दोलन है। 'बादल राग' तो महाकवि Shelley के an ode to the west wind नामक कविता का सहसा स्मरण करा देते हैं।

'प्रसाद' ने नाट्यकार होनेके कारण 'कविता' में अपना व्यक्तित्व भरना नापसन्द किया। नाटक सबसे अधिक Impersonal साहित्य है। नाट्यकार केवल अपने पात्रोंके विचारोंको प्रकट कर सकता है; स्वयं विचार करनेका उसे कोई अधिकार नहीं। "अजात शत्रु" नामक नाटकमें कलाकी जो उत्कृष्ट सीमा पार की गई है, उसने 'प्रसाद' की कविताको व्यक्तित्व-मय होनेसे रोक दिया हैं। जब स्वयं Shakespeare नाट्यकार होनेके कारण अपनी कवितामें अपना व्यक्तित्व नहीं भर सका, तब दूसरोंका क्या कहना?

यदि कविताका उद्देश्य, महाकवि Words worth के शब्दोंमें "To add sum shine to day light, to console the afflicted, to make the happy happier." है, तो हम कह सकते हैं कि सत्साहित्य और सुन्दर कविताओंमें व्यक्तित्व अत्यन्त आवश्यक है और यह हर्षकी बात है कि हिन्दीके—छायावादके—आधुनिक कवियोंमें इस व्यक्तित्वका काफी विकास हुआ है।

सन्ध्याके बाद

(रचयिता—श्री वाचस्पति पाठक)

वह वसन्त वेहोश पड़ा है, हैं कलियाँ कुछ सकुचाई,
अपनी मादकतामें तुमने कैसी आँखे दिखलाई।
भूल पड़े हैं राह, भिखारी बनमे भौंरे दीवाने,
वहद धुनमें मस्त हुए जो आये उनको अपनाने।

आज प्रलोभन भर है जो कुछ केवल उसकी प्रिय! छाया।
फैल रही जीवनके भीतर वन किसकी वेसुध माया।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आंसूकी बून्द

(ले०—श्रीमती चन्द्रकुमारी मिश्र)

(एकांकी नाटक)

—पात्र—

दयाराम—यात्री, यशोदाका पति और मन्थराका भाई।

कृपा सागर—दयारामका बहनोई।

जवाहर—कृपासागरका नौकर

डाकृर

—पात्री—

विजली—एक खोई हुई बालिका

यशोदा—दयारामकी पत्नी

मन्थरा—कृपासागरकी पत्नी

हीरा—कृपासागरकी नौकरानी

पहला दृश्य

(स्थान—बद्रीनाथका पथरीला रास्ता)

(शामका समय है, बड़े ज़ोरसे आँधी चल रही है। बादल गरज गरज कर विजली तड़पा रहे हैं। कभी पहाड़से पत्थर गिरनेकी आवाज़ भी होती है।)

यशोदा—हे भगवान, बहुत हुआ अब तो थमो। हाय! कैसा तूफ़ान है?

दया०—चलो तीर्थ स्थान है, मरके सीधे बैंकुण्ठ जायेंगे। एक बार मरना है, फिर डर काहेका?

यशोदा—मैं मरनेसे तो नहीं डरती। अपने है ही कौन? लेकिन कुछ छुफाई नहीं पड़ता, पैरोंमें कंकड़ चुभे जा रहे हैं।

दया०—हां, है तो आफ़त मची हुई। हैं! यह रोनेकी आवाज़ कैसी?

यशोदा—(कान पर हाथ लगाकर) राम राम! यह तो किसी बच्चेके बिलबिलानेकी आवाज़ है।

दया०—ठहरो ठहरो, वह इसी तरफ़ आता मालम पड़ता है।

यशोदा—हाय, हाय! वह कौन ऐसी हत्यारिन माता होगी जो ऐसे विकट समयमें अपना लाल छोड़ देगी? अपनी आंखोंकी रोशनीको आंसुकी बून्दकी तरह बहा देगी? भगवान, मुझे माता बननेका सौभाग्य नहीं मिला, फिर भी इस बालकके गला फाड़ फाड़ रोने पर मेरा कलेजा फटा जाता है।

(विजलीका "मां, मां! हाय, मेरी मां कहां गई?" चिल्लाते हुए आना और तेज़ीसे यशोदासे चिमट जाना)

दया०—अरे, इसे जल्दीसे छिपा लो अपनी गोदमें। अहा! कैसा सुन्दर बालक है?

यशोदा—(विजलीको छातीसे लगाती है) अरे बचा! तू सचमुच आदमीका बचा है या कोई छलावा है, या विजली आस्मानसे टूट कर साक्षात देवी भवानीका रूप धारण करके मेरा सर्वनाश करने आई है?

दया०—भगवानकी महिमाका पता किसीने नहीं पाया। तिलसे ताड़ बनाते उसे कितनी देर लगती है? अरे, अब तो हाथको हाथ नहीं सूझता। क्यों न यहीं बैठ जायँ जो बदा है, वह बिना हुए न टरेगी।

(दोनों बैठ जाते हैं)

यशोदा—वद्री कितनी दूर है?

दया०—बहुत दूर।

यशोदा—(बच्चेको अच्छी तरह कपड़ेमें लपेट कर गोदमें

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सुला लेती है। बच्चा भी चुपचाप मुंह छिपा कर सो जाता है) देखो, ईश्वरकी लीला, ऐसे तूफानमें इस बालकको मांसे वंचित कर दिया। (बच्चेका हाथ चूम कर) अहा! कैसे सुन्दर कमलकी पंखुड़ियां जैसी उंगलियाँ हैं।

दया०—भगवानने हमारी यात्रा सफल कर दी। दया-निधान कृपासिन्धुने इस बालकका वरदान तुम्हें दिया है। चलो तुम्हारी खाली गोद भर गई।

यशोदा—शायद कोई इसे ढूंढ़ता हुआ पीछेसे आवे।

दया०—(आवाज़ पै आवाज़ देता है) यह किस भाग्य-शालीका बच्चा है? अरे निर्दयो, इसे क्यों ऐसे तूफ़ानमें छोड़ दिया!

(बार बार कहने पर भी सिवाय चट्टानोंसे टकराई हुई प्रतिध्वनिके और कुछ उत्तर नहीं मिला।)

यशोदा—हरे राम! कैसी ज़ोरसे बिजली चमकी! (मैं तो इस बच्चेको बिजलीके नामसे पुकारूंगी।

दया०—और मैं तो इसे आंखोंकी रोशनी कहूंगा। लो अब तूफ़ानका वेग कम हो चला है। चलो, जल्दी चलें, जिससे चट्टीमें तो पहुंच जायें। अगर कोई इस बच्चेकी खोजमें आयेगा तो वह वहां ज़रूर पहुंचेगा।

(दोनों बच्चेको गोदमें उठाकर चल पड़ते हैं)

दूसरा दृश्य

स्थानः—दयारामका मकान।

(यशोदाका बिस्तर पर पड़े कराहते हुए दिखलाई पड़ना पास ही बिजली खड़ी है)

बिजली—मां, ऐ मां!

यशोदा—(धीरेसे) बेटी।

बिजली—कैसी तबीयत है?

यशोदा—बच्ची, और थोड़ी देरकी मेहमान हूं।

बिजली—(रोती है) मां, ऐसा मत कहो। मेरा कौन है?

यशोदा—(ऊपर उंगली उठाकर) भगवान।

बिजली—मां, मैंने भगवानको कभी नहीं देखा। मेरे भगवान तो तुम्हीं हो।

यशोदा—उसकी महिमा तो देखती हो।

बिजली—हां मां! यह घर, यह पेड़, यह मैं, और तुम, यही न?

यशोदा—बेटी, अब तू नौ साल की है। छः सालसे तुझे मैंने अपनी छातीपर खिला-खिलाकर बड़ा किया। तूने मां पाई और मुझ हतभागिनीने तेरे जैसा बचा पा अपने भाग्य को सराहा। लेकिन विधनासे यह सुख न देखा गया। बीच हीमें रोड़ा अटका दिया।

बिजली—मां! मेरी प्यारी मां! आज कैसी बातें करती हो? ये आंसू क्यों निकल रहे हैं?

यशोदा—(आंसू पोछ कर) कुछ नहीं बेटी। मुझे अगर कुछ ख्याल है तो वह तेरा। हाय! तू अनाथा अबोध बची पत्थरोंमें ठोकर खाती, मां मां पुकारती फिरती थी। निर्दयी भगवानको जब तुझपर तरस न आया तो आगे न जाने तेरे कर्ममें क्या लिखा है? हाय! अब मुझसे नहीं बोला जाता।

(मुंह छिपा लेती है)

(दयारामका डाक्टर और कृपासागरके साथ बड़ी तेजीसे प्रवेश)

यशोदा—पानी?

(बिजली पानी पिलाती है)

यशोदा—मेरा समय पूरा हुआ। (बिजलीका हाथ दया-रामके हाथमें देती है)

बिजली—मां! हाय मेरी मां! कहाँ गई, मुझे छोड़कर!

(छाती पीटकर रोती है। सब रोते हैं)

दया०—(बिजलीका हाथ कृपासागरके हाथमें थमाकर) भाई, तुम मेरे बहनोई हो। तुम्हारे सिवाय अब मेरा कोई इस संसारमें नहीं है। इसीसे इसे तुम्हें सौंपता हूं। मैंने बुढ़ापेमें चौथी शादीकी थी, वह सिर्फ औलादकी ख़ातिर। भगवानने किसी न किसी तरह हम दोनों की मनोकामना पूर्ण की। यह बिजलीका दुर्भाग्य और मेरा सर्वनाश है जो मेरे पुराने रथका नया पहिया अकस्मात टूट गया। जब युवावस्थाका भरोसा नहीं तब (अपने शरीरकी झुर्रियां दिखला कर) इस सूखे चमड़ेका क्या भरोसा है! इसलिये अब जीकर इसे और क्यों सासत दूं! (दौड़ कर कुएंमें कूद पड़ता है)

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तीसरा दृश्य

स्थानः—कृपासागरके मकानका आंगन।

(मन्थराका बिजलीके बाल पकड़े मारते हुए दिखलाई पड़ना)

मन्थरा—हरामजादी! चुड़ैल! सूअरकी बच्ची! (और दो तीन थप्पड़ लगाकर) क्यों री! बतलाती क्यों नहीं? तू वहां क्या करने गई थी? बतला अभी, नहीं तो तेरी खाल खींच लूंगी।

बिजली—मां, मैं बेकसूर हूं। हाय, मुझे मत मारो। मैंने आपका क्या बिगाड़ा? मैं तो हीराके पास सीना सीखने गई थी।

मन्थरा—हाँ, सीना सीखने गई थीः—(दांत पीसती हुई) निगोड़ी बदजात, मै खूब जानती हूं कि हीरा जो तेरी बड़ी हिमायतन बनी है उससे तू खूब घुल घुलकर मेरी बुराई करती है! बतला, अभी हीराने तुझे बाबूजीसे कहनेको क्या सिखलाया (बाल पकड़ कर धक्का देती है) बतलाती है कि मार डालूं तुझे जानसे। अभी देखूं मेरा क्या कोई कर लेता है!

बिजली—(रोती हुई) मां, मैंने कुछ नहीं कहा और न हीराने ही मुझे बाबूजीसे आपकी बुराई करनेको कहा। मां! मैं हाथ जोड़ती हूं, मुझे मत मारो।

मन्थरा—(जल्दी जल्दी दो तीन लातें ज़माकर) क्यों री! क्या यह नहीं कहा कि मां मुझे आधे पेट खाना देती हैं, उसपर हीराने नथने फुलाकर तुझे यह नहीं सिखलाया कि तुम बाबूजीसे क्यों नहीं कह देती हो? अछूत, बद्रीनारायणकी सड़कों परकी भिखारिनकी, दोगली, न जाने भंगीकी जनी है या चमारकी। मांको खाया। पालनेवालेके घरमें ताला लगवाया, अब मेरा नाश करने आई है! लालको तो गटक गई। अब हम दोनों बाकी हैं, जिनकी भी ख़ैर नहीं। चुड़ैल! जबतक तू अपना मनहूस क़दम मेरे घरसे न निकालेगी तबतक मेरा अनिष्ट ही होता रहेगा। (लकड़ी उठाकर मारती है और बिजली हाहाकार करके चिल्लाती है)

(जवाहरका दौड़ कर आना)

जवाहर—(हाथ जोड़कर) हरे राम राम, मालकिन, अरे छोड़ो नहीं तो मर जाई। हत्या होई। कन्या है। तनी दया करो सरकार! (बिजलीको छुड़ाना चाहता है)

मन्थरा—(जवाहरको धक्का देती है) दूर हो, पाजी, टुकड़खोर, गदहा, कुत्ता कहींका। तूने और हीराने ही तो इस कुजात को माथेका सिर मौरः बना रखा है। अभी इसे खूब बातें बनानी आ गई हैं। निकल जा, तू और हीरा, करो दोनों अपना काला मुंह यहांसे।

जवाहर—(अपनी पगड़ी मन्थराके पैरोंपर रखता है) अरे हजूर! कन्या है, बिन माई बापके है। आपकी सरनमें पड़ी है। अस दुर्गत मत करो। तनी दया धर्म राखौ।

(कृपासागरका प्रवेश—बिजलीका हाथ मन्थराके हाथसे छुड़ाकर)

कृपासागर—चल, बेटी चल, भगवानने तुझे अनाथा बनाकर संसारकी परीक्षा ली है कि निर्दयी मनुष्य एक अनाथ बच्चे पर भी अत्याचार करनेसे नहीं चूकते। तूने भगवानका क्या बिगाड़ा, जो अनाथ बनी। हमारा क्या बिगाड़ा जो हमारे घरमें आकर मेरी स्त्री ही को हाथोंसे इतनी सताई गई, अपने भाईकी सौगातको इस तरह ठुकराने लगी। यह मेरे, तेरे या किसी और के साथ क्या करेगी? बेटी, या तो तुझे इस नर्क कुण्डसे आज़ाद करूंगा या इस तनसे आत्माको जुदा कर दूंगा।

(छाती पर मुक्के मारता हुआ जाता है)

चौथा दृश्य

स्थान—कृपासागरके मकानका पिछला हिस्सा।

(हीरा और जवाहरका बातें करते दिखलाई पड़ना)

हीरा—मलकिन बिजुलियाका प्रान लिहे बिना कबहूं न छोड़िहें। जब देखो तब एके हाड़ कूटत हैं। हरे राम! यह मेहरिया अहै या पूरी चुड़ैल। तनको दया धरम छुइ नाहिं गवा है। काल्हे देखौ, (कानों पर हाथ लगाकर) कस दुर्गत किहिस रहा कि सारा मुहल्ला थू थू करत रहा।

जवाहर—अस सुन्दर राजन जस बिटिरिया लागत है। ओकर मुंह देखते सबका दया आ जात है मुल मलकिनके करेज है कि निराल पथरे है।

हीरा—का कही, मोका तो वाके ऊपर बड़ा तरस लागत है। दुखिया बिन बाप महतारीके, तनो तनी चीज बदे कलपत हव।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भर पेट बेचारी दामो नाहीं पावत। दइयु एका भला करे। कालह चुप्पेसे आपन मुदरी हमका दिहिस (अंगूठी जेवसे निकालकर दिखलाती है) बड़ी भलेमानुस है।

जवाहर—दयाराम बाबू बड़े मालदार रहैं। सब कुछ यही बिटरियाके दैदिहिन रहा। तौन मलकिन सबै हड़प लिहिन। अनाथ कन्या केर गला काटिन तब्बै तो जुआन लड़कवा मर गवा और दोस देत हैं बिजुलियाका। अधर्मिन आपन करम नाही देखत हैं। तब्बो कृपासागर बाबू बड़े भलेमानुस हैं। बिजुरियाका आपन सगी बिटेवासे कछु कमती नाही मानत हैं। मुल मलकिनके समुऐं उनकी रत्ती भर नाही चलत है।

हीरा—कृपासागर बाबू ओहका आपन बिटिया बनाईन रहा। मुल मलकिन सबसे कह दिहिन कि बिजुलिया तो न जानै कउन जात है। बस तब्बेसे बेचारे बिरादरी मा कुजात हुइ गए। कस लिरिन मेहरिया है आपन पत आप खोइन।

(बिजलीका घबराए हुए आना)

बिजली—हीरा मां (हाथ जोड़ कर) मेरा कहा सुना माफ करो।

हीरा—(बिजलीके सिरपर हाथ फेर कर) अरी मोर दुखिया आज अस घबड़ान काहे हौ?

बिजली—हीरा मां! अब मुझ अभागीका कौन है? बाबूजीने जो संकल्प किया है वह बड़ा टेढ़ा है। भगवानने कोई ठौर मेरे लिये नहीं बनाया। जहां जाती हूं वहां महा अनिष्ट होता है। पहिले घरमें कोई न रहा। जननीका पता नहीं। अब यहां आई तो हा! मुझपर तरस खानेवाले मेरे रक्षक मुझे छोड़ गये! हे भगवान अब मैं कहां जाऊँ और किसकी होकर रहूँ? अच्छा जवाहर बाबा! राम राम (धोतीके छोरसे अफीम खोलकर खा लेती है)

हीरा—जवाहर, जवाहर, अरे बड़ा भारी गज़ब भवा ट्रम! दादा! बिजुरिया अफीम खाय लिहिस (दोनों हाय हाय करके चिल्लाते हैं। मन्थरा आती है। बिजली बेहोश होकर धड़ामसे सरके बल गिर पड़ती है। हीरा और जवाहर कृपा सागरको ढूंढ़ते हैं लेकिन उनका कहीं पता नहीं।)

जवाहर—हाय! भगवानकी लीला। जौन बेचारी कोईके आंख केर उजेर रही तौन आंखके बून्द होइके हाय! आज बिलाय गई!

भारी भूलें

(रचयिता—श्री 'रसिकेन्द्र')

विचर रही हैं धर विविध विचित्र वेश,
सुखकी लतायें छिन्न-भिन्न कर तोड़तीं।
'रसिकेन्द्र' भेद-भाव भर कर भाइयोंमें,
बँधे हुए घरोंको हैं कौशलसे फोड़तीं।
हो रहा समाज अन्ध करता प्रबन्ध नहीं,
कर छलछन्द रक्त नित्य ही निचोड़तीं।
अभी भूत भारतकी भव्यता डकार चुकीं,
तो भी भारी भूलें हाय, पिंड नहीं छोड़तीं।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हिन्दी-साहित्यका भविष्य

(ले०—श्री शिवशेखर द्विवेदी)

साहित्य-सृष्टिको सार्थक करनेकी अभिलाषासे, जिन मनीषी पंडितोंने राष्ट्र-भाषाका प्रचार स्वीकार किया है, उन्हें यदि सफलता मिले तो, निश्चय ही जाति और राष्ट्रके पक्षमें इससे बढ़कर हित-साधन और कुछ नहीं हो सकता। क्यों ? विभिन्न-भाषा-भाषियोंमें एक प्रधान भाषाका होना बहुत ही जरूरी है। परन्तु ऐसी भाषा शक्ति-सम्पन्न, निर्दोष और वोध-गम्य होनी चाहिए। वैज्ञानिक दृष्टिसे ये सब गुण हिन्दीमें हैं।

किसी भाषाकी प्रधानताके लिये दो बातोंकी विशेष जरूरत होती है। एक तो भाषाकी व्यापकता दूसरे सृष्टि नैपुण्य। हिन्दी बोलने वालोंकी संख्या अधिक है। इसी एक कारणको लेकर आजकल सभा-सोसाइटियोंमें उसे राष्ट्र-भाषा बनानेका प्रस्ताव होता रहता है। हिन्दीका साहित्य निश्चय ही अन्य प्रान्तीय भाषाओंकी अपेक्षा यदि उन्नत नहीं तो अवनत भी नहीं। हां, बङ्गलाका साहित्य अवश्य ही हिन्दीसे कुछ उन्नत है। सृष्टि-कुशलताका चमत्कार हमें बङ्गालियोंमें जिस रूपमें मिलता है, हिन्दीवालोंमें नहीं। यही कारण है कि बङ्गालमें हिन्दी प्रचार नहीं होता। वे जब हिन्दीकी ओर झुकते हैं, तो, उन्हें या तो रवी बाबू और शरश्चन्द्रके अनुवाद मिलते हैं या कला-शून्य लेखकोंकी रचनायें। ऐसी अवस्थामें वे इसे स्वीकार नहीं करते। दूसरे हिन्दीके कुछ प्रकाशक और समाचार पत्र तो बङ्गाली रचनाओंको प्रकाशित करनेमें ही अपनी सफलताकी पराकाष्ठा समझते हैं। अंग्रेजी या बङ्गभाषामें निबन्ध लिखाकर, अनुवाद छापते हैं। ये बातें यदि ऐसे सम्पादकों और प्रकाशकोंको अरुचिकर भी होती हैं, तो वे मौलिक लेखकोंको उचित पारिश्रमिक नहीं देते। उन्हें प्रोत्साहन देना भी पाप समझते हैं। जातिकी कमजोरीका इससे बढ़कर प्रमाण क्या हो सकता है ? जातिकी मौखिक भाषा अपने वाह्य लालित्यके कारण कभी-कभी बड़ा मोह पैदा करती है। परन्तु उसका मेल हमेशा अन्तःकरणसे नहीं होता। भाव-प्रकाशका ढर्रा मोलूम हो जानेके बाद जैसे लेखकको किसी और कठिनता नहीं होती—मार्जनके बाद जातिको भी कोमल-प्राण सिद्ध होनेमें कठिनता नहीं होती। संसारके छोटे-छोटे व्यापारोंमें भी मार्जन और प्रतिभाकी छाप होती है।

जातिगत संस्कार, देशकी सभ्यताके सबसे महत्वपूर्ण ऐतिहासिक चिन्ह हैं। बङ्गालसे लेकर संयुक्त प्रान्तके दूसरे सिरे तक रेलवे स्टेशनों पर हिन्दी लिपिकी दुर्दशा देखकर ऐसा कौन हिन्दी भाषी होगा जिसे आन्तरिक दुःख न हो ? 'साइनबोर्डों' पर बड़ी खूबीसे राष्ट्र भाषाका अंकन होता है। इतनी वोधगम्य और निर्दोष लिपिमें अशुद्धियोंका आना जातिका अमार्जन है। नाई-धोबी, चमार-कुम्हार, प्रान्तीय हिसाबसे—भाषाभाषीके समानुपातसे—हिन्दीकी हालत बहुत ही शोचनीय है।

मानव-सभ्यताके इतिहास पर गम्भीर विवेचनाके

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

बाद यह निष्कर्ष निकलता है कि जो जाति अपने जीवनके रहस्योंमें जितनी दूर तक पता लगा सकी है—उन्हें सजीव कर सकी है—प्रति दिन नये-नये आविष्कार और नये-नये रूप दे सकी है, वह उतने दिनों तक जीवित और आदृत हुई है! संसार उसके सामने हमेशा नतमस्तक है—सदा उससे कुछ पानेकी आशा करता है। जातिके जीवन-मरणका सबसे बड़ा निदान यही है। इसीलिये कर्म पर जोर दिया जाता है। "योगा: कर्मषुकौशलम्"

जीवनमें सांसारिक अनुभवको रूप देकर, कल्पनाके सहारे नव-सृजन करके, इन्द्रियोंके रस-भोग, सन्धि और त्यागका चित्रण ही प्रत्येक जातिका महत्वपूर्ण कार्य है। इसीलिये जब जो जाति इस ओर जितना अधिक प्रगति-शील होती है, वह उतना ही अधिक पूजित होती है।

वर्तमान हिन्दी-साहित्यमें इस तरहकी चेष्टा बहुत कम पायी जाती है। अर्थ-लोलुप प्रकाशकोंके चक्करमें मनीषी लेखक मारे जाते हैं; और अयोग्य लेखकोंके हाथों प्रकाशक।

हिन्दीमें संसारके साथ योगदान करनेकी प्रबल चेष्टा है; परन्तु प्रान्तीय भाषाओंके भीतरसे। रूस, जापान, अंग्रेज, फ्रेञ्च और जर्मन आदिके साथ साहित्यके भीतरसे हृदहका योग हो रहा है। परन्तु खेदकी बात है कि हम अपने गौरव, अपनी सभ्यता अपनी उच्चताको भूलते जाते हैं। हम अभी अपने मनपर इतना शासन नहीं कर सकते कि रंगमंच पर उतर कर राजाका पार्ट अदा करते समय अपनी दरिद्रता और अशासक होनेका भाव गोपन कर सकें। साहित्यकी परिधिके भीतर प्रसार और संकोच होना चाहिये, जितना विशाल-भवन होना चाहिये, बिना अन्दाज हम उससे भी आगे बढ़नेकी कोशिश करते हैं। अनुवाद और भद्दे अनुवादसे हम अपने साहित्य-भण्डारको भरनेकी चेष्टामें व्यस्त हैं। ऐसी अवस्था जातिके लिये बड़ी भयानक है। जो जाति अपनी रक्षा दूसरे पर निर्भर करती है, जिसके आनन्दका विषय दूसरेकी सृष्टि हो सकती है, उसकीभाषा कभी जानदार नहीं हो सकती, वह जाति कभी बलिष्ट और अमर नहीं हो सकती।

हिंदी हिंदकी है जान।

(रचियता—गङ्गाविष्णु पाण्डेय, विद्यभूषण "विष्णु")

हिन्दू हिन्दीकी जय गावें, हिन्दीसे ही स्नेह लगावें, करें उसीका ध्यान, हिन्दी हिन्दकी है जान ॥ १ ॥
हिन्दी घर-घर बोली जाती, हिन्दी ही 'भाषा' कहलाती, सब करते हैं मान, हिन्दी हिन्दकी है जान ॥ २ ॥
हिन्दी नहीं लोग जो जानें, देश-दशाको वे क्या जानें, "विष्णु" सत्य लो मान, हिन्दी हिन्दकी है जान ॥३॥
पूर्णतया इसको अपनाओ, उच्च शिखर पर इसे चढ़ाओ, करो देश-उत्थान, हिन्दी हिन्दकी है जान ॥ ४ ॥

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अंतिम मनुहार

(रचयिता—जगन्नाथ प्रसाद "मिलिन्द")

(१)

इस उरकी निशा सजाने
शारद-शशि-से तुम आए!
शीकर सुकुमार करों में
सन्ताप छिपाकर लाए!

(२)

छूते ही इन पलकों को
कैसो जादू था डाला!
चेतना झुकी पड़ती थी,
था रोम-रोम मतवाला!

(३)

छवि-चिनगारी नयनोंने
क्यों उरमें हाय छिपाई!
यौवनके नन्दन-वन में
स्वेच्छा से आग लगाई!

(४)

मृदु लपटों की लहरों ने
भोला अनुराग लुभाया!
सर्वस्व लुटा जाता था
क्यों फिर भी मैं मुसकाया!

(५)

तुम दूर खड़े हंसते थे
अपनी जय पर उपवन में,
मैं मुग्ध पराजय पर था
जब जीवन के निर्जन में।

(६)

स्मृति के पलने में पलकर
सर्वस्व बनी थी ज्वाला!
भरपूर हुआ किस मदसे
मेरी पीड़ा का प्याला!

(७)

हलके-हलके यह ज्वाला
सुलगा करती अन्तर में!
फिर क्या था नश्वर जगमें!
हो जाता अजर अमर मैं!

(८)

पर खेल-खेल में तुमने
करुणा की फूंक लगाई!
इस दीन हृदय की ज्वाला
पलभर में हाय बुझाई!

(९)

अन्तिम मनुहार हृदय की
इतनी-सी विनय हमारी
क्या इन निर्मम घड़ियोंमें
मानेगी हँसी तुम्हारी?

(१०)

कौतूहल वश जब जाओ
क्रीड़ा की साध मिटाने—
तुम और किसी पागल के
अन्तर की आग बुझाने।

(११)

अधजली भस्म यह लेकर
यौवन के अरमानों की,
जीवित समाधि रच देना
तुम इन पीड़ित प्राणोंकी,

(१२)

सूखे सुमनों की करुणा
सिसके जिसके कण-कणमें,
उस नीरव उजड़े बन में
उस एकाकी निर्जन में!

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भीतर और बाहर

चूड़ी वाला

मियाँ हाथमें ले हाथोंको, चूड़ी क्या पहनाते हैं। आँखोंसे कुछ छिपा राज 'बबुआइन' को समझाते हैं ॥

तरकारी वाली

बाबू साहब चले जात मग, नज़र पड़ी पीछेकी ओर। लधि-बुधि, हया, अपनपा सारी ली सुन्दर कुँजड़िनने छोर ॥

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मेरी जीवन-नौका

(रचयिता—श्री बाँकेबिहारी लाल "कृष्ण" बी० ए०)

(१)

झूम रहे थे सौरभ-मद में,
फूलों के नव भव्य भवन !
चन्द्र देवकी मंजु हंसी से,
विहँस रहा था विश्व-गगन !!

(२)

निरख निरख कर मोहित मनसे,
शिशु शशिके शुचि हँसनेको !
खिला रहीं थीं माता यमुना,
झुला-झुला हृत-पलने को !!

(३)

रजनी के उस शुभ्र प्रहर में,
यमुना के वक्षस्थल पर !
खेते थे मम जीवन-नौका,
जननी के मृदु मंजुल कर !!

(४)

प्रमुदित हो मैं खेल रहा था,
बाल्यावस्था के मदमें !
भूल गया था सारे जग को,
सुखद सुधामय अंचल में !!

(५)

लख लेती जब जननी अपना,
हँसता सा छवि-केलि-भवन !
रुक जाते पतवार करों में,
छा जाता सुख स्नेह सघन !!

(६)

खेते योंही देख उसे अति,—
तुष्ट तरंगित तन्मय हो !
सोचा मैंने उत्सुकता में,
'मैं भी देखूं खे कर तो' !!

(७)

सरल हृदयसे बोल उठा द्रुत,
शैशव की चंचलता में,
"खेऊंगा माँ ! अपने हाथों,
अपनी जीवन-नौका मैं" !!

(८)

विहँस पड़ीं वह सुनकर अद्भुत—
भोलेपन के सरल वचन !
आशा थी कब छोटे शिशु से,
सुनने को यह गूढ़ कथन ?

(९)

बोली प्रेमसने शब्दों में,
"सुषमा के सत सौम्य सदन !
खे न सकेगा गुरुतर तरि को
कलित तुम्हारा कोमल तन !!

(१०)

"आएगा वैसा भी समय जब,
मधुरमयी इस नौका को !
विश्व-सरित में खेना होगा,
तुम को ही विच्छेदित हो!!

(११)

"भंवर भरे अति दुस्तर पथ में.
क्रोधित विपदों की वर्षा !
विह्वल कर देगी तुम को पर,
खेलेना सुख से हर्षा !!

(१२)

"जीवित हूं मैं प्यारे ! जब तक,
वारूंगी सब तन मन धन !
सुत को पाते क्लेश निरख क्या,
मान सकेगा माँ का मन ?"

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

(१३)

कहते कहते रुक न सके घन,
नैनों में जो थे उमड़े!
मुक्तामय उद्गारों सम वे,
व्याकुल हो कर बरस पड़े!!

(१४)

शीतलता थी कैसी उन में,
मोहकता अति प्रेम-भरी!
अन्तस्तल की क्यारी मेरी,
फूल उठी नवनीत हरी!!

(१५)

मग्न पड़ा था स्वाद लिए मैं,
हर्ष भरे इस मादक का!
भङ्ग हुई जब तन्द्रा सहसा,
पा न सका प्रिय पालक हा!

(१६)

व्यग्र-व्यथा में देखा तत्क्षण,
छाई थी घन-घोर घटा!
दिखलाती थी बिजली दुख की,
मदमाती भयभीत छटा!!

(१७)

भीषण आँधी का कैसा हा!
द्वन्द मचा था सरिता से!
तृण सी डाँवाडोल हुई थी,
प्यारी मेरी नौका ये!!

(१८)

कष्टों से यों चहुं-दिशि घिर कर,
कांप उठा हा! मर्दित मन!
"माता" "माता" कह चिल्लाया,
पागल सा उत्तेजित बन!!

(१९)

आकुल इतना देख मुझे उस—
स्नेह-सरोवर मृत जनि ने!
सलिल सरिस, शुभ यमुना-तलसे,
कहा सुपरिचित मधु ध्वनिमें!!

(२०)

"भीरु न बन इस शोक-समय में,
वीरव्रती सम साहस धर!
अभय अजय सा नाम अमर पा,
जन्म जगत में सार्थक कर" !!

(२१)

दुखी हृदय में सहसा मेरे,
साहसमय इन शब्दों से।
जाग़ उठी नव शक्ति निराली,
भावों सी रणवीरों के॥

(२२)

थाम्ह लिया फिर कर्णा करों में,
छोटा सा निज नाविक बन।
माता की शुभ-पुण्य-स्मृति में,
पुष्ट हुआ कृश कम्पित तन॥

(२३)

खेता हूं मैं तब से यद्यपि,
शान्त सदा सब आलस खो!
थक जाते पर नन्हें कर ये,
क्लान्त अधिक, अति कातर हो!

(२४)

"केवट तुम सारे जगके" बस—
एक इसी ही आशा पर!
दिखा रहे उत्साह अभी तक,
शिथिल हुए ये दुर्बल कर!

(२५)

भव-नदि की पागल लहरों में,
जर्जर इस जीवन-तरि को!
खेले जाऊं मेरे प्रभु! अब,
शक्ति यही मुझ में भर दो!!

कविजीके विशेष आग्रहसे हमने इसे स्थान दिया है, पाठक क्षमा करें।

—सम्पादक।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

समस्यापूर्त्तिका सुयोग

हिन्दीमें ऐसे अनेक पत्रोंका जन्म हुआ हैं, जिनमें कवियोंकी स्वतन्त्र रचनाएं या समस्या पूर्तियां छपा करती थीं। पटनेका 'रसिक-रहस्य गोरखपुरका 'कवि' और फ़र्रुख़ाबादके रसिक-समाजका 'रसिक' आदि पत्र अपनी लीलाएं सम्बरण कर चुके हैं। इनके अभाव कवियोंको अखरते हैं। कवि बननेके इच्छुक या कवितासे स्नेह रखनेवाले महानु-भाव हृदय मसोस कर रह जाते हैं। परन्तु पुराने ढंगकी कविता करनेवाले—समस्याओं पर मज़मून बाँधनेवाले कवियोंके लिये अपनी प्रतिभाका प्रद-र्शन करनेके लिये कोई साधन ही नहीं रह गया है। रस, अलंकार, पिङ्गल, और ध्वनि आदि काव्यो-चित गुण पुस्तकोंकी सामग्री बन रहे हैं। पुराने ढंगकी कविता अवन्नतिकी ओर चली जा रही है और उसका स्थान 'बधा-बन्ध-विहीन' कवितायें दख़ल कर रही हैं। इसके साथ ही जातिमें नव-जीवनका संचार करनेवाली—पज़मुर्दा दिलोंको फड़-कानेवाली, कविवर मैथिलीशरणजी गुप्त पं० माधव शुक्ल, कविवर 'सनेही' तथा त्रिशूलके ढंगकी स्वदेश-पूर्णभक्ति कवितायें आज अतीत युगकी सामग्री बन गई हैं। छायावाद और रहस्यवादके बहुल प्रचारने हिन्दी कविताकी धारा ही बदल दी है। इससे हमारे कविता-साहित्यको एक नवीन मार्ग भले ही मिला हो, परन्तु पराधीन जातिमें जीवन संचार करनेवाली, हमें स्वन्त्रताकी ओर बढ़ानेवाली कविताओंका तो उत्तरोत्तर अभाव ही होता जा रहा है। हमारे ख्यालसे यह हिन्दीके लिये कोई शुभ लक्षण नहीं है। छन्दःशास्त्रके प्रेमियोंको यह कमी बहुतोंका खटक रही है। वास्तवमें इस दुःखका वही अनुभव कर सकेगा जिसके हृदयपर एक नासूर होगा। 'सरोज' ऐसे कविता प्रेमियोंको हतोत्साहित नहीं करना चाहता। वह इस कमीकी पूर्त्तिकी यथासाध्य चेष्टा करेगा।

कतिपय उत्साही कवि मित्रोंके अनुरोधसे यह निश्चय किया गया है कि भविष्यमें अन्यान्य स्वतन्त्र रचनाओंके साथ 'सरोज'में प्रतिमास समस्या पूर्त्तियां भी छपा करें। अधिक समादर उन्हीं रचनाओंकी मिलेगा जो स्वदेश-भक्ति सम्बन्धी होंगी।

'सरोज' के अधिकारियोंने सर्वोत्तम पूर्त्तिकार को एक वर्ष तक 'सरोज' मुफ्तमें देते रहने का निर्णय किया है।

* * *

अगले अंकके लिए समस्या

"चहै"

विषय—देश सेवा।

नोट—पूर्त्तियाँ पत्र पहुंचनेके बाद एक सप्ताह अन्दर ही आ जानी चहिऐ।

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सरोज-सौरभ

[सम्पादकीय]

राष्ट्रीय स्वयं-सेवक दल——

मातृभूमिकी सेवा तथा विपद-ग्रस्त देशवासियोंकी सहायताके लिये एक सुसङ्गठित राष्ट्रीय स्वयं-सेवक दलकी आवश्यकताका अनुभव बहुत दिनोंसे किया जा रहा है। कर्नाटकके नवयुवक लीडर डाक्टर हार्डीकरने इसके सम्बन्धमें कुछ उद्योग भी आरम्भ किया है। संयुक्त प्रान्तके उदीयमान नेता पण्डित जवाहरलालजी नेहरू भी इस सम्बन्धमें कम प्रयत्नशील नहीं हैं। बङ्गालकी प्रादेशिक समितिने भी एक ऐसे स्वयंसेवक दलकी आवश्यकताका अनुभव किया है। परन्तु हम यह कहनेके लिये वाध्य हैं कि अभी तक इस सम्बन्धमें जैसा उद्योग होना चाहिये वैसा नहीं हो रहा है। डाक्टर हार्डीकरके सिवा और बहुत कम नेताओंने इधर ध्यान दिया है। बङ्गालके नवयुवक नेता श्रीसुभाषचन्द्र बोस और पण्डित जवाहरलाल नेहरू आदि इस सम्बन्धमें उद्योगशील तो हैं, परन्तु राजनीतिक कामोंके कारण इन्हें इतनी फुर्सत कहां है कि ये अपना सारा समय इसी एक काममें लगा सकें। इसलिये आवश्यकता इस बातकी है कि प्रत्येक प्रान्तके कुछ चुने हुए उत्साही नवयुवक मिलकर सबसे पहले एक केन्द्रीय संस्था कायम करें, प्रत्येक प्रान्तमें उसकी शाखायें हों और जो उत्साही सज्जन यह काम अपने हाथमें लें, वे अपना सारा समय इसी काममें लगावें। प्रत्येक शिक्षित युवक अन्ततः पांच वर्ष तक अवश्य ही स्वयं-सेवक दलका सदस्य रहे। देशके नवयुवकोंमें सेवा-भावका अभाव नहीं है। बाढ़, अकाल तथा मेलोंके अवसरों पर हमारे नवयुवकोंकी टोलियां जिस उत्साह और लगनसे काम करती हैं, उसे देखते हुए यह आशा करना अनुचित न होगा, कि अगर देशमें कोई ऐसा दल कायम हो, तो उसे बहुत जल्द यथेष्ट सफलता प्राप्त हो सकती है। हमारे मतानुसार भारतीय राष्ट्रीय स्वयं-सेवक दलका निर्माण 'बायस्काउट' के ढंगका होना चाहिये परन्तु विलायतीपनसे पाक साफ़। और छोटे छोटे बालकोंको भी उसमें स्थान मिलना चाहिये। क्योंकि कोमलमति बालकोंके मनमें स्वदेश भक्तिके भावोंका संचार करनेके लिये इससे बढ़कर आसान तरीका दूसरा नहीं हो सकता।

वायस्काउट आन्दोलन——

परन्तु स्वयं-सेवक दलके संगठनके साथ ही हमें स्वदेशिकता विरुद्ध बाय-स्काउट आन्दोलनकी ओरसे ग़ाफ़िल नहीं हना चाहिये। क्योंकि इस आन्दोलनका मूल्य सिद्धान्त देशकी सेवा नहीं, वरं साम्राज्यकी सेवा है। इसके तीन प्रधान सिद्धान्तोंमें 'राज-भक्ति' भी एक है। इसके सिवा अंगरेजोंकी जातीय पताका 'युनियन जैक' को सलाम करना भी स्काउटके लिये अनिवार्य है। यह बतानेकी आवश्यकता नहीं कि युनियनजैकके सामने सर झुकाना हमारी घोर पराधीनताका प्रतीक है। क्योंकि वह हम विजितोंकी नहीं, वरं हमारे विजेताओंकी जातीय पताका है। युनियनजेकको सिर झुकानेकी तालीम देना बालकोंके कोमल मस्तिष्कमें गुलामीका बीज वपन करना है। इसलिये विदेशियोंके विजय-निशानको सादर अभिवादन करना कितना अपमानजनक है, इसे अगर बच्चे नहीं समझ सकते तो उनके अभिभावकोंको तो अवश्य ही समझना चाहिये। हमारी तो दृढ़ धारणा है, कि कौशलसे भारतीय बालकोंको अंगरेज़-भक्तिकी शिक्षा देनेके लिये वाय-स्काउट आन्दोलनकी सृष्टि हुई है। उन्हें बताया जाता है कि अंगरेज़ भारतके परम हितैषी हैं, इन्होंने भारतका बड़ा उपकार किया है। इसके सिवा हुक्कामोंकी अभ्यथना आदिमें भी स्काउट बालकोंको शामिल किया जाता है और उनसे हाकिमोंको सलाम कराया जाता है। बहुधा देखा गया है कि

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जनता द्वारा राजकमचारियोंकी ऐसी अभ्यर्थनाओंका विरोध होने पर सरकारके खुशामदी, स्काउटों द्वारा ही उस घाटेकी पूर्ति कर लिया करते हैं। स्काउटोंकी पोशाक आदि भी विलायती ढंगकी होती है। फलतः इस वायस्काउट आन्दोलन द्वारा बालकोंकी दास-मनोवृत्तिको सुदृढ़ करनेका जो प्रयास चल रहा है, वह अंगरेजोंके तोपखाने और पुलिसकी रेगूलेशन-लाठियोंसे कम भयंकर नहीं है। इसलिये इस आन्दोलनकी ओरसे देश- वासियोंको उदासीन नहीं रहना चाहिये और इसका एक मात्र उपाय है, सरकारी-सम्बन्ध-शून्य स्वयं-सेवक दलका संगठन।

प्रारंभिक शिक्षा और सरकार—

भारतवर्ष तथा एशियाके कुछ अनुन्नत देशोंको छोड़कर संसारका कोई ऐसा देश नहीं, जहां वाध्यता मूलक अवैतनिक प्रारम्भिक शिक्षाका प्रचार न हो। युरोपके फ्रांस, जर्मनी, इङ्गलैण्ड, अमेरिका और एशियाके जापान आदि देशोंने आधी शताब्दीके अन्दर ही इसके द्वारा अपने देशमें शिक्षितोंकी काफ़ी संख्या बढ़ा ली है। इनमें कितने ही देश तो ऐसे हैं, जहां फी सैकड़ा ९५ से लेकर १०० तक शिक्षित हैं। यह कहना नहीं होगा, कि शिक्षा प्रचारकी बदौलत ही वे जातियां जो कल तक जङ्गली, अर्द्ध सभ्य और असभ्य कही जाती थीं, आज समुन्नत, सुसभ्य और स्वाधीन समझी जाती हैं। परन्तु पराधीन बृटिश भारतने अभी तक इस सभ्यजनानुमोदित प्रणालीका अनुकरण नहीं किया है। यहांकी सभ्य सरकार वाध्यतामूलक अवैतनिक शिक्षाका नाम सुनते ही अर्थाभावका बहाना कर दम साध लेती है अथवा और कोई ऐसी ही बेसिर-पैरकी युक्ति सोच कर सूखा जवाब दे देती है। अभी हालमें बंगालके अवैतनिक शिक्षा-बिलकी जो दुर्गति हुई है, वह किसीसे छिपी नहीं है। इस बिलमें शिक्षाके लिये बङ्गालके गरीब किसानों पर फी रुपया एक आना शिक्षा कर लगानेकी योजना थी, परन्तु मोटी तोंद वाले जमीन्दारों पर केवल एक पैसा फी रुपया कर लगानेकी बात कही गई थी। फलतः प्रजाके प्रतिनिधि ऐसे करका विरोध करनेको वाध्य थे और इस बिलका जो परिणाम होना चाहिये था, वही हुआ। सरकारके पास अर्थकी कमी नहीं है, वह अपनी बहुत सी फ़जूल ख़र्चियोंमेंसे किसी एकको भी रोककर प्रारम्भिक शिक्षाके विस्तारका उद्योग कर सकती है। पुलिस, पलटन और लाट साहबोंके शैल-विहारोंमें इस गरीब देशका प्रचुर अर्थ स्वाहा कर दिया जाता है। यदि इसमें कमी करके कुछ रुपये निकाले जायें तो वाध्यता मूलक प्रारम्भिक शिक्षाका काम बड़ी आसानीसे चल सकता है। अहलकारोंके शैल-विहारको एक दम रोक देनेसे अगर बदहज़मीकी विशेष सम्भावना हो, तो उनकी विलासिता और शानशौकतकी रक्षाके लिये जो रुपये ख़र्च किये जाते हैं, उसमें तो अवश्यही कमी की जा सकती है। परन्तु क्या इसके लिये कोई उपाय है?

हैदराबादमें प्रारंभिक शिक्षा—

इस देशमें वाध्यतामूलक अवैतनिक शिक्षाका सर्व प्रथम श्रेय बारोदा राज्यको प्राप्त है। दो ही तीन वर्षोंमें वहां इस विषयमें काफ़ी सफलता भी मिली है। महीशूर, कोचीन और त्रिवांकुर रियासतें भी इस सम्बन्धमें प्रयत्नशील हैं। काम सुचारु रूपसे हो रहा है और सफलताकी पूरी आशा है। परन्तु हैदराबाद दक्षिणके अन्जुमनेतरक्कीने इसके लिये जो योजना तैयार की है, वह बड़ी ही महत्त्वपूर्ण और निहायत अच्छी है। इस अन्जुमनके सभापति मि० अलीयार खाँ हैदराबादके उस्मानियां विश्वविद्यालयके अर्थशास्त्रके अध्यापक हैं। प्रारम्भिक शिक्षाकी नई स्कीम आपने ही तैयार की है। यह स्कीम उस्मानियां विश्वविद्यालयके आदर्श पर तैयार की गई है। शिक्षाका माध्यम हैदराबादमें प्रचलित देशी भाषायें रखी गई हैं। धीरे-धीरे समस्त रियासतमें इस स्कीमके अनुसार कार्य होगा और प्रत्येक गृहस्थ अपने लड़के और लड़कियोंको प्रारम्भिक शिक्षा दिलानेके लिये वाध्य होगा। परन्तु इसके लिये उसे किसी प्रकारका शुल्क या कर नहीं देना पड़ेगा। इस योजनाके अनुसार दस वर्ष तक कार्य होगा। प्रथम पांच वर्षोंमें हैदराबादके म्युनिसिपलटी वाले छः शहरोंमें (जिनकी जनसंख्या बीससे पचास हज़ार तक है) इस स्कीमका प्रवर्त्तन होगा। अवशिष्ट पाँच वर्षोंमें तीसरी श्रेणीके सोलह शहरों, एकावन क़स्बों और बहुतसे बड़े-बड़े गाँवोंमें इस स्कीमके अनुसार कार्य-किया जायेगा। अन्जुमनको विश्वास है कि इस कार्य पद्धतिके अनुसार कार्य्य करनेसे दस वर्षोंमें ही

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उसे काफ़ी सफलता प्राप्त हो जायेगी। इसके लिये प्रजा पर कोई नया कर नहीं लगाया जायेगा। सारा खर्च वहांकी सरकार और धनवान म्युनिसिपलटियां देंगी। इस स्कीममें सबसे बड़ी विशेषता यह है, कि वाध्यतामूलक आरम्भिक शिक्षा देनेवाले केन्द्रोंमें किसी प्रकारकी साम्प्रदायिक शिक्षा नहीं दी जायेगी। अञ्जुमन साम्प्रदायिक विद्यालयोंका घोर विरोधी हैं। हैदराबाद राज्यमें उर्दू के अतिरिक्त, मराठी, गुजराती और कनाड़ी भाषा भी प्रचलित है। इसलिये समस्त प्राथमिक सिद्यालयोंमें सभी भाषायें पढ़ाई जायेंगी। अर्थात् विद्यार्थी अपनी मातृभाषा द्वारा ही शिक्षा प्राप्त कर सकेगा। अंजुमने तरक़्क़ीको "ड्रिल" नहीं पसन्द है। इसलिये इन शिक्षा-केन्द्रोंमें "ड्रिल" की गजह देशी व्यायामकलाकी शिक्षा दी जायेगी। देशमें प्रारम्भिक शिक्षाका प्रचलन चाहने वाले नेताओंको इस स्कीमको ज़रा गौरसे मुलाहिजा करना चाहिये और हमारी सरकारको भी थोड़ा सा लज्जाका अनुभव करना चाहिये, कि छोटी-छोटी रियासतें तो प्रजाकी शिक्षाके लिये इतना कुछ कर रही हैं और सरकार "रुपये नहीं हैं" कहकर सिर नीचा कर लेती है।

देशकी दरिद्रताका कारण—

भारत वर्षकी दरिद्रता उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है। देशमें लाखों मनुष्य ऐसे हैं, जिन्हें आजीवन भर पेट खाना नसीब नहीं होता, लाखों ऐसे भोजन पर जीवन यापन करते हैं, जिसे दूसरे देशोंमें पशु भी नहीं खाते। एक फसल भी मारी जाती है, तो लाखों घर तबाह हो जाते हैं। भूखे माता पिता पेटके लिये सन्तान तक वेचनेको वाध्य होते हैं। परन्तु आख़िरश: इस बढ़ती हुई दुरवस्थाका कारण क्या है? अभी भी देशमें प्रचुर अन्न पैदा होता है। खेती योग्य भूमिकी भी कोई कमी नहीं है; गोचर और पड़ती भूमि तक आबाद हो गई है। बहुतसे बड़े-बड़े जङ्गल काटकर खेत बना लिये गये हैं, जिससे जमीन्दारों और सरकारको आमदनी बढ़ गई है। परन्तु किसानोंकी दरिद्रता बढ़ती ही जाती है, उनके घरोंमें अन्नके लाले पड़े ही रहते हैं। यदि गौरसे देखा जाय, तो इस दरिद्रताकी वृद्धिका कारण प्रति वर्ष प्रचुर परिमाणमें कच्चे मालकी रफ्तनी और विदेशोंसे प्रति वर्ष करोड़ों रुपयेकी विलास-सामग्रीकी आमदनीके सिवा और कुछ नहीं है। गत सन् १९२० के एक हिसाबसे मालूम हुआ है, कि इस देशने ७५ करोड़ रूपयेका चावल, दाल, गेहूं और मूंगफली आदि खानेकी चीज़ें विदेशोंको रवाना किया है और बदलेमें पाया है, काँचके बर्त्तन, मोटरगाड़ी, घड़ी, चश्मा और नाना प्रकारके सुन्दर खिलौने तथा वस्त्रादि। इससे मालूम होता है कि पृथिवी माता हमें जो अन्न देती हैं, उसे हम विलास सामग्रीके बदले विदेशियोंको दे देते हैं और स्वयं भूखों मरते हैं। इसके सिवा, दूसरा कारण देशमें कल-कारखानोंकी वृद्धि है। इसने हाथकी कारीगरी, देशीय शिल्पकला और देशवासियोंके शारीरिक बलका नाश कर दिया है। आटा पीसने, तेल निकालने और धान कूटनेकी कलोंका प्रचार देहातोंमें भी बढ़ रहा है। इनकलों की बदौलत लोगोंकी बेकारी बढ़ती जा रही है। क्योंकि दस आदमीका काम इन कलोंकी बदौलत एकही आदमी कर डालता है। परन्तु अभी तक इसके प्रतिकारकी कोई तदवीर नहीं हो रही है। आश्चर्य तो यह है कि गृहशिल्प और हाथ-को कारीगरीकी ध्वंसलीला देखते हुए भी महात्मा गांधीजीके चर्खा आन्दोलन और विलायती वर्जन आन्दोलनको काफ़ी, यथेष्ट सफलता नहीं प्राप्त हो रही है। वास्तवमें इसे देशके दुर्भाग्यके सिवा और कुछ नहीं कहा जा सकता।

सहवास समितिकी सम्मति—

दाम्पत्य सहवासका समय निर्द्धारण करनेके सम्बन्धमें जनताका मत जाननेके लिये सरकारने एक समिति बनाई थी। इस समितिने सारे देशमें भ्रमण कर लोगोंकी सम्मतियां संग्रह की है और अपनी सम्मतिके साथ उसे सरकारके पास भेज दिया है। अब स्वयं सरकार उसपर विचार करेगी। पूरी रिपोर्ट तो अभी प्रकाशित नहीं हुई है, परन्तु सारांश जो अख़बारोंमें छपा है, उसका सार मर्म यह है कि चौदह वर्षसे पहले किसी लड़कीकी शादी न होने पाये। सहवासकी आयु विवाहितोंके लिये पन्द्रह वर्ष और अविवाहितोंके लिये अठारह वर्ष निर्द्धारित की गई है। समितिकी इस सिफ़ारिशको अधिकांश अख़बारोंने पसन्द किया है। किसी किसीने तो इसे सम्पूर्ण रूपेण सन्तोषजनक माना है। परन्तु यदि लड़कियोंके विवाह की आयु ही चौदह वर्षसे बढ़ाकर पन्द्रह या सोलह वर्ष कर

LIBRARY
Jangamwadi Math, Varanasi
ACC No

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दी जाती तो सहवासके लिये समय निर्द्धारित करनेकी कोई आवश्यकता ही न थी। साथही आश्चर्यकी बात तो यह है कि समितिने केवल लड़कियोंके सहवासके सम्बन्धमें ही अपनी राय दी है। परन्तु पन्द्रह वर्षकी उमरमें 'बाप' बन जाने वाले लड़कोंकी ओर बिल्कुल ही ध्यान नहीं दिया है। हिन्दू-समाजमें ऐसे बेजोड़ विवाहोंकी कमी नहीं है, जिसमें दुल्हा छोटा और दुलहिन बड़ी होती है और इस बेजोड़-मिलनका परिणाम भी अविदित नहीं। इसके सिवा बनारसके विख्यात वैद्य पण्डित त्र्यम्बक शास्त्री जैसे बूढ़ोंने तो और भी आफत मचा रखी है। मरते दम तक ब्याह पर ब्याह किये ही चले जाते हैं। इनके इस ख़फ़्तका क्या इलाज है? मज़ा तो यह है कि सुधारकोंकी ये बूढ़े सुनते नहीं और पोंगा हिन्दू-समाज इनसें कुछ बोलता नहीं। इसलिये क्यों न कोई ऐसा कानून बना दिया जाये कि कोई बूढ़ा किसी कुमारीका पाणिग्रहण न कर सके। बुढ़ौतीमें ब्याह किये बिना आक़बत बिगड़ जाने का अन्देशा हो तो अपना उमरकी कोई बुढ़िया तलाश कर लें! बेचारी कुमारियोंका सत्यानाश करनेसे तो बाज़ आयें। परन्तु ये मनचले बुड्ढ़े सीधेसे माननेवाले नहीं हैं। इसलिये सुधारकोंको चाहिये कि वृद्ध-विवाहको 'ज़िन्दा दर ग़ोर' करने के लिये कानून बनवानेकी अवश्य चेष्टा करें, नहीं तो हिन्दू-समाजकी रक्षा नहीं होगी। अस्तु, इस बात पर ज़ोर देनेकी आवश्यकता है कि सरकार सहवास समितिकी रिपोर्टके अनुसार कार्य करे। कहीं ऐसा न हो कि रिपोर्ट खटाईमें डाल दी जाये।

कुछ अपने सम्बन्धमें—

'सरोज' का दूसरे वर्षका प्रवेशांक पाठकोंके सामने है। इसमें हमें कहां तक सफलता मिली है, यह तो वही जानें। हमारा निवेदन केवल इतना ही है कि हम इसके लिये पहलेसे तैयार न थे। पहले वर्षका अन्तिम अंक छपकर तैयार हो जाने पर हमने इस प्रवेशांककी तैयारी आरम्भ की। समय थोड़ा और साधन कम था, इसलिये इसमें त्रुटियोंकी भरमार होगी, इसमें सन्देह नहीं। लेखकों [illegible] यथेष्ट अवसर नहीं दिया और न सनातन नियमानुसार किसीसे वारवार प्रार्थना करनेका ही अवसर मिला। फलतः एक बार की प्रार्थना पर जो मिल सका उसीको लेकर सन्तोष कर लेना पड़ा। कितने ही लेख, कहानियां और कवितायें तो हमें प्रवेशांकके फर्मे छप जाने पर मिलीं, अतः दुःख है कि हम उन्हें इस प्रवेशांकमें नहीं दे सके। इसके लिये अपने सहायक बन्धुओंसे क्षमा चाहते हैं। जो लेखादि हमारे पास पड़े हैं, जिनकी स्वीकृति दी जा चुकी है, वे 'सरोज'के अगले अंकों में सादर प्रकाशित किये जायेंगे।

दो और विशेषांक—

नाटक साहित्यके सम्बन्धमें कई अधिकारी लेखकोंके लेख, चित्र और उनका संक्षिप्त परिचय आदि हमारे पास आये हैं, जिनमें पण्डित नारायणप्रसाद बेताब, श्रीयुत हरिकृष्णजी जौहर साहित्यालंकार और जनाब आगा हश्र साहब काश्मीरीका नाम उल्लेखनीय है। हम अपने इन श्रद्धेय बन्धुओंके अन्तःकरणसे आभारी हैं। स्थानाभावके कारण हम उनके लेखोंको इस प्रवेशांकमें स्थान नहीं दे सके हैं, इसलिये हमारा विचार 'सरोज'के दूसरे वर्षकी दूसरी संख्याको एक छोटेसे 'नाटकांक' के रूपमें निकालनेका है। इस सम्बन्धमें कुछ और सामान संग्रह करनेके लिये अधिकारियों से निवेदन भी किया गया है। इसके सिवा आगामी विजय दशमीके शुभ अवसर पर हमने 'सरोज'का एक सुन्दर 'कवि-[illegible]ंक' निकालनेका विचार किया है। इसमें वर्तमान समयके [illegible] नये पुराने कवियोंके चित्र, उनका संक्षिप्त परिचय और [illegible]ोत्कृष्ट रचनाओंका संक्षिप्त संग्रह होगा। इसके [illegible]व्य-कला सम्बन्धी सुन्दर लेख और अच्छी अच्छी कवितायें भी होंगी। हमें यह सूचित करते अत्यन्त हर्ष होता है कि 'सरोज'के कवि-अंकके सम्पादनका भार, हमारे राष्ट्र-कवि श्रीमान कविवर सनेहीजीने लेनेकी कृपा की है। इस-लिये हमें आशा है कि यह भावी कवि-अंक हिन्दी-साहित्यके इतिहासकी सामग्री होगा। इस सम्बन्धकी आवश्यक [illegible] शीघ्र ही अखबारोंमें प्रकाशित की जायेंगी।

Sri Jagadguru Vishwaradhya
Jnana Simhasan Jnanamandir
LIBRARY
Jangamwadi Math, Varanasi

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Jangamwadi Math Collection, Varanasi